भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

3

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल के प्रवर्तक के रूप में समादृत हैं। इनका जन्म इतिहास विख्यात सेठ अमीचन्द के घराने में हुआ था। भारत में अंगरेजों का साथ देने, पर लूट का माल न पाने के कारण अमीचन्द पागल होकर मरे थे। अमीचन्द के बेटे फतेहचन्द कलकत्ता से आकर काशी में बसे। इनके बेटे हर्षचन्द और हर्षचन्द के बेटे गोपालचन्द हुए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इन्हीं गोपालचन्द के बेटे थे।

इस अंगरेज भक्त परिवार में भारतेन्दु 'विष बेलि अमी फल लागि रही' की तरह थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन साहित्य की श्रीवृद्धि में झोंक दिया। आधुनिक साहित्य की समृद्धि में अद्वितीय योगदान के कारण ही इन्हें 'आधुनिक हिन्दी का जनक' कहा जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक तरफ तो अपने नाटकों, निबन्धों, लेखों, कविताओं, यात्रावृत्तान्तों, जीवनियों तथा इतिहास और पुरातत्त्व पर लिखी पुस्तक-पुस्तिकाओं के लिए प्रसिद्ध हैं तो दूसरी तरफ प्रारम्भिक हिन्दी पत्रकारिता के विकास में महत्त्वपूर्ण योग देने वाले पत्रकार-सम्पादक के रूप में स्मरणीय हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की सर्जनात्मक प्रतिभा से ही हिन्दी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को नयी प्रेरणा तथा उचित दिशा-बोध प्राप्त हुआ।

भारतेन्दु साहित्य का अधिकांश भाग अब तक संकलित संगृहीत हो चुका है। यह जरूर है कि ये संकलन अब बाजार में मौजूद नहीं है। ब्रजरत्न दास द्वारा सम्पादित भारतेन्दु ग्रन्थावली अब आसानी से नहीं मिलती। पूरी ग्रन्थावली की योजना बनाकर शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' केवल पहला खंड ही सम्पादित कर सके थे। हेमन्त शर्मा द्वारा सम्पादित 'भारतेन्दु समग्र' बाजार में उपलब्ध है। भारतेन्दु की अनेक रचनाएं, टिप्पणियां, भूमिकाएं, पत्रों आदि का सम्पादन न होने के कारण अब यह सामग्री दुर्लभ हो गयी है। भारतेन्दु की पत्रिकाएं पुस्तकालयों में उपलब्ध नहीं हैं। अब स्थिति यह हो गयी है कि भारतेन्दु की अनेक रचनाएं प्राप्त होने वाली नहीं हैं। भारतेन्दु की सभी रचनाएं इस ग्रन्थावली में हैं, यह मेरा दावा नहीं है। हां, यह दावा जरूर है कि अब दो-एक रचनाएं और कुछ सम्पादकीय टिप्पणियां ही इस ग्रन्थावली से बाहर हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की यह ग्रन्थावली छह खंडों में तैयार की गयी है। इसमें तमाम ऐसी रचनाएं और टिप्पणियां हैं, जो अब तक कहीं भी संकलित नहीं थीं। ग्रन्थावली में भारतेन्दु साहित्य को इस क्रम से रखा गया है कि अनेक आरोपों-प्रत्यारोपों का स्वतः जवाब मिल जाएगा।

143762

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली-3

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली-3

[प्रेमअर्पण की कविताएं]

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

प्रकाशन संस्थान
नयी दिल्ली-110002

143762

प्रकाशक
प्रकाशन संस्थान
4715/21, दयानन्द मार्ग, दरियागंज
नयी दिल्ली-110 002

R
022
सिंह-भ

मूल्य : 4800.00 रुपये
प्रथम संस्करण : सन् 2008
ISBN 81-7714-312-3
आवरण : जगमोहन सिंह रावत

शब्द-संयोजन : कम्प्यूटेक सिस्टम, दिल्ली-110032
मुद्रक : बी.के. ऑफसेट, दिल्ली-110032

इस खंड में

ग्रन्थावली का यह तीसरा खंड है। इस खंड में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की कुछ कविताएं संकलित हैं। हम जानते हैं कि भारतेन्दु ने बड़ी संख्या में कविताएं लिखी थीं। उनकी कविताओं का विश्लेषण कथ्य के आधार पर करें तो उसमें सबसे अधिक ईश्वर और धर्म सम्बन्धी कविताएं होंगी। भारतेन्दु के काव्य-साहित्य का लगभग दो तिहाई स्थान ऐसी ही कविताएं घेरती हैं। यहां ऐसी ही कुछ कविताएं संकलित की गई हैं। भारतेन्दु की ऐसी कविताओं की एक और विशेषता है—प्रेम के महत्त्व की स्वीकृति। इसीलिए अपने अधिकांश संकलनों के नाम में उन्होंने इस शब्द को स्थान दिया है। ईश्वर या आराध्य के प्रति प्रेम के निवेदन में भारतेन्दु की कविताओं का कोई जवाब नहीं। हां, एक बात और—राधा-कृष्ण के प्रेम वर्णन में या उनके प्रति अपने प्रेम समर्पण में कहीं-कहीं भारतेन्दु की कविताओं में लौकिकता झांकने लगती है। कुछ विद्वानों ने इसे भारतेन्दु के काव्य की विशेषता के रूप में व्याख्यायित किया है तो कुछ ने कमी के रूप में। जो भी हो, वस्तुस्थिति यही है।

आप देखेंगे, इस खंड में जितनी कविताएं दी गई हैं, लगभग सबके शीर्षक में प्रेम शब्द विद्यमान है। यदि किसी शीर्षक में प्रेम शब्द नहीं है तो कविता के केन्द्रीय भाव में प्रेम की मजबूत सत्ता अवश्य है। इसीलिए इस खंड का नामकरण 'प्रेमअर्पण की कविताएं' किया गया है। इन कविताओं के रचनाकाल पर भी ध्यान देना आवश्यक है। 'प्रेम मालिका' 1871 ई. की रचना है और कृष्ण चरित्र 1883 ई. की। इस तरह से ये कविताएं भारतेन्दु के पूरे रचनाकाल में छांटी गई हैं और लगभग सभी रचनाएं काव्यात्मक हैं। कुछ ही रचनाएं ऐसी हैं जिन्हें मुक्तक श्रेणी में रखा जा सके।

भारतेन्दु का रचना संसार सन 1868 से लेकर सन 1884 तक फैला हुआ है। सन 1868 ई. से पूर्व की उनकी रचनाएं भी मिल जाती हैं पर इस काल के बाद की रचनाएं प्रौढ़ता को प्राप्त हुई हैं, इसमें दो राय नहीं। इति।।

—ओमप्रकाश सिंह

अनुक्रम

प्रेमअर्पण की कविताएं

प्रेम मालिका	3
प्रेमाश्रु वर्षण	35
प्रेम सरोवर	57
प्रेम तरंग	67
सतसई सिंगार	107
प्रेम प्रलाप	133
होली	159
राग संग्रह	185
वर्षा विनोद	227
प्रेम माधुरी	267
मधु मुकुल	295
फूलों का गुच्छा	335
प्रेम फुलवारी	351
कृष्ण चरित्र	377

प्रेमअर्पण की कविताएं

प्रेम मालिका

सन 1871 ई.

"संचिन्तयेद्भगवतश्चरणारविन्दं,
वज्रांकुशध्वजसरोरुहलांछनाढ्यम्।
उत्तुंगरक्तविलासन्नखचक्रवाल,
ज्योत्स्नाभिराहरमहद्धृ दयान्धकारम्॥1॥

यच्छौचनिसृतसरित्प्रवरोदकेन,
तीर्थेन मूर्ध्न्यधिकृतेन शिवः शिवोभूत्।
ध्यातुर्मनश्शमलशैलनिसृष्टवज्रं,
ध्यायेच्चिरं भगवतश्चरणारविन्दम्॥2॥"

To

THE LOVE

THESE

Few Pages are Affectionately

DEDICATED

WITH THE GOOD WISHES

OF

HARISH CHANDRA

BENARES.

विजयते जीवितेशः

इस छोटे से ग्रन्थ में मेरे बनाए कीर्तनों में से कतिपय कीर्तन एकत्र किए गए हैं। इस में कीर्तन तीन भांति के हैं—एक तो लीला सम्बन्धी, दूसरे दैन्य भाव के और तीसरे परम प्रेममय अनुभव के हैं। इस को एकत्र करना और छपवाना अप्रयोजन था, क्यौंकि एक तो संसार में प्रायः अनधिकारी लोग हैं, दूसरे इस के द्वारा लोगों में अपनी प्रसिद्धि की इच्छा नहीं। तथापि परम प्रीति से यह प्रेम पुष्प ग्रथित मालिका उसी के श्रीकंठ में समर्पित है जो इस में गाया गया है।

हरिश्चन्द्र

प्रेम मालिका

राग यथा रुचि

प्यारी छबि की रासि बनी।
जाहि बिलोकि निमेष न लागत श्री वृषभानु जनी॥
नन्द नन्दन सों बाहु मिथुन करि ठाढ़ी जमुना तीर।
करक होत सौतिन के छबि लखि सिंह कमर पर चीर॥
कीरति की कन्या जग धन्या अन्या तुला न वाकी।
वृश्चिक सी कसकत मोहनहिय भौंह छबीली जाकी॥
धन धन रूप देखि जेहि प्रति छिन मकरध्वज तिय लाजै।
जुग कुच कुम्भ बढ़ावत सोभा मीन नयन लखि भाजै॥
बैस सन्धि संक्रौन समय तन जाके बसत सदाई।
'हरीचन्द' मोहन बड़भागी जिन अंकम करि पाई॥1॥

आजु तन नीलाम्बर अति सोहै।
तैसे ही केश खुले मुख ऊपर देखत ही मन मोहै॥
मनु तम गन लिया जीति चन्द्रमा सौतिन मध्य बंध्यो है।
कै कवि निज जिजमान जूथ में सुन्दर आइ बस्यौ है॥
श्री जमुना जल कमल खिल्यौ कोउ लखि मन अलि ललच्यौ है।
जीति तमोगुन को ताके सिर मनु सतगुन निवस्यौ है॥
सघन तमाल कुंज मै मनु कोउ कुन्द फूल प्रगट्यौ है।
'हरीचन्द' मोहन मोहनि छबि बरनै सा कवि को है॥2॥

राग सारंग

अहो पिय पलकन पै धरि पांव।
ठीक दुपहरी तपत भूमि मैं नांगे पद मत आव॥
करुना करि मेरो कह्यौ मानिकै धूपहि मैं मत धाव।
मुरझानो लागत मुख पंकज चलत चहूं दिसि दाव॥

जा पद को निज कुच अरु कर पै धरत करत सकुचाव।
जाको कमला राखत है नित कर मैं करि करि चाव॥
जामैं कली चुभत कुसुमन की कोमल अतिहि सुभाव।
जो मन हृदय कमल पैं बिहरत निसि दिन प्रेम प्रभाव॥
सोइ कोमल चरनन सों मो हित धावत हौ ब्रजराव।
'हरीचन्द' ऐसी मति कीजै सह्यौ न जात बनाव॥3॥

नैना मानत नाहीं, मेरे नैना मानत नाहीं।
लोक लाज सीकर मैं जकरे तऊ उतै खिंच जाहीं॥
पचि हारे गुरुजन सिख दै कै सुनत नहीं कछु कान।
मानत कह्यौ नाहिं काहू को जानत भए अजान॥
निज चवाव सुनि औरहु हरखत उलटी रीति चलाई।
मदिरा प्रेम पिए पागल है इत उत डोलत धाई॥
पर बस भए मदनमोहन के रंग रंगे सब त्यागी।
'हरीचन्द' तजि मुख कमलन अलि रहैं कितै अनुरागी॥4॥

नैन भरि देखि लेहु यह जोरी।
मनमोहन सुन्दर नट सागर श्री वृषभानु किसोरी॥
कहा कहूं छबि कहि नहिं आवै वे सांवर यह गोरी।
ये नीलाम्बर सारी पहिने उनको पीत पिछौरी॥
एक रूप एक बेस एक बय बरनि सकै कवि कोरी।
'हरीचन्द' दोउ कुंजन ठाढ़े हंसत करत चित चोरी॥5॥

सखी री देखहु बाल बिनोद।
खेलत राम कृष्ण दोउ आंगन किलकत हंसत प्रमोद॥
कबहुं घुटुरुअन दौरत दोउ मिलि धूर धूसरित गात।
देखि देखि यह बाल चरित छबि जननी बलि बलि जात॥
झगरत कबहुं दोउ आनन्द भरि कबहुं चलत हैं धाय।
कबहुं गहत माता की चोटी माखन मांगत आय॥
घर घर तें आवत बृजनारी देखन यह आनन्द।
बाल रूप क्रीड़त हरि आंगन छलि लखि बलि 'हरिचन्द' ॥6॥

राग केदारा चौताल

अरी हरि या मग निकसे आइ अचानक, हौं तो झरोखे ठाढ़ी।
देखत रूप ठगौरी सी लागी, बिरह बेलि उर बाढ़ी॥
गुरुजन के भय संग गई नहिं, रहि गई मनहुं चित्र लिखि काढ़ी।
'हरीचन्द' बलि ऐसी लाज मैं लगौं री आग, हौं बिरहा दुख दाढ़ी ॥7॥

अरी सखी गाज परौ ऐसी लोक लाज पैं, मद नमोहन संग जान न पाई।
हौं तो झरोखे ठाढ़ी देखत ही कछु, आए इतै मैं कन्हाई॥
औचक दीठ परी मेरे तन, हंसि कछु बंसी बजाई।
'हरीचन्द' मोहिं बिबस छोड़ि कै, तन मन धन प्रान लीनो संग लाई ॥8॥

राग बिहागरा

सखी मोरे सैंया नहिं आए बीति गई सारी रात।
दीपक जोति मलिन भई सजनी होय गयो परभात॥
देखत बाट भई यह बिरियां बात कही नहिं जात।
'हरीचन्द' बिना बिकल बिरहिनी ठाढ़ी है पछितात ॥9॥

सखी मोहिं पिया सों मिला दे दैहौं, गले को हार।
मग जोहत सारी रैन गंवाई मिले न नन्द कुमार॥
उन पीतम सों यौं जा कहियो तुम बिनु ब्याकुल नार।
'हरीचन्द' क्यों सुरति बिसारी तुम तो चतुर खिलार ॥10॥

नैन भरि देखौ गोकुल चन्द।
श्याम बरन तन खौर बिराजत अति सुन्दर नन्द नन्द॥
बिथुरी अलकैं मुख पै झलकैं मनु दोउ मन के फन्द।
मुकुट लटक निरखत रबि लाजत छबि लखि होत अनन्द॥
संग सोहत बृषभानु नन्दिनी प्रमुदित आनन्द कन्द।
'हरीचन्द मन लुब्ध मधुप तहं पीवत रस मकरन्द ॥11॥

नैन भरि देखो श्री राधा बाल।
मुख छबि लखि पूरन ससि लाजत शोभा अतिहि रसाल॥
मृग से नैन कोकिल सी बानी अरु गयन्द सी चाल।
नख सिख लौं सब सहजहिं सुन्दर मनहुं रूप की जाल॥
बृन्दाबन की कुंज गलिन मैं संग लीने नन्दलाल।
'हरीचन्द' बलि बलि या छबि पर राधा रसिक गोपाल ॥12॥

सखी हम कहा करैं कित जायं।
बिनु देखे वह मोहनि मूरति नैना नाहिं अघायं॥
कछु न सुहात धाम धन पति सुत मात पिता परिवार।
बसति एक हिय मैं उनकी छबि नैननि वही निहार॥
बैठत उठत सयन सोवत निस चलत फिरत सब ठौर।
नैनन तें वह रूप रसीलो टरत न एक पल और॥
हमरे तन धन सरबस मोहन मन बच क्रम चित मांहिं।
पै उनके मन की गति सजनी जानि परत कछु नाहिं॥
सुमिरन वही ध्यान उनको ही मुख में उनको नाम।
दूजी और नाहिं गति मेरी बिनु मोहन घनश्याम॥
नैना दरसन बिनु नित तलफैं बचन सुनन को कान।
बात करन को रसना तलफैं मिलबे को ए प्रान॥
हम उनकी सब भांति कहावहिं जगत बेद सरनाम।
लोक लाज पति गुरुजन तजिकै एक भज्यौ घनश्याम॥
सब बृज बरजौ परिजन खीझौ हमरे तौ हरि प्रान।
'हरीचन्द' हम मगन प्रेम रस सूझत नाहिंन आन॥13॥

ठुमरी

तू मिलि जा मेरे प्यारे।
तेरे बिना मनमोहन प्यारे व्याकुल प्रान हमारे।
'हरीचन्द' मुखड़ा दिखला जा इन नैनन के तारे॥14॥

राग रामकली

ऐसी नहिं कीजै लाल, देखत सब संग को बाल,
काहे हरि गए आजु बहुतै इतराई।
सूधे क्यौं न दान लेहु, अंचरा मेरो छांड़ि देहु,
जामैं मेरी लाज रहै करौ सो उपाई॥
जानत ब्रज प्रीत सबै, औरहू हंसैंगे अबै,
गोकुल के लोग होत बड़े ही चवाई।
'हरीचन्द' गुप्त प्रीति, बरसत अति रस की रीति,
नेकहूं जो जानै कोउ प्रगटत रस जाई॥15॥

छांड़ौं मेरी बहियां लाल, सीखी यह कौन चाल,
हा हा तुम परसत तन औरन की नारी।

अंगुरी मेरी मुरुक गई, परसत तन पीर भई,
भीर भई देखत सब ठाढ़ीं बृज नारी ॥
बाट परौ ऐसी बात, मोहिं तौ नहीं सुहात,
काहे इतरात करत अपनो हठ भारी।
'हरीचन्द' लेहु दान, नाहीं तौ परैगी जान,
नेक करो लाज छांड़ौ अंचल गिरिधारी ॥16॥

राग सारंग

हमारे घर आओ आजु प्रीतम प्यारे।
फूलन ही की सेज बिछाई फूलन के चौबारे ॥
कोमल चरनन हित फूलन के रचि पांवड़े संवारे।
'हरीचन्द' मेरो मन फूल्यौ आउ भंवर मतवारे ॥17॥

राग विभास

आजु उठि भोर बृषभानु की नन्दिनी,
फूल के महल तें निकसि ठाढ़ी भई।
खसित सुभ सीस तें कलित कुसुमावली,
मधुप की मंडली मत्त रस ह्वै गई ॥
कछुक अलसात सरसात सकुचात अति,
फूल की बास चहुंओर मोदित छई।
दास 'हरिचन्द' छबि देखि गिरिधर लाल,
पीत तट लकुट सुधि भूलि आनन्द मई ॥18॥

अहो हरि ऐसी तौ नहिं कीजै।
अपनी दिसि बिलोकि करुनानिधि हमरे दोस न लीजै ॥
तुव माया मोहित कहं जानै कैसे मति रस भीजै।
'हरीचन्द' पहिलै अपनो करि फिरि काहें तजि दीजै ॥19॥

राग सोरठ

बनी यह सोभा आजु भली।
नथ मैं पोही प्रान पियारे निज कर कुसुम कली ॥
झीने बसन बिथुरि रहीं अलकैं श्री वृषभानु लली।
यह छबि लखि तन मन धन वार्‌यौ तहं 'हरिचन्द' अली ॥20॥

फबी छबि थोरे ही सिंगार।
बिना कंचुकी बिनु कर कंकन सोभा बढ़ी अपार ॥
खसि रहि तन तें तनसुख सारी खुलि रहे सोंधे बार।
'हरीचन्द' मन मोहन प्यारो रिझयो है रिझवार ॥21॥

आजु सिर चूड़ामनि अति सोहै।
जूड़ो कसि बांध्यो है प्यारी पीतम को मन मोहै ॥
मानहुं तम के तुंग सिखर पै बाल चन्द उदयो है।
'हरीचन्द' ऐसी या छबि को बरनि सकै सो को है ॥22॥

राग विभास

भोर भए जागे गिरिधारी।
सगरी निसि रस बस करि बितई कुंज महल सुखकारी ॥
पट उतारि तिय मुख अवलोकत चन्द बदन छवि भारी।
बिलुलित केस पीक अरु अंजन फैली बदन उज्यारी ॥
नाहिं जगावत जानि नींद बहु समुझि सुरति श्रम भारी।
छवि लखि मुदित पीत पट कर लै रहे भंवर निरुवारी ॥
संगम गुन मधुरे सुर गावत चौंकि उठी तब प्यारी।
रही लपटाइ जंभाइ पिया उर 'हरीचन्द' बलिहारी ॥23॥

जागे माई सुन्दर स्यामा स्याम।
कछु अलसात जंभात परस्पर टूटि रही मोतिन की दाम ॥
अधखुले नैन प्रेम की चितवनि आधे आधे बचन ललाम।
बिलुलति अलक मरगजे बागे नख छत उरसि मुदाम ॥
संगम गुन गावत ललितादिक बाजत बीन तीन सुर ग्राम।
'हरीचन्द' यह छबि लखि प्रमुदित तृन तोरत ब्रज वाम ॥24॥

राग देस

बेगां आवो प्यारा बनवारी म्हारी ओर।
दीन बचन सुनतां उठि धावौ नेकु न करहु अबारी ॥
कृपासिन्धु छांड़ौ निठुराई अपनो बिरद संभारी।
थानै जग दीनदयाल कहै छै क्यौं म्हारी सुरत बिसारी ॥
प्राण दान दीजै मोहि प्यारा हौछूं दासी थारी।
क्यौं नहिं दीन बैण सुनो लालन कौन चूक छे म्हारी ॥

तलफैं प्रान रहैं नहिं तन मैं बिरह बिथा बढ़ी भारी।
'हरीचन्द' गहि बांह उबारौ तुम तौ चतुर बिहारी ॥25॥

राग सारंग

जयति वेणुधर चक्रधर शंखधर,
पद्मधर गदाधर शृंगधर वेत्रधारी।
मुकुटधर क्रीटधर पीतपट कटिनधर,
कंठ कौस्तुभ धरन दुःखहारी ॥
मत्स को रूप धरि बेद प्रगटित करन,
कच्छ को रूप जल मथनकारी।
दलन हिरनाच्छ बाराह को रूप धरि,
दन्त के अग्र धर पृथ्वि भारी ॥
रूप नरसिंह धर भक्त रच्छा करन,
हिरनाकश्यप उदर नख बिदारी।
रूप बावन धरन छलन बलिराज को,
परसुधर रूप छत्री संहारी ॥
राम को रूप धर नास रावन करन,
धनुषधर तीरधर जित सुरारी।
मुशलधर हलधरन नीलपट सुभगधर,
उलटि करषन करन जमुन वारी ॥
बुद्ध को रूप धर बेद निन्दा करन,
रूप धर कल्कि कलजुग संघारी।
जयति दश रूपधर कृष्ण कमलानाथ,
अतिहि अज्ञात लीला बिहारी ॥
गोपधर गोपिधर जयति गिरराजधर,
राधिका का बाहु पर बाहु धारी।
भक्तधर सन्तधर सोइ 'हरिचन्द' धर,
वल्लभाधीष द्विज वेषकारी ॥26॥

राग कान्हरा

दोउ कर जोरे ठाढ़ो बिहारी।
मान कह्यौ तजि मान मया करि सुनि चन्द्रावलि प्यारी ॥
ये बहु नायक मिलत भाग्य सों यह लै चित्त बिचारी।
'हरीचन्द' ब्रजचन्द पिया वे तू चन्द्रावलि नारी ॥27॥

राग विहाग

आजु नव कुंज बिहरत दोऊ रस भरे
प्रिया ब्रजचन्द संग चतुर चन्द्रावली।
सुरति श्रम स्वेद मुख परस्पर बढ़्यौ सुख
टूटि रही उरसि मुकुतानि हारावली॥
गिरत तन बसन नहिं थिरत बेसरि तनिक
खसित सुभ सीस ते कलित कुसुमावली।
सखी 'हरिचन्द' लखि मूंदि दृग दोउ रही
पाइ आनन्द परम बुद्धि भई बावली॥28॥
जयति राधिकानाथ चन्द्रावली प्रानपति
घोष कुल सकल संताप हारी।
गोपिका कुमुद बन चन्द्र सांवर बरन
हरन बाहु बिरह आनन्दकारी॥
त्रिखित लोचन जुगल पान हित अमृतवपु
विमल वृन्दाविपिन भूमिचारी।
गाय गिरिराज के हृदय आनन्द करन
नित्य बिहवल करन जमुन बारी॥
नन्द के हृदय आनन्द वर्धित करन
भरनि जसुदा मनसि मोद भारी।
बाल क्रीड़ा करन नन्द मन्दिर सदा
कुंज मैं प्रौढ़ लीला बिहारी॥
गोप सागर रतन सकल गुन गन भरे
क्वनित स्वर सप्त मुख मुरलिधारी।
मंजु मंजीर पद कलित कटि किंकिनी
उरसि बनमाल सुन्दर संवारी॥
सदा निज भक्त सन्ताप आरति हरन
करन रस दान अपनो बिचारी।
दास 'हरिचन्द' कलि वल्लभाधीश है
प्रगट अज्ञात लीला बिहारी॥29॥

राग देव

स्यामा जी देखो आवे छे थारो रसियो।
कछु गातो कछु सैन बतातो कछु लखिकै हंसियो॥

मोर मुकुट वाके सीस सोहणों पीताम्बर कटि कसियो।
'हरीचन्द' पिय प्रेम रंगीलो थाके मन बसियो ॥30॥

म्हारी सेजां आवो जू लाल बिहारी।
रंग रंगीली सेज संवारी लागी छे आशा थारी ॥
बिरह बिथा बाढ़ी घणी ही मैंसों नहिं जात संभारी।
'हरीचन्द' सो जाय कहो कोउ तलफै छे थारे बिन प्यारी ॥31॥

राग असावरी

सुन्दर श्याम कमलदल लोचन कोटिन जुग बीते बिनु देखे।
तलफत प्रान बिकल निसि बासर नैनन हूं नहिं लगत निमेखे ॥
कोउ मोहिं हंसत करत कोउ निन्दा नहिं समुझत कोउ प्रेम परेखे।
मेरे लेखे जगत बावरो मैं बावरी जगत के लेखे ॥
तापै ऊधव ज्ञान सुनावत कहत करहु जोगिन के भेखे।
बलिहारी यह रीझ रावरी प्रेमिन लिखत जोग के लेखे ॥
बहुत सुने कपटी या जग मैं पै तुमसे तो तुमही पेखे।
'हरीचन्द' कहा दोष तुम्हारो मेटै कौन करम की रेखे ॥32॥

राग बिहाग

हम तौ श्री वल्लभ ही को जानैं।
सेवन वल्लभ पद पंकज को वल्लभ ही को ध्यानैं ॥
हमरे मात पिता गुरु वल्लभ और नहीं उर आनैं।
'हरीचन्द' वल्लभ पद बल सों इन्द्रहु को नहिं मानैं ॥33॥

अहो प्रभु अपनी ओर निहारौ।
करिकै सुरति अजामिल गज की हमरे करम बिसारौ।
'हरीचन्द' डूबत भव सागर गहि कर धाइ उबारौ ॥34॥

हम तो मोल लिए या घर के।
दास दास श्री वल्लभ कुल के चाकर राधा बर के ॥
माता श्री राधिका पिता हरि बन्धु दास गुन कर के।
'हरीचन्द' तुम्हरे ही कहावत नहिं बिधि के नहिं हर के ॥35॥

राग परज

तुम क्यों नाथ सुनत नहिं मेरी।
हमसे पतित अनेकन तारैं पावन की बिरुदावलि तेरी ॥
दीनानाथ दयाल जगतपति सुनिये बिनती दीनहु केरी।
'हरीचन्द' को सरनहिं राखौ अब तौ नाथ करहु मत देरी ॥36॥

राम बिहाग

अहो हरि वेहू दिन कब ऐहैं।
जा दिन में तजि और संग सब हम ब्रज बास बसैहैं ॥
संग करत नित हरि भक्तन को हम नेकहु न अघैहैं।
सुनत श्रवन हरि कथा सुधारस महामत्त ह्वै जैहैं ॥
कब इन दोउ नैनन सों निसि दिन नीर निरन्तर बहिहैं।
'हरीचन्द' श्री राधे राधे कृष्ण कृष्ण कब कहिहैं ॥37॥

अहो हरि वह दिन बेगि दिखाओ।
दै अनुराग चरन पंकज को सुत पितु मोह मिटाओ ॥
और छोड़ाइ सबै जग वैभव नित ब्रज बास बसाओ।
जुगल रूप रस अमृत माधुरी निस दिन नैन पिआओ ॥
प्रेम मत्त ह्वै डोलत चहुं दिसि तन की सुधि बिसराओ।
निस दिन मेरे जुगल नैन सों प्रेम प्रवाह बहाओ ॥
श्री वल्लभ पद कमल अमल मैं मेरी भक्ति दृढ़ाओ।
'हरीचन्द' को राधा माधव अपनो करि अपनाओ ॥38॥

रसने, रटु सुन्दर हरि नाम।
मंगल करन हरन सब असगुन करन कल्पतरु काम ॥
तू तौ मधुर सलोनो चाहत प्राकृत स्वाद मुदाम।
'हरीचन्द' नहिं पान करत क्यों कृष्ण अमृत अभिराम ॥39॥

उधारौ दीनबन्धु महराज।
जैसे हैं तैसे तुमरे ही नाहिं और सों काज ॥
जो बालक कपूत घर जनमत करत अनेक बिगार।
तौ माता कहा वाहि न पूछत भोजन समय पुकार ॥
कपटहु भेष किए जो जांचत राजा के दरबार।
तौ दाता कहा वाहि देत नहिं निज प्रन जानि उदार ॥

R
०८१
सिंह-भ

जौ सेवक सब भांति कुचाली करत न एकौ काज।
तऊ न स्वामि सयान तजत तेहि बांह गहे की लाज ॥
बिधि निषेध कछु हम नहिं जानत एक आस विश्वास।
अब तौ तारे ही बनिहै नहिं ह्वैहै जग उपहास ॥
हमरो गुन कोऊ नहिं जानत तुमरो प्रन विख्यात।
'हरीचन्द' गहि लीजै भुज भरि नाहीं ता प्रन जात ॥

राग भैरव

लाल यह बोहनियां की बेरा।
हौं अबहीं गोरस लै निकसी बेचन काज सबेरा ॥
तुम तौ याही ताक रहत हौ करत फिरन मग फेरा।
'हरीचन्द' झगरौ मति ठानो ह्वैहै आजु निबेरा ॥41॥

रागिनी अहीरी

अरी यह को है सांवरो सो लंगर ढोटा ऐंड़ोई ऐंड़ो डोलै।
काहू को कोहनी काहू को चुटकी काहू सो हंसि बोलै ॥
काहू की गहि कंचुकि छोरत काहू को घूंघट खोलै।
'हरीचन्द' सब लाज गंवाई बात कहै अनमोलै ॥42॥

राग गौरी ताल चर्चरी

आजु नन्दलाल पियकुंज ठाढ़े भए
श्रवत सुभ सीस पै कलित कुसुमावली।
मनहु निज नाथ ससि भूमिगत देखिकै
खसित आकास तें तरल तारावली ॥
बहत सौरभ मिलित सुभग त्रैविधि पवन
गुंजरत महारस मत्त मधुपावली।
दास 'हरीचन्द' ब्रजचन्द ठाढ़े मध्य,
राधिका बाम दक्षिण सुचन्द्रावली ॥43॥

राग केदारा

फूलन के सब साज सजि गोरी कित बदन दुराए जात।
फूलन की तन सारी फूलनि की छबि भारी फूली न हृदय समात ॥
फूल्यौ श्री वृन्दाबन फूलै तेदे अंग अंग काहे को सकुचात।
'हरीचन्द' हम जानि पिय जू सों रति मानी प्रीति छिपे न छिपात ॥44॥

राग सारंग चर्चरी

आजु ब्रजचन्द्र तन लेप चन्दन किए,
ठाढ़े अति रस भरे जमुना तीरे।
फूल के आभरन बसन झीने बने,
खौर चन्दन दिए सीरे सीरे॥
तैसही संग वृषभानु नृपनन्दिनी,
धारि चन्दन के तन चोली चीरे।
दास 'हरीचन्द' बलि जात छबि देखि कै,
जयति बृजराज सुत गोप बीरे॥45॥

राग सारंग

नटवर रूप निहार सखी री नटवर रूप निहार।
गोहन लगी फिरत जाके हित कुल की लाज बिसार॥
ललित त्रिभंग काछनी काछे अमल कमल से नैन।
कर लै फूल फिरावत गावत मोहन कोटिक मैन॥
जग उपहास सहे बहु भांतिन जा दरसन के हेत।
सो हरि नीके नैननि भरि के काहे देखि न लेत॥
तुमरी प्रीति अलौकिक सजनी लखि न परै कछु ख्याल।
'हरीचन्द' धनि धनि तुम दोऊ राधा अरु गोपाल॥46॥

राग हमीर

ठाढ़े हरि तरनि तनैया तीर।
संग श्री कीरति कुमारी पहिनि झीने चीर॥
उरनि फूलन माल जा पै भंवर गन की भीर।
हाथ कमल लिए फिरावत राधिका बलबीर॥
सांझ समय सोहावनो तहं बहत त्रिबिध समीर।
बारने 'हरिचन्द' छबि लखि श्याम गौर सरीर॥47॥

राग केदारा

मेरेई पौरि रहत ठाढ़ो टरत न टारे नन्दराय जू को ढोटा।
पाय रही भुव ढरकि छबीली जामै बांध्यौ है मंजुल चोटा॥
चितवत मो तन फिरि फिरि हेरत कर लै बेनु बजावत।
धरि अधरन वह ललन छबीलो नाम हमारोइ गावत॥

सुन्दर कमल फिरावत चहुं दिसि मो तन दृष्टि न टारै।
'हरीचन्द' मन हरत हमारो हंसि हंसि पाग संवारै ॥48॥

मारग रोकि भयो ठाढ़ो जान न देत मोहिं पूछत है तू को री।
कौन गांव कहा नांव तिहारो ठाढ़ि रहि नेक गोरी ॥
कित चली जात तू बदन दुराए एरी मति की भोरी।
सांझ भई अब कहां जायगी नीकी है यह सांकरी खोरी ॥
बहुत जतन करि हारी ग्वालिनी जान दियो नहिं तेहि घर ओरी।
'हरीचन्द' मिलि बिहरत दोऊ रैननि नन्दकुंवर बृषभानु किशोरी ॥49॥

राग गौरी

नैना वह छबि नाहिन भूले।
दया भरी चहुं दिसि की चितवनि नैन कमल दल फूले ॥
वह आवनि वह हंसनि छबीली वह मुसकनि चित चौरै।
वह बतरानि मुरनि हरि की वह वह देखन चहुं कौरैं ॥
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछे।
वह बीरी मुख बेनु बजावनि पीत पिछौरी काछे ॥
पर बस भए फिरत हैं नैना एक छन टरत न टारे।
'हरीचन्द' ऐसी छबि निरखत तन मन धन सब हारे ॥50॥

बैठे लाल नवल निकुंजन माहीं।
अति रस भरे दोऊ अंग जोरि कै हिलि मिलि दीं गलबांहीं ॥
तैसे श्री गिरिराज शिला में फूले कुसुम अनेकन भांती।
तैसी वै जमुना अति सोभित लहकि रही कमलनि की पांती ॥
तैसेई भंवर गुंजार करत हैं तैसोइ त्रिबिध बयार।
तैसेई सौरभ झरत अनेकन बृन्दाबन तरु डार ॥
कर लै कमल गिरावत दोऊ उर फूलन की माल।
'हरीचन्द' बलि बलि यह छबि लखि राधा और गोपाल ॥51॥

राग ईमन

तू तो मेरी प्रान प्यारी नैन में निवास करै
तू ही जो करैगी मान कैसे कै मनाइहैं।
तू ही तो जीवन प्रान तोहि देखि जीव राखैं
तू ही जो रहेगी रूसि हम कहां जाइहैं ॥

कियो मान राधे महारानी आजु पीतम सों
ऐसी जो खबरि कहूं सौति सुनि पाइहैं।
'हरीचन्द' देखि लीजो सुनतहि दौरि दौरि
निज निज द्वार पै बधाई बजवाइहैं ॥52॥

प्यारे जू तिहारी प्यारी अति ही गरब भरी
हठ की हठीली ताहि आपु ही मनाइए।
नैकहू न मानै सब भांति हौं मनाय हारी
आपुहि चलिए ताहि बात बहराइए॥
रिस भरि बैठि रही नेकहू न बोलै बैन
ऐसी जो मानिनि तेहि काहे को रिसाइए।
'हरीचन्द' जामे मानैं करिए उपाय सोई
जैसे बनै तैसे ताहि पग परि लाइए ॥53॥

आजु मैं देखे री आली री दोऊ
मिलि पौढ़े ऊंची अटारी।
मुख सों मुख मिलाइ बीरी खात
रंग भरि नवल पिया प्रानप्यारी॥
चांदनी प्रकास चारु ओर छिरकाव भयो
सीतल चहुं दिसि चलत बयारी।
'हरीचन्द' सखीगन करत बिंजना
जानि सुरति श्रम भारी ॥54॥

राग बिहाग

पौढ़े दोउ बातन के रस भीने।
नींद न लेत अरुझि रहे दोऊ केलि कथा चित दीने॥
तैसइ सीतल सेज बिछाई सखि बिंजन कर लीने।
'हरीचन्द' आलस भरि सोए ओढ़िकै पट झीने ॥55॥

राग सारंग

मेरे प्यारे सों संदेसवा कौन कहै जाय।
उर की बेदन हरे बचन सुनाय॥
कोऊ सखी देइ मोरी पाती पहुंचाय।
जाइ कै बुलाय लावै बहुत मनाय।
मिलि 'हरिचन्द' मोरा जियरा जुड़ाय ॥56॥

जमुना जू की तिवारी चलु सखी।
तेरो मग जोहत मनमोहन सुन्दर गिरिवर धारी॥
तेरे हित छिरकाव कियो है सुन्दर सेज संवारी।
बिंजन चलत फुहारे छूटत खस परदे रुचिकारी॥
मृगमद चन्दन घोरि धरे हैं फूल माल छवि भारी।
मिलि बिहरो दोऊ आनन्द भरि 'हरीचन्द' बलिहारी॥57॥

सांझ के गए दुपहरी आए।
सांची बात कहो नन्द-नन्दन भले बने मन भाए॥
अब लौं बाट रही तुव हेरत साजि धरे सब साज।
बैठो हौं बींजना डुलाऊं अब न जाहु व्रजराज॥
आए मेरे नैन सिराए सीतल जल लै पीजै।
रैनि नाहिं तौ दुपहरिया मैं 'हरीचन्द' सुख दीजै॥58॥

अरी कोऊ करिकै दया नेक ठांव मोहिं दीजौ धूप लगै मोहि भारी
पांव तपै मेरो गो चारत मैं यह बोलत गिरिधारी
सुनि यह बचन उसीर महल मैं लै आई सुकुमारी।
'हरीचन्द' येहि मिसि मिलि बिहरे नवल पिया अरु प्यारी॥59॥

अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहिं मानत
दौरि दौरि बार बार धूप ही मैं जाय।
सीरे खसखाने साजि सेजहू बिछाय राखी
भयो छिड़काव आइ नेकु तौ जुड़ाय॥
छूटत फुहारो चारु देखि तौ कौतुक आइ
मोतिन सी बूंद झरै चित ललचाय।
'हरीचन्द' मातु के बचन सुनि आइ पौढ़े
बिंजन करत सब सखि हरखाय॥60॥

राग केदारा

फूलि रही द्वै बेली श्री बृन्दाबन।
नव तमाल घनश्याम पिया श्री राधा पीत चमेली॥
और फूल फूली सब सखियां फूलनि पहिरि नवेली।
'हरीचन्द' मन फूल्यौ सब साज देखि भंवर भयो है हेली॥61॥

राग सोरठ

सखी मोहिं लै चलि जमुना तीर
जहां मिले नटवर मनमोहन सुन्दर श्याम शरीर ॥
नन्द द्वार सब बड़े गोप मैं हौं कैसे धंसि जाऊं।
भौन माहिं जसुदा जू के भय नीके लखन न पाऊं ॥
गुरुजन की भय अटा झरोखाहू नहिं बैठन पावैं।
राह बाट मैं लाज निगोड़ी कैसे नैन मिलावैं ॥
तू सब जिय की जाननिहारी तो सों कहा दुराऊं।
'हरीचन्द' जीवन धन दै मोहि नैना निरखि सिराऊं ॥62॥

राग सोरठ

नाव हरि अवघट घाट लगाई।
हम ब्रज बाल कहो कित जैहैं करिहैं कौन उपाई ॥
सांझ भई संग मैं कोउ नाहीं देहु हमैं पहुंचाई।
'हरीचन्द' तन मन धन जोबन सब दैहैं उतराई ॥63॥

हमैं तुम दैहौ का उतराई।
पार उतार देहिं जो तुम को करि कै बहुत खेवाई ॥
जोबन धन बहु है तुम्हरे ढिग सो हम लेहिं छोड़ाई।
हम तुम्हरे बस हैं मन मोहन जो चाहौ सो करौ कन्हाई ॥
निरजन बन मैं नाव लगाई करी केलि मन भाई।
'हरीचन्द' प्रभु गोपी नायक जग जीवन ब्रजराई ॥64॥

राग सारंग

आजु श्री राधिका प्रानपति काज निज,
हाथ सों कुंज मैं कुसुम सज्जा सजी।
परम सीतल पवन चलत सुन्दर भवन,
देखि छबि उष्णता दूर कोसन भजी ॥
मोद भरि बिहरहीं दोउ अति सुख पगे,
काम की बाम लखि ललित सोभा लजी।
दास 'हरीचन्द' धुनि करत किंकिनि चुरी,
मदन के सदन मनु नवल नौबत बजी ॥65॥

आजु दुपहरी मैं श्याम के काम तू
बाम, छबि धाम भई नवल अभिसारिका।
अतिहि कोमल चरन तपित धरनी धरन,
गयो कुम्हलाय मुख कमल सुकुमारिका॥
उरसि नुक्ताहार स्वेत सारी बनी,
कहत कोमल बचन मनहुं पिक सारिका।
बदत 'हरिचन्द' छल छन्द एतो कियो,
कहां सीखी नई कोक की कारिका॥66॥

वृज के लता पता मोहि कीजै।
गोपी पद पंकज पावन की रज जामैं सिर भीजै॥
आवत जात कुंज की गलियन रूप सुधा नित पीजै।
श्री राधे राधे मुख यह बर 'हरीचन्द' को दीजै॥67॥

राग आसावरी वा सारंग

ऊधो जौ अनेक मन होते।
इक श्याम सुन्दर कों देते इक लै जोग संजोते॥
एक सों सब गृह कारज करते एक सों धरते ध्यान।
एक सों श्याम रंग रंगते तजि लोक लाज कुल कान॥
को जप करै जोग को साधै को पुनि मूंदे नैन।
हिये एक रस श्याम मनोहर मोहन कोटिक मैन॥
ह्यां तो हुतो एक ही मन सो हरि लै गए चुराई।
'हरीचन्द' कोउ और खोजि कै जोग सिखावहु जाई॥68॥

राग भैरव (खंडिता)

श्याम पियारे आजु हमारे भोरहि क्यौं पगु धारे।
दिनु मादक ही आज कहो क्यौं घूमत नैन तुम्हारे॥
दीपक जोति मलिन भई देखो पच्छिम चन्द सिधार्‌यौ।
सूरज किरिन उदित उदयाचल पच्छिन शब्द उचार्‌यौ॥
कुमुदिनि सकुची कमल प्रफुल्लित चक्रवाक सुख पायो।
सीतल मरुत चलत उठि मुनियन निज निज ध्यान लगायो॥
कहा कहौं कछु कहि नहिं आवै आज बनी जो सोभा।
पेंच खुले लटपटी पाग के देखत ही मन लोभा॥

ऐसी को है सुघर सुनरिया जिन यह हार बनायो।
बिन नग जड़्यौ हेम बिन निरमित बिन गुन दाम पोहायो॥
मोहन तिलक महावर को सिर लीलाम्बर कटि धारे।
कौन सी चूक परी हरि हम सो नैन लाल क्यौं प्यारे॥
लै आरसी सामुहें राखी जल लाई भरि झारी।
'हरीचन्द' उरि कंठ लगाई हंसि कै गिरिवरधारी॥69॥

राग सारंग

सखी ए नैना बहुत बुरे।
तब सों भए पराए हरि यों जब सों जाइ जुरे॥
मोहन के रस बस ह्वै डोलत तलफत तनिक दुरे।
मेरी सीख प्रीत सब छांड़ी ऐसे ये निगुरे॥
जग खीझ्यौ बरज्यो पै ए नहिं हठ सों तनिक मुरे।
'हरीचन्द' देखत कमलन से बिष के बुते छुरे॥70॥

राधिका पौंढ़ी ऊंची अटारी।
पूरन चन्द उयो नभ मंडल फैली बदन उजारी॥
दोऊ जोति मिलि एक भई है भूमि गगन लौं भारी।
सो छबि देखि सखा तृन तोरत 'हरीचन्द' बलिहारी॥71॥

देखु सखी देखु आजु कुंजन मैं नवल केलि,
करत कृष्ण संग बिबिध भांति राधिका।
तैसोइ बहै त्रिविध पौने तैसोइ नभ चन्द उग्यो,
तैसी परछाहीं परत लाज बाधिका॥
किंकिनि की धुनि सुनात पातन की खरखरात,
तैसी निसि सनसनात सुखहि साधिका।
तहं अलि 'हरीचन्द' आय बिनवत ससि कों, मनाय
आजु रहो थिर ह्वै रथ यह अराधिका॥72॥

तुम्हैं तो पतितन ही सों प्रीति।
लोकरु बेद बिरुद्ध चलाई क्यौं यह उलटी रीति॥
सब विधि जानत हौ निश्चय करि तुम सों छिप्यौ न नेक।
वेद पुरान प्रमान तजन को मेरो यह अबिबेक॥
महा पतित सब धर्म्म बिबर्जित श्रुतिनिन्दक अघ खान।
मरजादा तें रहित मनस्वी मानत कछु न प्रमान॥

जानत भए अजान कहो क्यौं रहे तेल दै कान।
तुम्हैं छोड़ि जग को नहिं जो मोहिं बिगर्‌यौ करत बखान ॥
बलिहारी यह रीझि रावरी कहां खुटानी आय।
'हरीचन्द' सों नेह निबाहत हरि कछु कही न जाय ॥73॥

रावरी रीझ की बलि जैये।
महा पतित सों प्रीति पियारे एक तुमहिं में पैये ॥
नेमिन ज्ञानिन दूर राखि कै हम से पास बिठैये।
'हरीचन्द' यह जग उलटी गति केवल कद्दा कहैये ॥74॥

नाथ तुम प्रीति निबाहत सांची।
करत इकंगी नेह जनन सों यह उलटी गति खांची ॥
जेहि अपनायो तेहि न तज्यौ फिर अहो कठिन यह नेम।
जोहि पकर्‌यौ छोड़त नहिं ताकों परम निबाहत प्रेम ॥
सो भूले पै तुम नहिं भूलत सदा संवारत काज।
'हरीचन्द' कों राखत हौ बलि बांह गहे की लाज ॥75॥

तुम्हारी सांचौ हम मैं नेह।
कबहूं नाहिं छांड़िहौ हमको दृढ़ व्रत लीनो एह ॥
प्रेम सत्य तुमरो जग मिथ्या यामैं कछु न सन्देह।
'हरीचन्द' जो याहि न मानैं तिन के मुख में खेह ॥76॥

नाथ तुम उलटी रीति चलाई।
सब शास्त्रन की बात बिगारी पतितन पास बिठाई ॥
बिधि निषेध तामैं नहिं राख्यौ जाहि लियो अपनाई।
नाहीं तो क्यौं 'हरीचन्द' सों इतनी प्रीति बढ़ाई ॥77॥

बलिहारी या दरबार की।
बिधि निषेध मरजाद शास्त्र की गति नहिं जहां पुकार की ॥
नेमी धरमी ज्ञानी जोगी दूर किए जिमि नार की।
पूछ होत जहं 'हरीचन्द' से पतितन के सरदार की ॥78॥

हम तो दोसहु तुमपै धरिहैं।
व्यापक प्रेरक भाखि भाखि कै बुरे कर्म सब करिहैं ॥

भलो करम जौ कछु बनि जैहैं सो कहिहैं हम कीनो।
निसि दिन बुरे करम को फल सब तुम्हरे माथे दीनो॥
पतित पवित्र करन तब तुमरो सांचो ह्वैहै नाम।
जब तारिहौ हठी कोउ जैसे 'हरीचन्द' अघ धाम॥79॥

प्यारे अब तो तारेहि बनिहै।
नाहीं तो तुमकों का कहिहै जो मेरी गति सुनिहै॥
लोक बेद मैं कहत सबै हरि अभय दान के दानी।
तेहि करिहौ सांचो कै झूठो सो मोहिं भाषो बानी॥
भले बुरे जैसे हैं तैसे तुम्हरे ही जग जानै।
'हरीचन्द' को तारेहि बनिहै को अब औरहि मानै॥80॥

छिपाए छिपत न नैन लगे।
उघरि परत सब जानि जात हैं घूंघट मैं न खगे॥
कितनो करौ दुराव दुरत नहिं जब ये प्रेम पगे।
'हरीचन्द' उघरे से डोलत मोहन रंग रंगे॥81॥

लगौहीं चितवनि औरहि होति।
दुरत न लाख दुराओ कोऊ प्रेम झलक की जोति॥
निज पीतम कों खोजि लेत हैं, भीरहू मैं भरि रंग।
रूप सुधा छिपि छिपि कै पीयत गुरु जनहूं के संग॥
घूंघट मैं नहिं थिरत तनिकहूं अति ललचौंही बानि।
छिपत न क्योंहूं 'हरीचन्द' ये अन्त जात सब जानि॥82॥

आजु हम देखत हैं को हारत।
हम अघ करत कि तुम मोहि तारत को निज बान बिसारत॥
होड़ पड़ी है तुम सों हम सों देखैं को प्रन पारत।
'हरीचन्द', अब जात नरक मैं कै तुम धाइ उबारत॥83॥

कै तौ निज परतिज्ञा टारौ।
गीतादिक मैं जौन कही है ताकों तुरत बिसारौ॥
दीनबन्धु प्रनतारति नासन अपनी बिरद बिगारौ।
कै झट धाइ उठाइ भुजा भरि 'हरीचन्द' को तारौ॥84॥

लगाओ बेदन पै हरताल।
जिन तुमको गायो करुनानिधि भक्तन के प्रतिपाल ॥
पतित उधारन आरति नासन दीनानाथ दयाल।
इन नामन को झूठ करौ पिय छांड़ो सब जंजाल ॥
देहु बहाइ लोक मरजादा तोरि आपुनी चाल।
नाहीं तौ 'हरीचन्दहि' तारौ वेगहि धाइ गुपाल ॥85॥

कहौ तुम व्यापक हौ की नाहीं।
जौ तुम व्यापक हौ तौ अघ करि क्यौं हम नरकहिं जाहीं ॥
जो नहिं पूरन घट घट तो क्यौं लिख्यौ पुरांनन माहीं।
तासों राखौ 'हरीचन्द' कों चरन छत्र की छांहीं ॥86॥

बही मैं ठाम न नैकु रही।
भरि गई लिखत लिखत अघ मेरे बाकी तबहु रही ॥
चित्रगुप्त हारे अति थकि कै बेसुध गिरे मही।
जमपुर मैं हरताल परी है कछु नहिं जात कही ॥
जम भागे कछु खोज मिलत नहिं सबही बही बही।
'हरीचन्द' ऐसे को तारौ तौ तुव नाम सही ॥87॥

पियारे हम तो भक्त इकंगी।
सब छोड़यौ तुमरे हित मोहन लोक लाज कुल संगी ॥
बिधि निषेध अरु बेद छांड़ि कै होइ गई मनु नंगी।
'हरीचन्द' चाहै मति मानौ हम तौ तुव रंग रंगी ॥88॥

छूट नहिं तुमको कोउ बिधि प्यारे।
हम सब पाप करैंगे बनि है ताहू पै पुनि तारे ॥
बेदन मैं निज क्यौं कहवायो पतित उधारन नाम।
क्यौं परतिज्ञा यह कीनौ कै तारहिंगे अघ धाम ॥
सुबरन चोर ब्रह्म हत्यारो गुरुतल्पगहु सुरापी।
अबकी बेर निबाहि लेहु पिय 'हरीचन्द' सों पापी ॥89॥

हम नहिं अपुने कों पछितात।
यह सोचत कै बिनु मोहिं तारे बात तुम्हारी जात ॥

अजामिलादिक के तारन सों भई अतिहि बिख्यात।
सो काहू बिधि अब लौं निबही जानी जगत जगात॥
'हरीचन्द' तुमरो औ पापी यह दोऊ अति ख्यात।
तासों ताकहं तारि कोऊ बिधि राखौ अपनी बात॥90॥

राग आसावरी

जे जन अन्य आसरो तजि श्री बिट्ठलनाथहि गावैं।
ते बिनु श्रम थोरेहि साधन मैं भव सागर तरि जावैं॥
जिनके मात पिता गुरु बिट्ठल और कतहुं कोउ नाहीं।
जन यह संसार समुद्रहि बत्सचरन करि जाहीं॥
जिनकों श्रवन कीर्तन सुमिरन बिट्ठल ही को भावै।
ते जन जीवनमुक्त कहावहिं मुख देखे अघ जावै॥
जिनके इष्ट सखा श्री बिट्ठल और बात नहिं प्यारी।
जिनके बस में सदा सर्वदा रहत गोबर्द्धनधारी॥
तिनके मन क्रम बच सब भांतिन श्री बिट्ठल पद पूजो।
ते कृतकृत्य धन्य ते कलि मैं तिन सम और न दूजो॥
जे निस दिन श्री बिट्ठल बिट्ठल बिट्ठल ही मुख भाखैं।
'हरीचन्द' तिनके पद की रज हम अपुने सिर राखैं॥91॥

राग आसावरी (चीर हरण)

जमुना तट ठाढ़े नन्द नन्दन कोउ न्हान न पावै हो।
जो कोउ जल पैठत मज्जन हित ताको चीर चुरावै हो॥
तोरत हार कंचुकी फारत चढ़त कदम पै धाई।
पुनि पाछे तें पीठ मलत है ऐसो ढीठ कन्हाई॥
गारी देत कह्यौ नहिं मानत हाथ नचावत आई।
हम जल मैं नांगी सकुचाहीं सुनहु जसोदा माई॥
तुम निज सुत के गुन नहिं जानत कहत लाज अति आवै।
'हरीचन्द' बरजति नहि काहे नित नित धूम मचावै॥92॥

राग टोड़ी

बिनती सुन नन्द बाल बरजो क्यौं न अपनो बाल
प्रातकाल आइ आइ अम्बर लै भागै।
भोर होत जमुन तीर जुरि जुरि सब गोपी भीर
न्हात जबै बिमल नीर शीत अतिहि जागै॥

लेत बसन मन चुराइ कदम चढ़त तुरंत धाइ
ठाढ़ी हम नीर माहिं नांगी सकुचाहीं।
'हरीचन्द' ऐसो हाल करत नित्य प्रति गोपाल
ब्रज में कहो कैसे बसैं अब निबाह नाहीं ॥93॥

चलो सखी मिल देखन जैये दुलहिन राधा गोरी जू।
कोटि रमा मुख छबि पै वारौं मेरी नवल किसोरी जू ॥
घंघरी लाल जरकसी सारी सोंधे भीनी चोली जू।
मरवट मुख मैं सिर पै मौरी मेरी दुलहिया भोली जू ॥
नकबेसर कनफूल बन्यौ है छबि का पै कहि आवै जू।
अनवट बिछिया मुंदरी पहुंची दूलह के मन भावै जू ॥
ऐसे बना बनी पै री सखि अपनो तन मन वारी जू।
सब सखियां मिलि मंगल गावत 'हरीचन्द' बलिहारी जू ॥94॥

राग सारंग (रथ यात्रा)

अटा पै मग जोवत हैं ठाढ़ी।
यहि मारग हरि को रथ ऐहै प्रेम पुलक तन बाढ़ी ॥
कोउ खिरकिन छज्जन पै ठाढ़ीं कोउ द्वारे मग जोहैं।
करि शृंगार श्यामसुन्दर हित प्रेम भरी अति सोहैं ॥
यह आयो वह आयो सजनी कहति सबै ब्रजनारी।
लै लै भेंट सामुहे आईं भरि कै कंचन थारी ॥
बीरी देत करति न्योछावरि लै आरती उतारैं।
'हरीचन्द' ब्रजचन्द पिया पै अपनो तन मन वारैं ॥95॥

निविड़ तम पुंज अति श्याम गहवर कुंज
राधिका श्याम तहं केलि सुन्दर रची।
परम अंधियार मधि उदय मुख चन्द को
करत तम दूर सब भांति सोभा सची ॥
हार हिय चमकि उडुगनन की छबि हरत
करत किकिनि चुरी शब्द मनिगन खची।
लखत 'हरीचन्द' सखि ओट है सुरति सुख
काम कामिनि काम गरब गति नहिं बची ॥96॥

ठुमरी

सजन तेरी हो मुख देखे की प्रीत।
तुस अपने जोबन मदमाते कठिन बिरह की रीत॥
जहां मिलत तह हंसि हंसि बोलत गावत रस के गीत।
'हरीचन्द' घर घर के भौंरा तुम मतलब के मीत॥97॥

राग आसावरी

अरे कोऊ कहौ संदेसो श्याम को।
हमारे प्रान पिया प्यारे की अरु भैया बलराम को॥
बहुत पथिक आवत हैं या मग नित प्रति वाही गाम को।
कोऊ न लायो पिय को संदेसो 'हरीचन्द' के नाम को॥98॥

राग सारंग

हम तौ मदिरा प्रेम पिए।
अब कबहूं न उतरिहै यह रंग ऐसो नेम लिए॥
भई मतवार निडर डोलत नहिं कुल भय तनिक हिये।
डगमग पग कछु गैल सूझत निज मन मान किए॥
रहत चूर अपुने प्रीतम पै तिन पै प्रान दिए।
'हरीचन्द' मोहन छैला बिनु कैसे बनत जिए॥99॥

बैठी ही वह गुरुजन के ढिग पाती एक तहां लै आई।
पाती लाय हाथ मैं दीनी कही श्याम यह तोहिं पठाई॥
सुनतहि अति चकृत सी ह्वै रही मात पितहि लखि बहुत लजाई।
नैन नचाइ भौंह टेढ़ी करि बोली तासों बुद्धि उपाई॥
अरी बावरी सी क्यौं डोलत यह घर नाहीं क्यौं घुसि आई।
सो तो आगे दूर रहत है जाके हित तू पाती लाई॥
कै तू नाम भूलि कै वाको ताहि पढ़ावन मों ढिग धाई।
औरहु ब्रज में बांचनहारे तिन सों क्यौं न पढ़ावत जाई॥
जानि परी हमकों याही मिस भेद लेन घर की तू आई।
जी चाहैं सो करैं डरैं नहिं या व्रज की अति कठिन लुगाई॥
बे बातहि बदनाम करन की इनकी टेव परी मैं पाई।
इन बैरिन पाछे या ब्रज में कैसे कै बसिये री माई॥
दूती समुझि बहुत पछितानी कहि भूली मैं भौन दुहाई।
'हरीचन्द' अति चतुर राधिका यों मोहन की प्रीति छिपाई॥100॥

[रचनाकाल 1871 ई.]

प्रेमाश्रु वर्षण

सन 1873 ई.

'पर कारज देह कों धारे फिरौ परजन्म जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ सबही विधि सुन्दरता सरसौ॥
'घन आनन्द' जीवनदायक ह्वै कबौ मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहुं वा बिसासी सुजान के आंगन मों अंसुवान कों लै बरसौ॥'

समर्पण

कितव,

यह प्रेमाश्रु की वर्षा है। इस से नहाके तब मुझे छूओ, क्योंकि वह धूर्तता करने से तुम अशुद्ध हो गए हो। क्या कहूं, बहुत कुछ कहने को जी चाहता है और लेखनी कहनी अनकहनी सभी कहना चाहती है, पर क्या करे अदब का स्थान है, इस से चुप है और चुप रहेगी। हाय हाय, कभी मैं इस दुष्ट लेखनी को अपने प्रान प्यारे जीवितेश, मेरे सर्वस्व की कुछ निन्दा कैसे लिखने दूंगा। और जो लिखा भी हो तो क्षमा करना।

यह बखेड़ा जाने दो, आज क्यों नहीं मिले?

ले इन्हीं लक्षणों से तो कुछ कहने को जी चाहता है,
न कहूंगा, रूठने का डर तो सबसे बड़ा है न
जैसा कुछ हूं, बुरा भला तुम्हारा हूं
लो इस वर्षा से जी बहलाओ
पर प्यारे, तुम भी कभी बरसो।
बरसि नदी नद सर समुद पूरे करुना भौन।
हम चातक लघु चंचु पुट पूरन में श्रम कौन॥

सावन हरिआरी अमावस — **तुम्हारा चातक**
गुरु पुण्य सं. 1930 — **हरिश्चन्द्र**

प्रेमाश्रु वर्षण

भइ सखि सांझ फूलि रहि बन द्रुम बेली चलै किन कुंज कुटीर।
हरे तरोवर भए सुनहरे छिरकी मनहुं अबीर॥
झुकि रहे रंग रंग के बादर मनु सुखए बहु चीर।
जानि बसेरा समय कुलाहल करत कोकिला कीर॥
तन्यौ बितान गगन अवनी लौं भयो सुहावन तीर।
जमुना जल झलकत आभा मिलि लहरत रंग भरि नीर॥
धीर समीर बहत अंग सहरत सोभित धीर समीर।
'हरीचन्द' इक तुव बिनु फीको सब मानत बलबीर॥1॥

सखी री सांझ सहायक आई।
मेट्यो भय बैरो प्रकास को सब कछु दीन दुराई॥
अवनि अकास एक भयो मारग कहुं नहिं परत दिखाई।
सूने भए सबै थल ब्रजजन घर मैं रहे दुराई॥
गरजि बुलावति तोहि चंचला चमकत राह दिखाई।
औरन के चकचौंधा लावत तेरी करत सहाई॥
तैसेहि झींगुर झनकत नूपुर जासों नाहिं सुनाई।
वायु सुखद ता दिसि तोहिं भेजत तरु हिलि रहत बुलाई॥
बरसत नान्हीं बूंद हरन श्रम कोकिल करत बधाई।
'हरीचन्द' चलि उत किन भामिनि रहु पिय अंकम लाई॥2॥

सांझ भई री परम सुहावनि घिरि तम कीन बितान।
भए अंधेरे कुंज लता तरु दुर्रयौ दुखद सो भान॥
घर गए गोप गाय गई गोहर सून भए मग थान।
पावस समय जानि सब बेगहि सोए नर नारी पट तान॥
अवनि अकास एक भयो देखियत परत नाहिं कछु जान।
झनकत झिल्ली रट रहे दादुर कियो जात नहि कान॥

तारे चन्द मन्द भए सारे लखिहैं कोउ न प्रयान।
'हरीचन्द' उठि चलु निधरक तू मति चूकै करि मान ॥3॥

जगावन ही मनु पावस आयो।
भयो भोर पिय उठौ उठौ कहि मधुरे गरजि सुनायो ॥
बोले मोर कोकिला कुहके दादुर रोर मचायो।
दामिनी दमकी मंगल बन्दी जन मनु नाच्यौ गायो ॥
छोटी बूंद बरसि चौंकाए आलस सबै मिटायो।
'हरीचन्द' पिय प्यारी कों इन बेगहिं आज जगायो ॥4॥

आजु प्रानप्यारी प्राननाथ सों मिलन चली
लखि कै पावस दास साजी है सवारी।
तृन के पांवरे बिछाय घन धुनि मंगल सुनाए
दामिनी दमकि आगे करै उंजियारी।
ठौर ठौर राह बतावत झिल्ली
बूंद बरसि हरै श्रम सुखकारी।
'हरीचन्द' समै को उचित उपचारि करि
पावत न्यौछावर पिय जनहारी ॥5॥

आजु तन भीजे बसनन सोहैं।
देखि लेहु भरि लोचन सोभा जुगल अरी मन मोहैं ॥
उघरे तन अनुरागहु उर के छिपे न लजौहैं।
इति के चिन्ह जुगल तन बसनन ढंकेहु उघरि उलटौहैं ॥
अंग प्रभा मनु बसन रुको नहिं प्रगटि खुली सब सौहैं।
'हरीचन्द' दृग भींजि रहे रुकि उड़ि न सकत ललचौहैं ॥6॥

बात बिनु करत पिया बदनाम।
कौन हेतु वह लाज हरै मम बिना बात बेकाम ॥
आजु गई हौं प्रात जमुन तट आयो तहं घनस्याम।
पकरि मोहिं जल बीच हलोर्‌यो तोर्‌यो गर को दाम ॥
लरि कंकन को दियौ खरौटा मेरे मुख सुनु बाम।
'हरीचन्द' जाते जामै सब छिपै न प्रीति मुदाम ॥7॥

बिहरत रस भरि लाल बिहारी।
ज्यौं ज्यौं घन गरजत हैं त्यौं त्यौं लपटि रहत पिय प्यारी ॥

होड़ा होड़ी घन दामिनि सों केलि करत सुखकारी।
बोलत मोर दामिनी चमकत लखि उमगत रस भारी॥
रहे सिहराइ भुजा भुज दीने राधा भानु दुलारी।
'हरीचन्द' कवि गन किए पावन कविता दोस निवारी॥8॥

दामिनि बैर करै बिनु बात।
बिघन बनत बिनु बात कुंज मैं जब कबहूं चमकात॥
निधरक जुगल रहन नहिं पावत प्रगटावत रस बात।
'हरीचन्द' आखिर तौ चपला सहि नहिं सकत सिहात॥9॥

दामिनि बैरिनि बैर परी।
जान न देत पिया प्यारे ढिग प्रगटत बात दुरी॥
रैन अंधेरी स्याम बसन तन जद्यपि रहत घरी।
तऊ चमकि बिनु बात बैरिनी मेरी लाज हरी॥
घन गरजत बूंदन लखि घर नहिं रहियै धीर धरी।
'हरीचन्द' तजि संक अकेली पिय मारग निकरी॥10॥

मंगलमय सखि जुगल बिहार।
बड़े प्रात ही कुंज ओट तें क्यों चुपके नहि लेत निहार॥
मंगल सेस भवन रस मंगल तहां जुगल मंगल की खानि।
मंगल बाहु बाहु मैं दीने मंगल बलि अलसौंही बानि॥
मंगल जागत जालस पागत मंगल नींद भरे जुग नैन।
मंगल लपटि लपटि कै पुनि पुनि कबहुं उठत करि कबहूं सैन॥
मंगल परिरम्भन आलिंगन मंगल तोतरे शब्द उचार।
'हरीचन्द' मंगल बल्लभ पद जा बल बिहारत बिना बिकार॥11॥

आजु कछु मंगल घन उनए।
गरजत मन्द मन्द सोइ मंगल मनवत कुंज छए॥
बरसत बूंदन मनु अभिसेचत मंगल कलस लए।
चमकि मंगलामुखी दामिनी मंगल करत नए॥
मंगल बैरख बग की पंगत मंगल दादुर गान गए।
मंगल नाचत मोर मोरनी मंगल कुंज बितान ठए॥
मंगल ब्रज बृन्दाबन जमुना मंगल गिरिवर नाम लए।
'हरीचन्द' मंगल बल्लभ पद जा बल जुगल बिहार भए॥12॥

सखि ये बदरा बरसन लागै री।
मोहिं मोहन पिय बिनु जानि जानि,
झुकि झुकि कै सरसन लागै री।
हम उन बिनु अति व्याकुल डोलैं, मुख सों हाय पिया कहि बोलैं,
प्रान आइ अटके नैनन में तेरे दरसन लागै री॥
सुनि सुनि कै संजोग कुबिजा को, करि कै याद बिछुरिवो वाको,
लखि झमकनि बूंदनि की मेरे जियरा हरसन लागै री।
'हरीचन्द' नहिं बरसत पानी, बिरह अगिनि को घृत सम जानी,
कहा करैं कित जाइं सेज सूनी लखि तरसन लागै री॥13॥

सखी मन मोहन मेरे मीत।
लोक वेद कुल कानि छांड़ि हम करी उनहिं सों प्रीत॥
बिगरौ जग के कारज सगरे उलटौ सबही नीत।
अब तौ हम कबहूं नहिं तजिहैं पिय की प्रेम प्रतीत॥
यहै बाहु बल आस यहै इक यहै हमारी रीत।
'हरीचन्द' निधरक बिहरैंगी पिय बल दोउ जग जीत॥14॥

अरी सोहागिन तेरे ही सिर राजतिलक बिधि दीनो।
तोही कों फबै सेंदुर को टीको जिन पिय मन हरि लीनो॥
नास्यौ दरप सुन्दरीगन को भोग भाग सब छीनो।
'हरीचन्द' भय मेटि काम को राज अचल ब्रज कीनो॥15॥

श्रीराधे सबको मान हर्‍यौ।
अरी सुहागिन मेरी तू जब सेंदुर तिलक धर्‍यौ॥
गिरे गरब परबत जुवतिन के यप गरूर बर्‍यौ।
रीती सिद्धि भई रिषिगन की देविन दरप दर्‍यौ॥
शिव समाधि छूटी शुक डोल्यौ रवि ससि तेज छर्‍यौ।
फूलन रूप रंग तजि दीनौ जग आनन्द भर्‍यौ॥
सबको भाग रूप अधरामृत इकलौ पान कर्‍यौ।
'हरीचन्द' हरि तोहि अंक लै ह्वै निसंक बिहर्‍यौ॥16॥

सुरत श्रम जल बिहरत पिय प्यारी।
घाव भरे दोउ सेज नाव पै बाहु बाहु मैं धारी॥
करि आसरो पियारी को पिय पावत कोउ बिधि पारी।
'हरीचन्द' तहं मौन बांधि गल डूबे भयो सुखारी॥17॥

प्यारी रूप नदी छवि देत।
सुखमा जल भरि नेह तरंगनि बाढ़ी पिय के हेत॥
नैन मीन कर पद पंकज से सोभित केस सिवार।
चक्रवाक जुग उरज सुहाए लहर लेत गल हार॥
रहत एक रस भरी सदा यह जदपि तऊ पिय भेंटि।
'हरीचन्द' बरसै सांवल घन बढ़त कूल कुल मेंटि॥18॥

आजु तन आनन्द सरिता बाढ़ी।
निरखत मुख प्रीतम प्यारे को प्रीति तरंगनि काढ़ी॥
लोक बेद दोउ कूल तरोवर गिरे न रहे सम्हारे।
हाव भाव के भरे सरोवर बहे होइ कै नारे॥
बुझे दवानल परम बिरह के प्रेम परब भो भारी।
मीन बान के जे प्रेमी जन जल लहि भए सुखारी॥
भई अपार न छोर दिखावै नीति नाव नहिं चाली।
'हरीचन्द' बल्लभ पद बल वै अवगाहत सोई आली॥19॥

हमारे नैन बहीं नदियां।
बीती जानि औधि सब पिय की जे हम सों बदियां॥
अवगाह्यौ इन सकल अंग ब्रज अंजन को धोयो।
लोक बेद कुल कानि बहाई सुख न रह्यो खोयो॥
डूबत हौं अकुलाइ अथाहन यहै रीति कैसी।
'हरीचन्द' पिय महाबाहु तुम आछत गति ऐसी॥20॥

खेमटा।

ए री मेरी प्यारी आजु पौढ़ि तू हिंडोरें।
ललित लतान मैं सेज फंसाई झरत फूल चहुं ओरें॥
मन्द पवन लगिहैं हालन मैं पीतम सों भुज जोरें।
'हरीचन्द' सुख नींद सोइ तूं अपने पिय के कोरें॥21॥

पिय की अंकोर रच्यो है हिंडोर।
खम्भ जाघैं अंक पटुली मन्द झुलनि झकोर॥
हार झूमर पीत पट झालर लगी चहुं ओर।
सुक मोर पिक किंकिनि बदत तन स्वेद बरसत जोर॥

तहां रमकि झूलत प्रान प्यारी उमगि थोरहिं थोर।
'हरीचन्द' सखि श्रम हरन बीजन रहत है तृन तोर ॥22॥

दोऊ मिलि झूलत कुंज बितान।
चहुं ओर एकन एक सों लगे सघन बिटप कतार ॥
तापैं लता रहि लपट घेरे मूल सों प्रति डार।
बहु फूल तिन मैं फूलि सोहत बिबिध बरन अपार।
तिमि अवनि तृन अंकुर मई भयो दसो दिसि इक सार ॥दोऊ.॥

इक सबल लखि कै डार डार्‍यौ तहां ललित हिंडोल।
तापैं लता चहुंधा लपेटीं झूमि झूमर लोल ॥
तहं झमकि झूलत होड़ बदि बदि उमगि करहिं कलोल।
खेलैं हंसै गेंदुक चलावैं गाइ मीठे बोल ॥दोऊ.॥

झोटा बढ़्यो रमकत दोऊ दिसि डार परसत धाइ।
फरहरत चंचल खुलत बेनी अंग परत दिखाइ ॥
टूटि मोती-माल मुक्ता गिरत भू पै आइ।
मनु मुक्त जन अधिकार गत लखि देत धरनि गिराइ ॥दोऊ.॥

कसी कंचुकी होत ढीली खुलि तनी के बन्द।
सिथिल कबरी उड़त सारी गिरत करके छन्द ॥
प्रगट बदन दुरात झूलत मैं तहां सानन्द।
मनु प्रेम सागर मथत इत उत तरत कढ़ि बहु चन्द ॥दोऊ.॥

इक डार पकरि हिलाइ बरसावत कुसुम बहु रंग।
इक नचत गावत इक बजावत बीन मधुर मृदंग ॥
इक खींची भाजत एक को पट हंसत भरी उमंग।
इक लपट डोरी खात भंवरी प्रगटि अंग अनंग ॥दोऊ.॥

इक रीझि झूलनि पै रही इक रही बिरछन ओर।
इक होड़ दै झोटन बढ़ावत सौह देत निहोर ॥
इक थकित उतरत सिथिल बैठत नटत घूमरि घोर।
इक चढ़त झूलन हेत बदिकै दांव लाख करोर ॥दोऊ.॥

इक भजत तेहि गहि रहत दूजी हंसत झगरत बात।
इक कहत हम नहिं झूलिहैं भई सिथिल सगरे गात॥
तेहि खैंचि कोऊ आपुनो बल डोल पै लै जात।
इक श्रमित बैठत ताहि दूजी करत अंचल बात॥दोऊ.॥

कोउ अंचल छोर कटि मैं बांधि कसिकै देत।
कोउ किए लावन को कछोटी चढ़त झोटा हेत॥
कोउ दाबि अंचल दांत सों मुख सों झकोरे लेत।
कोउ बांधि गाती हार सगरे भिरत रति रन खेत॥दोउ.॥

इक श्रमित मुख करि अरुन स्वेदित लेत बिबिध उसास।
भए हाथ डोरी गहत राते मनहुं राग प्रकास॥
पिंडुरि कांपत अंग थहरत लहरि कच मुख पास।
तन स्वेद-कन झलकन रहत कोउ चाहि मन्द बतास॥दोऊ.॥

इक डरत झोटा देत पिय के गल रहत लपटाइ।
इक बीनि सबके आभरन पोहत तहां मन लाइ॥
इक गिरत रपटत घन गरज सुनि डरि छिपत इक जाइ।
इक बसन डारन सों छुड़ावत रहे जे लपटाइ॥दोऊ.॥

गए भींजि सबके बसन लपटे बिबिध अम्बर गात।
तन दुति अभूखन सहित भइ तहं सबन को प्रगटात॥
मनु प्रान प्रिय के मिलन अन्तर पट दुरायो जात।
खुलि गई कलई दुरय फल भयो प्रगट प्रेम लखात॥दोऊ.॥

इत बदत सुक पिक भंवर चातक भेक मोर चकोर।
इत डार हहरनि होत प्रतिधुनि मचकि डोल झकोर॥
इत हंसनि हाहा सी सराहनि किंकिनी की रोर।
उत गान तान बंधान बाजन मिलि तुमुल कल घोर॥दोऊ.॥

रंग रंग सारी रंग रंग के बहु अभूखन अंग।
रंग रंग फूले फूल चहुं दिसि झालरैं रंग रंग॥
रंग रंग बादर छए नभ तन रंग रंग अनंग।
मनु श्याम ससि लखि रंग सागर चढ़ि चल्यौ इक संग॥दोऊ.॥

जर तारे सारी बादला ले करत मोती पात।
तन स्वेद कन घनश्याम जल हरि प्रेम बरसत जात ॥
तरु सों पराग अमोद मधु मद फूल बरसत पात।
मनु श्याम घन लखि उमगि चहुं दिसि तें चली बरसात ॥दोऊ.॥

तरु फूल फल महि रहि गमकि तपि धूल ठौरहिं ठौर।
मिंहदी सुगन्ध कुसुम्भ सारी अतर बासित छोर ॥
मिलि केस सोंधे अरगजा कुच लेप मृगमद जोर।
सुख मोद मधु तम्बोल स्वेद सुगन्ध लेत झकोर ॥दोऊ.॥

घन तड़ित चमकनि तासु आभा पाइ जल चमकात।
तन बिबिध भूखन बसन चमकनि हंसनि मैं द्विजपान्त ॥
चौंकि चमकनि नारि की मुख चन्द चमकनि गात।
मिलि पीत पट के चमक मैं इक रंग सबै दिखात ॥दोऊ.॥

तन भींजि सारी रंग रंग के बारि बहत उदोत।
सब रंग मिलि के बसन छापित मैं प्रगट मुख जोत ॥
पित के निचोरत चूनरी मैं रंग दूनो होत।
मनु बहे मिलि रंग समुद मैं इक संग बहु रंग सोत ॥
मुख पै कसूंभी रंग सारी भींजि रही चुचाय।
लट सगबगी ह्वै तिमि रही गल कुचन मैं लपटाय ॥
मनु बाल ससि ढिग लाल बादर सुधा बरसत आय।
तेहि पान करि अहि पुच्छ सों सिव सीस देत बहाय ॥दोऊ.॥

तिनमैं छबीली ललित श्री बृषभानुराय कुमारि।
जापै रमा रीति उरबसी सी कोटि फेंकिय वारि ॥
जगस्वामिनी जन-काम-पूरनि सहज ही सुकुंवारि।
कीरति जसोमति लाडली व्रजराज प्रान पियारि ॥दोऊ.॥

तन नील सारी मैं किनारी चन्दमुख परिबेख।
सिन्दूर सिर दोउ नैन काजर पान की मुख रेख ॥
बड़े नैना चपल चितवनि श्याम हित अनमेख।
गोरी किसोरी परम भोरी सहज सुन्दर भेख ॥दोऊ.॥

ढिग बांह जोरे जासु बैठे नन्दराय कुमार।
प्रति रमक चितवनि हंसनि लखि जीवन करत मनुहार ॥
सुरझाइ अंचल केस हारन करत मधुर बयार।
रहे रीझि आपा भूलि बारम्बार कहि बलिहार ॥दोऊ.॥

सिर मोर मुकुट सोहावनो गल गुंजमाल अनूप।
तन श्यामसुन्दर पीत पट कटि सहजहीं नट रूप ॥
मनु नीलगिरि पैं बाल रबि की ललित लपटी धूप।
प्रेमिन महा सुख देत अतिहि उदार श्री व्रज भूप ॥दोऊ॥

मुरछल चंवर बिजना अड़ानी लिए हाथ रुमाल।
पिकदान फूल चंगेर भूखन बसन कुसुमन माल ॥
झारी भरी जल डबा बीरा बिबिध बिंजन थाल।
ललितादि ठाढ़ी अनुचरी ढिग रूप की सी जाल ॥दोऊ.॥

इक करत आरति इक निछावरि करत मनिगन छोरि।
इक आइ राई लोन वारत इक रहत तृन तोरि ॥
इक भौंर निरवारत खरी इक रहत भूखन जोरि।
इक बूंद आड़त आइ इक पद पोंछि रहत निहोरि ॥दोऊ॥
आनन्द सागर बढ़ो ताको कहूं वार न पार।
डूबे करम कुल ज्ञान नेम विवेक काम बिकार ॥
पायो न क्यौहूं थाह शिव शुक रहे हारि बिचार।
'हरिचन्द' तेहि अवगाह किय बल्लभ कृपा आधार ॥23॥

सखी लखि यह रितु बन की शोभा।
कुहकत कुंज कुंज में कोकिल लखि कै सब मन लोभा ॥
नए नए वृक्ष नए नए पल्लव नए नए सब गोभा।
नए नए पात फूल फल नए नए देत हिये में चोभा ॥
सीतल चलत समीर सुहायो लेत सुगन्ध झकोर।
तैसाइ सुख घन उमड़ि रह्यौ है जमुना जू लेत हलोर ॥
नाचत मोर सोर चहुं ओरन गुंजत अलि बहु भांति।
बोलत चातक सुक पिक चहुं दिसि लखि कै घन की पांति ॥
हरी हरी भूमि भरी सोभा सों देखत ही बनि आवै।
जहं राधा अरु माधव बिहरत कुंजन छिपि छिपि जावै ॥

वह सौदामिनि वह स्यामल घन बृन्दा बिपिन बिहारी।
युगल चरन कमलन के नख पै 'हरीचन्द' बलिहारी ॥24॥

आजु ब्रज बधू फूली फूलन के साज सजि,
प्यारी को झुलावत फूल के हिंडोरे।
फूली ब्रज भूमि सब द्रुम लता रहे फूलि,
तैसोई पवन बहै फूल के झकोरें॥
फूली सखी एक आई सांवरे सलोने गात,
फूली प्यारी कंठ लगी प्रेम के हलोरें।
'हरीचन्द' बलिहारी फूलि फूलि जात वारी,
संगम गुन गावत सुर थोरें ॥25॥

परज

सखी री मोरा बोलन लागे।
मनु पावस को टेरि बोलावत तासों अति अनुरागे॥
किधौं स्याम घन देखि देखि कै नाचि रहे मद पागे।
'हरीचन्द' बृजचन्द पिया तुम आइ मिलौ बड़ भागे ॥26॥

देखि सखि चन्दा उदय भयो।
कबहूं प्रगट लखात कबहुं बदरी को ओट भयो॥
करत प्रकास कबहुं कुंजन में छन छन छिपि छिपि जाय।
मनु प्यारी मुख चन्द देखि के घूंघट करत लजाय॥
अहो अलौकिक वह रितु सोभा कछु बरनी नहिं जात।
'हरीचन्द' हरि सों मिलिबे कों मन मेरो ललचात ॥27॥

सखी अब आनन्द को रितु ऐहै।
बहु दिन ग्रीसम तप्यो सखरी सब तन ताप नसैहै॥
ऐहैं री झुकि कै बादर चलिहैं सीतल पौन।
कोइलि कुहुकि कुहुकि बोलैगी बैठि कुंज के भौन॥
बोलैंगे पपिहा पिउ पिउ बन अरु बोलैंगे मोर।
'हरीचन्द' यह रितु छबि लखि कै मिलिहैं नन्दकिसोर ॥28॥

सखी री कछु तौ तपन जुड़ानी।
जब सों सीरी पवन चली है तब सों कछु मनमानी॥

कछु रितु बदलि गई आली री मनु बरसैगो पानी।
'हरीचन्द' नभ दौरन लागे बरसा के अगवानी ॥29॥

भोजन कीजै प्रान पिआरी।
भई बड़ी बार हिंडोले झूलत आज भयो श्रम भारी ॥
बिंजन मीठे दूध सुहातो लीजै भानु दुलारी।
स्यामा स्याम चरन कमलन पर 'हरिचन्द' बलिहारी ॥30॥

एरी आजु झूलै छै जी श्याम हिंडोरें।
बृन्दाबन री सघन कुंज में जमुना जी लेतीं हलोरें ॥
रंग थारे बृषभानु नन्दिनी सोहै छे रंग गोरे।
'हरीचन्द' जीवन धन वारी मुख लखतीं चित चोरे ॥31॥

आजु फूली सांझ तैसी ही फूली राधा प्यारी।
तैसी हीं जमुना फूली, भौंरन की भोर भूली,
तैसौ ही समय भयो तैसी ही फूलीं फुलवारी ॥
तैसे ही झोटा बढ़े, आंत ही अनन्द मढ़े,
तैसोई अड़ानो राग गावैं सुकुंवारी।
तैसोई बृन्दावन, तैसोई आनन्द मन, तैसोही,
मोहन बनैं 'हरीचन्द' तहां बलिहारी ॥32॥

कहूं मोर बोलै री घन को गरज सुनि दामिनी दमकै छतिया धरकै।
पिय बिन विकल अकेली तड़पूं बिरह अगिनि उठि भरकै ॥
वह सुख की रतियां नहिं भूलै सोई बात जिय करकै।
'हरीचन्द' पिय से कैसे मिलू छतियां सों विरह बोझ मेरे सरकै ॥33॥

चौखड़ा

हिंडोरे झूलत कुंज कुटीर।
हिंडोरे राधा औ बलबीर ॥
हिंडोरे सब गोपिन की भीर।
हिंडोरे कालिन्दी के तीर ॥

कालिन्दी के तीर गहवर कुंज रच्यो है हिंडोर।
नव द्रुम लतन मैं ग्रन्थि दै दै फूल हैं चहुं ओर ॥

तहं निबिड़ में शोभा भई अति ही सुगन्ध झकोर।
लखि हंस सारस भंवर गुंजत नचत बहु बिधि मोर॥
सोभा अति झूलत भई आजु बृन्दाबन मांहिं।
एक उतरहिं एक चढ़हिं पुनि एक आवहिं एक जांहिं॥

तैसी भूमि सबै हरियारी।
तैसी सीतल चलत बयारी॥
डोलत कीर कतारी।
तैसी दादुर की धुनि न्यारी॥

दादुर की धुनि चहुं ओर तैसी बीर बधु छबि देत।
बग पांति तैसी श्याम घन मैं इन्द्रधनुष समेत॥
जब बरसि नान्ही नान्ही बूंदन जिय बढ़ावत हेत।
कहुं पन्थ नहिं सूझत तृनन सों जल हलोरा लेत॥
जब चमकत घन दामिनी प्यारी तबै तुरन्त।
पिय के कंठन लागई बाढ़्यौ मोद अनन्त॥

तैसी झुकी रही लतारी।
तैसे सोभित नवल पतारी॥
तामैं अंटकि रहै सारी।
तेहि आप छुड़ावत प्यारी॥

प्यारी छोड़ावत आपु सारी फूल सखि खसि कै गिरैं।
सब हिलत द्रुम अरु डार सोभा लखत ही मन को हरैं॥
बेला चमेली कुन्द मरुआ अरु गुलाबन के तरैं।
बहु रंग फूले फूल तापै भंवर बहु बिधि गुंजरैं॥
अति आनन्द बाढ़्यौ तहां झूलत हैं बृजचन्द।
सब बृजनारि झुलावहीं कबहुं तरल कहुं मन्द॥

सिर मोर मुकुट छबि छाजै।
उनके सुरंग चूनरी राजै॥
बिछुआ किंकिनि सब बाजै।
मनु काम नृपति दल गाजै॥

मनु काम नृप की सैन गाजै जीति सब संसार को।
कियो अचल पूरन प्रेम पन्थहि नासि ग्यान-बिकार को ॥
नित एक रस यह व्रज बसौ श्री श्याम नन्दकुमार को।
'हरीचन्द' का बरनै कहो या नित्य नवल बिहार को ॥34॥

राग मलार

बोलै भाई गोबर्द्धन पर मोर।
सावन मास घटा जुरि आई करत पपीहा सोर ॥
वृन्दावन तरु पुंज कुंज मैं ठाढ़े नन्दकिसोर ।
तैसिहि संग बृषभानु नन्दनी तन जोरन को जोर ॥
सीतल चलत समीर सुहायो भरत सुगन्धि अथोर।
या वृजमाहिं सदा चिरजीवै 'हरीचन्द' चित चोर ॥35॥

सखि री कुंजन बोलत मोर।
दामिनी दमकि दसो दिसि दावत छूटि छुवत छित छोर ॥
मन्द मन्द मारुत मन मोहत मत्त मधुपगन सोर।
'हरीचन्द' बृजचन्द्र पिया बिनु मारत मदन मरोर ॥36॥

जेंवत भींजत हैं पिय प्यारी।
सावन मास घटा जुरि आई बैठे मोर कतारी ॥
मुरछल चंवर करत ललितादिक बैठे कंचन थारी।
स्यामा स्याम बदन के ऊपर 'हरीचन्द' बलिहारी ॥37॥

घिरि घिरि घोर घमक घन धाए।
बरसत बारि बड़ी बड़ी बूंदन बृज मंडल पर छाप ॥
दादुर बक पिक मोर पपीहा चातक सोर मचाए।
दामिनि दमकति दसहुं दिसा सों बहु खद्योत चमकाए ॥
कुसुमित कुंज कुन्द की कलिका केतकि कदम सुहाए।
'हरीचन्द' हरीचन्द नन्दन छबि लखि रति काम लजाए ॥38॥

चौताला

स्याम घटा मधि स्यामही हिंडोरो बन्यौ,
स्यामा स्याम झूलैं जामें अतिही अनन्द सों।
तैसोई तमाल कुंज स्याम रंग सोहत गोपी,
सब मिलि गावैं आनन्द के कन्द सों॥
अलि पिक मोर नीलकंठ स्याम रंग सोहैं,
स्याम श्री यमुना बहैं गति अति मन्द सों।
'हरीचन्द' हरि की निरखि छबि महादेव,
स्याम गज खाल ओढ़ि नाचैं गावैं छन्द सों॥39॥

सखी री ठाढ़े नन्द कुमार।
सुभग स्याम घन सुख रस बरसत चितवन मांझ अपार॥
नटवर नवल टिपारो सिर पर लखि छबि लाजत मार।
'हरीचन्द' बलि बूंद निवारत जब बरसत घन धार॥40॥

हिंडोला

झूलत हैं राधिका स्याम संग नव रंग सुखद हिंडोरे।
गावत मालव राग रस भरे तान मान मधुरे सुर जोरे॥
उमगि रहीं ब्रजनारि नवेली पंचरंग चीर पहिरि चित चोरे।
पंचरंग छबि रस जुगल माधुरी कहि न जाइ श्यामल रंग गोरे॥
बरसत मन्द मन्द घन तेहि छन पंच रंग बादर सब सुख बोरे।
'हरीचन्द' वृषभानुनन्दनी कोटिन ससि छवि छिन महं छोरे॥41॥

वृषभानु कुमारी लाडिली प्यारी फूलत हैं संकेत हो।
संग सुन्दर सखी सुहावनी जिन कीनो हरि सों हेत हो॥
सुन्दर साज सिंगार किए सब पहिरे बिबिध रंग चीर हो।
हिलि मिलि झुलवहिं लाडिली हो नव रस जमुना तीर हो॥
सबै सोहाई नवल बधू मिलि गावत गौरी राग हो।
'हरीचन्द' सुख को घन बरसत बाढ़्यौ सलिल सोहाग हो॥42॥

कलेऊ कीजै नन्द कुमार।
भई बड़ि बार जाहु जमुना तट ठाढ़े सखा सब द्वार॥

आज प्रात ही घेर रह्यौ है बरसैगो बड़ी धार।
'हरीचन्द' बलि वेगहि ऐयौ भींजोगे सुकुमार ॥43॥

घूम घूम घन आए बरसत धूम धूम पिय,
प्यारी रंग भौन भोजन रस भीने।
फुहु फुहु फुहु बूंद परैं छज्जन सो नीर झरैं,
बातन रंग भरे दोऊ अरस परस कीने ॥
नागरि ललितादि ठाढ़ीं बिंजन बहु भांति हात,
सीतल जल झारी भरि बीड़ादिक लीने।
'हरीचन्द' हंसैं गावैं भोजन को सुख पावैं,
वारि फेरि सखी तृन तोरि तोरि दीने ॥44॥

लाल यह सुन्दर बीरी लीजै।
हंसि हंसि कै नन्दलाल अरोगौ मुख ओगार मोहिं दीजै ॥
रंग रह्यौ बीरी की रचन मैं चूनरि तैसिय कीजै।
रस बाढ़्यौ तिय की बातन मैं 'हरीचन्द' पिय भीजै ॥45॥

नाचत ब्रजराज आज साजे नटराज साज,
पावस सों बदि बदि कै होड़ सी लगाई।
कोकिल कल बंसी धुनि नृत्य कला मोर नटनि,
पीत बसन चपला दुति छीनत चमकाई ॥
ज्यों ज्यों बरसत सुबेस त्यौं त्यौं रह बरसत,
हरि घन गरजत उत इत रहे मृदंग बजाई।
'हरीचन्द' जीति रंग रह्यौ आजु ब्रज अखारैं,
हारे घन रीझि देव कुसुमन झर लाई ॥46॥

इति

[सन 1873 ई. में प्रकाशित]

प्रेम सरोवर

सन 1874 ई.

हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 2 1874 अक्टूबर में प्रकाशित हुआ है और 41वें दोहे के नीचे 'क्रम मक्र से' लिखा है।

समर्पण

आज अक्षय तृतीया है, देखो जलदान की आज कैसी महिमा है। क्या तुम मुझे फिर भी जलदान दोगे? कहां! वरंच जलांजलि दोगे; देखो मैं कैसा प्यासा हूं और प्यास में भी चातकाभिमानी हूं। हां! जिस चातक ने एक श्याम घन की आशा पर परिपूर्ण समुद्र और नदियों तथा अनेक उत्तम मीठे मीठे सोते, झील, कूप, कुंड, बावली और झरनों को तुच्छ कर के छोड़ दिया, उसे पानी बरसना तो दूर रहे, जो मधुर घन की ध्वनि भी न सुन पड़े तो कैसे प्रान बचे? देखो यह कैसी अनीति है, वही आनन्दघनजी का कहना 'सब छोड़ि अहो हम पायो तुम्हैं हमैं छोड़ि कहो तुम पायौ कहा।' यह देखो कैसे संशय की बात है कि मैं तो दोनों लोक के यावत् पदार्थ छोड़ बैठा, इस पर भी आप न पिघले तो इस से तुम्हारे ही विषय में संशय होते हैं जो चित्त के धैर्यों को हिलाते हैं। पर चाहे तुम कुछ कहो; मैं तो व्रत नहीं छोड़ने का। यह बड़ा हठ कौन मिटा सकता है? जो कहो कि 'तुम कच्चे हो, घर बैठे ही यह सम्पत लूटा चाहते हो और संसार की वासनाओं से दूषित हो कर भी हमें खोजते हो' तो हम कैसे भी हों, तुम तो अच्छे हो और हम कहाते तो तुम्हारे हैं, तो फिर तुम को इस से क्या? भले आदमी ही बनो 'सतां सप्तपदौ मैत्री' इसी का निबाह करो, किसी भांति समझो। ए मेरे प्यारे, कुछ तो मानो। जो कहो धर्म्म तो तुम फल रूप हो। अब धर्म्म फिर कैसा? जो कहो कलंक, तो प्रथम तुम को कलंक ही नहीं, और जो होता भी हो तो हम तुम को ढिंढोरा पीटने तो कहते नहीं। केवल इस अपने दीन को आश्वासन दे दो कि निराश न हो और इन अनिवार्य्य अश्रुओं को अपने अंचल से निवारण करो और भव ताप से परम तापित इस दीन हीन, दुखी को अपने चरण कल्पतरु की छाया में विश्राम दो क्यौंकि वैशाख में छायादान का बड़ा पुण्य है। जो कहो कि वैशाख बड़ा पुण्य मास है, इस में तुम ने क्या किया? तो मैंने देखो यह कैसा उत्तम तीर्थ प्रेम सरोवर बनाया है। जो इस तीर्थ में स्नान करेंगे, जो इस तीर्थ की विधि करेंगे, जो इस तीर्थ का ध्यान धरेंगे, वे आप पुण्य स्वरूप पावन होकर अपने शरीर के वायु से तथा हवा से लोक को पवित्र करेंगे, क्यौंकि सत्य प्रेम ऐसी ही वस्तु है। तो क्या इस सीतल सरोवर में तुम न नहाओगे? अवश्य नहाना होगा, आप नहाओ

और अपने जनों को कहो कि इस में स्नान करें। प्यारे, यह अक्षय सरोवर नित्य भरा रहेगा और इस में नित्य नए कमल फूलेंगे और कभी मल न आवेगा और इस पर प्रेमियों की भीड़ नित्य लगी रहेगी और प्रेम शब्द को विषय का पूजादिक कहने वाले वा प्रेमाधिकारी के अतिरिक्त कोई भी इस तीर्थ पर कभी न आवेंगे (एवमस्तु एवमस्तु)। तुम तो स्नान करो कि मेरा परिश्रम सार्थक हो और इस का तीर्थपना पक्का हो जाय, क्यौंकि हमारे वा तुम्हारे किसी सेवक के नहाने से जल मात्र गंगा हो जाते हैं। तो आओ इधर आओ, इस उत्तम तीर्थ का मार्ग दिलाने वाला तुम्हारे आगे चलता है, जिसका नाम–

अक्षय तृतीया, वैशाख शुक्ल 3 केवल तुम्हारा

सं. 1930 मंगल .....है

प्रेम सरोवर

जिहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन प्रेम बरन यह दोय ॥1॥
प्रेम प्रेम सब ही कहत प्रेम न जान्यौ कोय।
जो पै जानहि प्रेम तो मरै जगत क्यों रोय ॥2॥
प्राननाथ के न्हान हित धारि हृदय आनन्द।
प्रेम सरोवर यह रचत रुचि सों श्री हरिचन्द ॥3॥
प्रेम सरोवर यह अगम यहां न आवत कोय।
आवत सों फिर जात नहिं रहत वहीं के होय ॥4॥
प्रेम सरोवर मैं कोऊ जाहु नहाय बिचारि।
कछु के कछु ह्वै जाहुगे अपनेहि आप बिसारि ॥5॥
प्रेम सरोवर नीर को यह मत जानेहु कोय।
यह मदिरा को कुंड है न्हातहि बौरो होय ॥6॥
प्रेम सरोवर नीर है यह मत कीजौ ख्याल।
परे रहैं प्यासे मरैं उलटी ह्यां की चाल ॥7॥
प्रेम सरोवर पन्थ मैं चलिहै कौन प्रवीन।
कमल तन्तु की नाल सों जाको मारग छीन ॥8॥
प्रेम सरोवर के लग्यौ चम्पाबन, चहुं ओर।
भंवर बिलच्छन चाहिए जो आवै या ठौर ॥9॥
लोक लाज की गांठरी पहिले देइ डुबाय।
प्रेम सरोवर पन्थ मैं पाछें राखै पाय ॥10॥
प्रेम सरोवर की लखी उलटी गति जग मांहि।
जे डूबे तेई भले तिरे तरे ते नांहि ॥11॥
प्रेम सरोवर की यहै तीरथ बिधि परमान।
लोक वेद कों प्रथम ही देहु तिलांजलि दान ॥12॥
जिन पांवन सों चलत तुम लोक वेद की गैल।
सो न पांव या सर धरौ जल ह्वै जैहै मैल ॥13॥

प्रेत सरोवर पन्थ मैं कींचड़ छीलर एक।
तहां इनारू के लगे तट पैं बृक्ष अनेक ॥14॥
लोक नाम है पंक को वृच्छ वेद को नाम।
ताहि देखि मत भूलियो प्रेमी सुजन सुजान ॥15॥
गहवर बन कुल वेद को जहं छायो चहुं ओर।
तहं पहुंचै केहि भांति कोउ जाको मारग घोर ॥16॥
तीछन बिरह दवागि सों भसम करत तरुवृन्द।
प्रेमीजन इत आवहीं न्हान हेत सानन्द ॥17॥
या सरवर की हौं कहा सोभा करौं बखान।
मत्त मुदित मन भौंर जहं करत रहत नित गान ॥18॥
कबहुं होत नहिं भ्रम निसा इक रस सदा प्रकास।
चक्रवाक बिछुरत न जहं रमत एक रस रास ॥19॥
नारद शिव शुक सनक से रहत जहां बहु मीन।
सदा अमृत पीके मगन रहत होत नहिं दीन ॥20॥
नन्ददास, आनन्दघन, सूर, नागरीदास।
कृष्णदास, चैतन्य, हरिवंस, गदाधर, व्यास ॥21॥
इन आदिक जग के जिते प्रेमी परम प्रसंस।
तेई या सर के सदा सोभित सुन्दर हंस ॥22॥
तिन बिनु को इस आवई प्रेम सरोवर न्हान।
फंस्यौ जगत मरजाद में बृथा करत जप ध्यान ॥23॥
अरे बृथा क्यों पचि मरौ ज्ञान गरूर बढ़ाय।
बिना प्रेम फीको सबै लाखन करहु उपाय ॥24॥
प्रेम सकल श्रुति सार है प्रेम सकल स्मृति मूल।
प्रेम पुरान प्रमाण है कोउ न प्रेम के तूल ॥25॥
बृथा नेम, तीरथ, धरम, दान, तपस्या आदि।
कोऊ काम न आवई करत जगत सब बादि ॥26॥
करत देखावन हेत सब जप तप पूजा पाठ।
काम कछु इन सों नहीं यह सब सूखे काठ ॥27॥
बिना प्रेम जिय ऊपजे आनन्द अनुभव नांहि।
ता बिनु सब फीको लगै सुमुझि लखहु जिय मांहि ॥28॥
ज्ञान करम सों औरहू उपजत जिय अभिमान।
दृढ़ निहचै उपजै नहीं बिना प्रेम पहिचान ॥29॥
परम चतुर पुनि रसिकबर कैसोहू नर होय।
बिना प्रेम रूखी लगै बादि चतुरई सोय ॥30॥

जान्यौ वेद पुरान भे सकल गुनन की खानि।
जु पै प्रेम जान्यो नहीं कहा कियो सब जानि ॥31॥
काम क्रोध भय लोभ मद सबन करत लय जौन।
महा मोहहू सों परे प्रेम भाखियत तौन ॥32॥
बिनु गुन जोबन रूप धन बिनु स्वास्थ हित जानि।
शुद्ध कामना तें रहित प्रेम सकल रस खानि ॥33॥
अति सूछम कोमल अतिहि अति पतरो अति दूर।
प्रेम कठिन सब तें सदा नित इक रस भरपूर ॥34॥
जग मैं सब कथनीय है सब कुछ जान्यौ जात।
पै श्री हरि अरु प्रेम यह उभय अकथ अलखात ॥35॥
बन्ध्यौ सकल जग प्रेम में, भयो सकल करि प्रेम।
चलत सकल लहि प्रेम कों बिना प्रेम नहिं छेम ॥36॥
पै पर प्रेम न जान ही जग के ओछे नीच।
प्रेम जानि कछु जानिबो बचत न या जग बीच ॥37॥
दम्पति सुख अरु विषय रस पूजा निष्ठा ध्यान।
इनसों परे बखानिए शुद्ध प्रेम रस खान ॥38॥
जदपि मित्र सुत बन्धु तिय इनमैं सहज सनेह।
पै इन मैं पर प्रेम नहिं गरे परे को एह ॥39॥
एकंगी बिनु कारने इक रस सदा समान।
पियहि गनै सर्वस्व जो सोई प्रेम प्रमान ॥40॥
डरै सदा चाहै न कछु सहै सबै जो होय।
रहै एक रस चाहि कै प्रेम बखानौ सोय ॥41॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, अक्टूबर 1874 ई. में प्रकाशित]

प्रेम तरंग

सन 1877 ई.

भक्त हृदय वारिधि अगम झलकत श्यामहि रंग।
विरह पवन हिल्लोर लहि उमग्यो प्रेम तरंग॥

प्रेम तरंग

खेमटा

राधा जी हो वृषभानु कुमारी।
कोटि कोटि ससि नख पर वारौं कीरति दृग उंजियारी ॥
सब व्रज की रानी सुखदानी जसुदानन्द दुलारी।
'हरीचन्द' के हिये बिराजो मोहन प्रान पियारी ॥1॥

बिरह की पीर सही नहिं जाय।
कहा करौं कछु बस नहिं मेरो कीजे कौन उपाय ॥
हरीचन्द मेरी बांह पकरि कै लीजै आय उठाय ॥2॥

अकेली फूल बिनन मैं आई।
संग नहीं कोउ सखी सहेली फूल देख बिलमाई ॥
या वन के कांटन सों मेरी सारी गइ उरझाई।
'हरीचन्द' पिया आय दया करि अपने हाथ छुड़ाई ॥3॥

खेमटा, सांझी का

श्याम सलोने गात मलिनियां।
बड़े बड़े नैन भौंह दोउ बांकी जोबन सों इठलात।
सुनत नहीं कछु बात कोऊ की राधे के ढिग जात।
'हरीचन्द' कछु जान परै नहिं घूंघट मैं मुसकात ॥4॥

लगत इन फुलवारिन में चोर।
इन सों चौंकत रहियो सजनी छिप रहे चारों ओर ॥
जबहिं निकसि अइहैं गहबर सों लैहैं भूषन छोर।
'हरीचन्द' इनसों बच रहिए ए ठगिया बरजोर ॥5॥

मुख पर तेरे लटूरी लट लटकी।
काली घूंघरवाली प्यारी चुनवारी मेरे जिअ खटकी।
छल्लेदार छबीली लांबी नागिन सब रहिं सिर पटकी।
'हरीचन्द' जंजीरन जकड़ी ये अंखियां अब छुटहिं न अटकी ॥6॥

कैसे नैया लागे मोरी पार खिवैया तोरे रूसे हो।
औंड़ी नदिया नावरि झंझरी जाय परी मंझधार ॥
देइ चुकीं तन मन उतराई छोड़ि चुकीं घर वार।
कहि 'हरिचन्द' चढ़ाइ नेवरिया करो दगा मति यार ॥7॥

सखी बंसी बजी नन्द नन्दन की।
श्री बृन्दाबन की कुंज गलिन में सुखि आई सांवर घन की।
मगन भई गोपी 'हरि' के रस बिसरि गईं सुधि तन मन की ॥8॥

काफी

कठिन भई आजु की रतियां।
पिया परदेस बहुत दिन बीते नहीं आई पतियां ॥
बिरह सतावत दिन दिन हमको कैसे करौं बतियां।
आय मिलौ पिय 'हरीचन्द' तुम लागूं मैं तोरी छतियां ॥9॥

बजन लागी बंसी लाल की।
हैं बरसाने जात रही री सुधि आई बनमाल की ॥
बिसरत नाहिं सखी वह चितवनि सुन्दर स्याम तमाल की।
'हरीचन्द' हंसि कंठ लगायो बिसरि गई सुधि बाल की ॥10॥

झिंझोटी

रंगीले रंग दे मेरी चुनरी।
स्याम रंग से रंग दे चुनरिया 'हरीचन्द' उनरी ॥11॥

होली खेमटा

छबीले आ जा मोरी नगरी हो।
सांवरे रंग मनोहर मूरति बांधे सुरुख पगरी हो ॥
'हरीचन्द' पिय तुम बिनु कैसे रैन कटे सगरी हो ॥12॥

चलो सोय रहो जानी, अंखियां खुमारी से लाल भईं।
सगरी रैन छतिया पर राखा अधरन का रस लीना।
'हरीचन्द' तेरी याद न भूलै ना जानौं कहा कीना ॥13॥

दादरा

सैयां बेदरदी दरद नहिं जानै।
प्रान दिए बदनाम भए पर नेक प्रीति नहिं मानै ॥
'हरीचन्द' अलगरजी प्यारा दया नहीं जिय आनै ॥14॥

सोरठ

जवनियां मोरी मुफुत गई बरबाद।
सपन्यौं मैं सखियो नहिं जान्यौ सैयां सुख सेजिया सवाद ॥
बारी बैस सैयां दूर सिधारे दे गए बिरह बिखाद।
'हरीचन्द' जियरै में रहि गइं लाखन मोरी मुराद ॥15॥

सखी राधा बर कैसा सजीला।
देखो री गोइयां नजर नहिं लागै कैसा खुला सिर चीरा छबीला ॥
वार फेर जल पीयो मेरी सजनी मति देखो भर नैना रंगीला।
'हरीचन्द' मिलि लेहु बलैया अंगुरिन करि चटकारि चुटीला ॥16॥

पीलू

का करौं गोइयां गईं अंखियां।
कैसे छिपाऊं छिपत नहिं सजनी छैला मद माती भईं मधु मखियां ॥
सांवरो रूप देख परबस भईं इन कुल लाज तनिक नहिं रखियां।
'हरीचन्द' बदनाम भई मैं तो ताना मारत सब संग की सखियां ॥17॥

नयन की मत मारो तरवरिया।
मैं तो घायल बिनु चोट भई रे कहर करेजे करिया ॥
काहे को सान देत भौंहन की काजर नयनन भरिया।
'हरीचन्द' बिन मारे मरत हम मत लाओ तीर कटरिया ॥18॥

जिय लेके यार करो मत हांसी।
तुमरी हंसी मरन है मेरो यह कैसी रीत निकासी ॥
आइ मिलौ गल लागौ पिअरवा अंखियां दरसन प्यासी।
'हरीचन्द' नहिं तो जुलफन की मरिहैं दै गल फांसी ॥19॥

ठुमरी, सहाना

आज तोहिं मिल्यो गोरी कुंजन पियरवा।
काहे बोलै झूठे बैन कहे देत तेरे नैन
देखु न बिथुरि रहे मुख पर बरवा॥
अंगिया के बन्द टूटे कर सों कंकन छूटे
अपने पीतम जी के लागी है तू गरवा॥
'हरीचन्द' लाज मेटी गाढ़े भुज भर भेंटी
द्वै द्वै के उपटि भए चार चार हरवा॥20॥

काहू सों न लागें गोरी काहू के नयनवां।
हंसै सुनि सब लोग मिटै ना बिरह सोग
पूछे ते न आवै कछ मुख सों बयनवां।
'हरीचन्द' घबराय विपति कही न जाए
छटै खान पान मिटैं चित के चयनवां॥21॥

ठुमरी

भए हो तुम कैसे ढीक कुंअर कन्हाई।
मटुकी मोरी सिर सों पटकि तापै हंसत हौ ठाढ़े
देखो किन ऐसी बान सिखाई॥
भीर भई देखो ठाढ़ी हंसैं बृजबाल सब लखि मुख मेरे
'हरीचन्द' तुम बृज कैसी यह नई रीति चलाई॥22॥

हां दूर रहो ठाढ़े हो कन्हाई।
जिन पकरो बहियां मेरी हटो लंगर।
करो न लंगराई इठलाई।
काहे इत आओ अरराने रहो दूर।
'हरीचन्द' कैसी रीत चलाई मन भाई॥23॥

ठुमरी, सोरठ

बेपरवाह मोहन मीत, हौं तो पछिताई हो दिल देके।
बरबस आय फंसी इन फन्दन छोड़ सकल कुल रीत॥
कीनी चाल पतंग दीप की मानी तनक न नीत।
'हरीचन्द' कछु हाथ न आयो करि ओछे सो प्रीत॥24॥

तू मिल जा मेरे प्यारे।
मेरे बिन मन मोहन प्यारे व्याकुल प्रान हमारे।
'हरीचन्द' मुखड़ा दिखला जा इन नयनन के तारे ॥25॥

बहियां जिन पकरो मोरी, पिया तुम सांवरे हम गोरी।
तुम तो ढोटा नन्द महर के, हम वृषभानु किशोरी।
'हरीचन्द' तुम कमरी ओढ़ो, हम पै नील पिछौरी ॥26॥

सेजिया जिन आओ मोरी, मैं पइयां लागौं तोरी।
तुम सौतिन घर रात रहत हौ आवत हौ उठ भोरी।
'हरीचन्द' हम सों मत बोलो झूठ कहत क्यों जोरी ॥27॥

झूठी सब बृज की गोरी, ये देत उलहनो जोरी।
मइया मैं नाहीं दधि खायो मैं नहिं मटुकी फोरी।
'हरीचन्द' मोहिं निबल जान ये नाहक लावत चोरी ॥28॥

कलिंगड़ा

आओ रे मोरे रूठे पियरवा, धाय लागो प्यारी के गरवा।
रूठ रहे क्यों मुख सों बोलो, हिय की गाठैं हंस हंस खोलो,
'हरीचन्द' अपनी प्यारी को मान राख राखौ अपने कोरवा ॥29॥

छतियां लेहु लगाय सजन अब मत तरसाओ रे।
तुम बिन तलफत प्रान हमारे, नयनन सों बहें जल की धारें,
बाढ़ी है तन बिरह पीर सूरत दिखलाओ रे।
'हरीचन्द' पिय गिरिवरधारी, पैयां परौं जाओं बलिहारी,
अब जिय नाहीं धरत धीर जलदी उठ धाओ रे ॥30॥

मुकुट लटक भौंहन की मटक मोहन दिखला जा रे।
कुंडजल की लटक, तानन की खटक, मख तनक हंसन, कटि कछनी
कसन, इन दरसन प्यासे नयनन कों प्यारे दरसा जा रे॥
झुक झुक के चलन, कलगी की हलन, नित आय आय कुछ गाय गाय
'हरीचन्द' नाम मेरो लै लै नई तान सुना जा रे ॥31॥

पीलू

सजन तोरी हो मुख देखे की प्रीत।
तुम अपने जोबन मदमाते कठिन बिरह की रीत॥
जहां मिलत तहां हंसि हंसि बोलत गावत रस के गीत।
'हरीचन्द' घर घर के भौंरा तुम मतलब के मीत॥32॥

हिंडोला

जमुना तट कुंजन बीन रहीं सब सखियां फूलों की कलियां।
एक गावत एक ताल बजावत हैं करती मिल के एक रंगरलियां॥
मृगनैनी आय अनेक जुरीं छबि छाय रही बृज की गलियां।
'हरीचन्द' तहां मनमोहन जू सखि बन आए लखि यों अलियां॥33॥

यह कैसी बान तिहारी मेरे प्यारे गिरवरधारी हो।
मारग रोकि रहे सूने बन धेरि लई पर नारी।
करि बरजोरी मोरी बहियां मरोरी, लीनी मटुकीहु सिर सों उतारी।
ऐसी चपलाई कहा करत कन्हाई, देखो लोक लाज सब टारी॥
पइयां परौं दूर रहौ अंग न छुओ हमारो 'हरीचन्द' तोपै बलिहारी॥34॥

सजन छतियां लपटा जा रे।
दोउ नैन जोरि कछु भौंह मोरि झुकि झूमि चूमि सुख दै झकोरि।
अधरन पैं धरके अपनो अधर रस मोहिं पिला जा रे॥
दोउ भुज विशाल गलबांही डाल मेरे गालन पै धर अपनो गाल,
उर छाय अंग संग में सबै रस रंग बरसा जा रे॥
मेरो खोल कंचुकी बंद हंसि के रस लै जोबन को कसि कसि कै,
'हरीचन्द' रंगीली सेजन पै सब कसक मिटा जा रे॥35॥

सजन गलियों बिच आ जा रे।
तेरे बिन बाढ़ी बिरह पीर गलियों बिच आ जा रे॥
तेरे बिना मोहिं नींद न आवे, घर अंगना कुछ नाहिं सुहावे,
इन नयनन सों बहत नीर सूरत दिखला जा रे।
'हरीचन्द' तू मिल जा प्यारे, तेरे बिन तलफल प्रान हमारे,
निकल जाय सब जिय की कसक गरवां लिपटा जा रे॥36॥

सारंग

मेरे प्यारे सों संदेसवा कौन कहै जाय।
जिय की बेदन हरे बचन सुनाय राम
कोई सखी देय मोरी पाती पहुंचाय॥
जाय कै बुलाय लावैं बहुत मनाय राम
मिलै 'हरीचन्द' मोरा जिअरा जुड़ाए ॥37॥

क्यों गले न लगत रसिया वे।
तू तो मेरे दिल बिच बसिया वे॥
तेरी घूंघरवाली अलकैं मेरो तन मन डसिया वे।
'हरीचन्द' नहिं मिलै करै तू सौतिन संग रंग हंसिया वे ॥38॥

मेरे रूठे सैयां हो अरज मेरी सुनि लीजै।
कापै इतनी भरौं चढ़ाओ क्यों न सजा मोहिं दीजै।
'हरीचन्द' मैं तो तुमरी ही जो चाहे सो कीजै ॥39॥

किन बे रुठाया मेरा यार।
कहां गया क्यों छोड़ गया मोहिं तोड़ गया क्यों प्यार॥
बन बन पात पात करि पूंछूं कोई न सुनै पुकार।
'हरीचन्द' गल लगन हौंस में बिरहिनि जरि भई छार ॥40॥

किन बिलमायो मेरो प्रान।
पाटी कर पटकत निसि बीती रोवत भयो है बिहान॥
कहां रैन बसै को मन भाई किन तोर्‍यौ मेरो मान।
'हरीचन्द' बिन बिकल भई कछु करतब परत न जान ॥41॥

भैरवी

सैयां तुम हमसे बोलो ना।
कब के गए कहां रैन गंवाई मत घूंघट पट खोलो ॥42॥

काफी

तेरी छवि मन मानी मेरे प्यारे दिल जानी।
प्रात समय जमुना तट पै हौं जात रही पानी॥

घूंघट उलटि बदन दिसि हेर्‍यौ कहि मीठी बानी।
'हरीचन्द' के चित में चुभि गई सूरति सैलानी ॥43॥

छयल तोरी रे तिरछी नजर मोहिं मारी।
जब तें लगी तनक सुधि नाहीं तन की दसा बिसारी ॥44॥

आजु की रात न जाओ सैयां मोरी बतियां मानो।
तुम सौतन के रात रहत हौ हम सों छल मत ठानो ॥45॥

बल खात गुजरिया बिरह भरी।
धुलि गई सब सुध तन मन की लागी हरि की तिरछी नजरिया।
'हरीचन्द' पिया आय मिलो अब मारत है मोहिं बिरह कटरिया ॥46॥

न जाए मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय।
जगत सब सास ननद मोरी बाजेगी पायल, मोसों सेजरिया।
तुम अपने मद चूर गिनत नहिं मुख मेरो चूमो गर लाय हाय ॥
'हरीचन्द' न ऐसी मोसों बनैगी पिआरे कैसे
लाज छांड़ि दौरि आंऊं तोहि मिलूं धाय ॥47॥

भैरवी

नजरहा छैला रे नजर लगाए चला जाय।
नजर लगी बेहोस भई मैं जिया मोरा अकुलाय ॥
वयाकुल तड़पूं नजर न उतरै हाय न और उपाय।
'हरीचन्द' प्यारे को कोई लाओ जाय मनाय ॥48॥

नशीली आंखों वाले सोए रहो अभी है बड़ी रात।
सगरी रैन मेरे संग जागत रहे करत रंगीली बात ॥
चिड़िया नहीं बोली मेरी चूरी खनकत काहें अकुलात।
'हरीचन्द' मत उठो पियरवा गल लगि करौ रस घात।
नशीली आंखों वाले सोए रहो अभी है बड़ी रात ॥49॥

पीलू

हमसे प्रीति न करना प्यारी हम परदेसी लोगवा।
प्रीत लगाय दूर चलि जैहैं रहि जैहैं जिय सोगवा।
परदेसी की प्रीत बुरी है कठिन बिरह को रोगवा।
'हरीचन्द' फिर दुःख बढ़ि जैहै कटिहै नाहिं बियोगवा ॥50॥

भैरवी

पियारे गर लागो लागो रैन के जागे हो।
रैन के जागे प्यारी रस पागे जिया अनुराग हो ॥
घूमत नैन पीक रंग दागे रसमगे बागे हो।
'हरीचन्द' प्यारी मुख चूमत हंसि गर लागे हो।
पियारे गर लागो लागो रैन के जागे हो ॥51॥

रैन के जागे पिया हो भोरहि मुख दिखलाओ।
रंगीली नसीली छबीली अंखियन अंखियां यार मिलाओ ॥
घूंघरवाली अलकैं बिथुरि रहीं जुलफैं यार बनाओ।
'हरीचन्द' मेरे गलबहियां दै आलस रैन मिटाओ ॥52॥

न जाय मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाए।
बिरह बाढ़यौ पिय बिन कैसे कटै रैन सखी।
मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय ॥
'हरीचन्द' पिया बिनु नींद न आवैं सांपिन सी
लगै सेज हाय मोरी तड़पत रैन बिहाय।
न जाय मोसों सेजरिया चढ़िलो न जाय ॥53॥

पूरबी

अजगुत कीन्ही रे रामा।
लगाय कांची प्रीति गए परदेसवा अजगुत कीन्ही रे रामा।
बारी रे उमिरि मोरी नरम करेजवा विपति नई दीन्ही रे रामा ॥
अजगुत कीन्ही.।
'हरीचन्द' बिन रोइ मरौं रे खबरियौ न लीन्ही रे रामा ॥
अजगुत कीन्ही. ॥54॥

आवन की कछु आज पिया की सुरति लगी मेरी सखियां।
उड़ि उड़ि अंचल जोबन उमगत फरकत मोरी बाईं अंखियां।
'हरीचन्द' पिय कंठ लागि कै होइहैं ये छतियां सुखियां ॥55॥

भैरवी

रैन की हो पिय की खुमारी न टूटैं।
बहुत जगाय हारी मोरी सजनी नींदड़िया नहीं छूटै।

भोर भए गए लगत न प्यारो अधर सुधा नहिं छूटै।
'हरीचन्द' पिया नींद को मातो सेज को सुख नहिं लूटै ॥56॥

शिकारी मियां वे जुलफों का फन्दा न डारो।
जुलफों के फन्दे फंसाय पियरवा नैन बान मत मारो।
पलक कटारिन मार भंवन की मत तरवार निकारो।
'हरीचन्द' मेरे जुलमी घायल छोड़ि न हमैं सिधारौ ॥57॥

पूरबी

अरे प्यारे हम तुम बिनु व्याकुल आ जा रे प्यारे।
तड़पत प्रान हमारे तुम बिन हो दरस दिखला जा रे प्यारे।
'हरीचन्द' तुम बिना तलफ़त गर लपटा जा रे प्यारे।
अरे प्यारे जल बिन मरत मछरियार इनहिं जिला जा रे प्यारे ॥58॥

पूरबी वा गौरी

पिअरवा रे मिलि जा मत तरसाओ।
तुम बिन बयाकुल कल न परत छिन जलदी दरस दिखाओ।
'हरीचन्द' पिया अब न सहौंगी धाइकै गरवां लगाऔ ॥59॥

प्यारी तोरी बांकी रे नजरिया बड़े तोरे नैना रे प्यारी।
प्यारी तोरा रस भरा जोबन जोर मीठे मुख बैना रे प्यारी।
तड़पत छैला काहे छोड़ चली रे प्यारी मार गई सैना रे प्यारी ॥60॥

सांवरे छैला रे नैन की ओट न जाओ।
तुम बिनु देखे मोरे नैना अति ब्याकुल इक छिन मुख न छिपाओ।
सदा रहो मोरे नयनन आगे बंसी मधुर बजाओ।
'हरीचन्द' पिय प्यासी अंखियन संन्दर रूप दिखाओ ॥61॥

ना बोलौ मोसौं मीत पियरवा जानि गए सब लोगवा।
तुमरी प्रीत छिपी न छिपाए, अब निबहैगी बहुत बचाए,
इन दइमारे नयनन पीछे यह भोगन परयो भोगवा।
'हरीचन्द' ब्रज बड़े चवाई, कहत एक की लाख लगाई,
कठिन भयो अब घाट बाट मैं हमरो तुमरो संजोगवा ॥62॥

एरी सखी ऐसी मोहिं परी लचारी रे।
का करौं मीत मोहन सों बोलतहि बनि आयो,
पैयां परत बिनती करत हा हा खात बलि बलि जात गिरिधारी रे।

'हरीचन्द' पियरवा निकट आय मेरे पग सों,
रहत मुकुट छुवाय ऐसे ढीठ लंगरबा सों हारी रे ॥63॥

राग सिंदूरा

भौंरा रे रस के लोभी तेरो का परमान।
तू रस मस्त फिरत फूलन पर करि अपने मुख गान।
इत सों उस डोलत बौरानो किए मधुर मधु पान।
'हरीचन्द' तेरे फंद न भूलूं बात परी पहिचान ॥64॥

खयाल

न जाय मोसौं ऐसो झोंका सहीलो ना जाय।
भुलाओ धीरे डर लगै भारी बलिहारी हो बिहारी,
मोसों ऐसो झोंका सहीलो न जाय ॥
देखो कर धर मेरी छाती धर-धर करै पग दोऊ रहे थहराय हाय।
'हरीचन्द' निपट मैं तो डरि गई प्यारे मोहिं लेहु झट गरवां लगाय ॥
न जाय मोसौं ऐसो झोंका सहीलो ना जाय ॥65॥

सोरठ

नींदड़िया नहिं आवै, मैं कैसी करूं एरी सखियां।
'हरीचन्द' पिय बिनु अति तड़पै खुली रहें दुखियां अंखियां ॥66॥

खयाल

सखियां री अपने सैयां के कारनवां हरवा गूंथि गूंथि लाई।
बाग गई कलियां चुनि लाई रचि रचि माल बनाई।
'हरीचन्द' पिय गल पहिराई हंसि हंसि कंठ लगाई ॥67॥

बिहाग

जागत रहियो वे सोवनवालियो ऐहै कारो चोर।
आधी रात निखंड गए मैं सुन्दर नन्द किशोर।
लूटन लगिहै जोबन जब तब चलिहै कछू न जोर।
'हरीचन्द' रीती करि जैहै तन मन धन सब छोर ॥68॥

असावरी

एरी लाज निछाबर करिहौं जौ पिय मिलिहैं आज।
गहि कर सों कर गर लपटैहौं करिहौं मन को काज॥
लोक संक, एकौ नहिं मानौं सब बाधक पर डरिहौं गाज।
'हरीचन्द' फिर जान न दैहौं जो ऐहैं बृजराज॥69॥

ईमन कल्यान

चतुर केवटवा लाओ नैया।
सांझ भई घर दूर उतरनो नदिया गहिरी मेरो जिय डरपै
अब मैं तेरी लेहुं बलैया।
दैहौं जोबन धन उतराई 'हरीचन्द' रति करि मन भाई।
पैयां लागूं तोरी रे बलदाऊ के भैया।
गर लगो मेरे पीतम सुधर खिवैया॥70॥

पूरबी

प्रानेर बिना की करी रे आमी कोथाय जाई।
आमी की सहिते पारी बिरह जंत्रना भारी।
आहा मरी मरी बिष खाई।
बिरहे ब्याकुल अति जल हीन मीन गति।
हरि बिना आमि ना बचाई॥71॥

बेदरदी बे लड़िबे लगी तैड़े नाल।
बे परवाही वारी जी तू मेरा साहबा असी इत्थों बिरह बिहाल।
चाहनेवाले दी फिकर न तुझ नूं गल्लों दा ज्वाब ना स्वाल।
'हरीचन्द' ततबीर ना सुझदी आशक बैतुल माल॥72॥

बिहाग वा कलिंगड़ा

मैं तो राह देखत ही खड़ी रह गई हाय बीत गई सब रतियां।
पिया सांझ के कह गए भयो भार, नहिं आए मदन को बाढ़्यो जोर,
'हरीचन्द' रही पछिताय सीस धुनि करिकै बजर सी छतियां॥73॥

पिया बिनु मोहिं जारत हाय सखी देखो कैसी खुली उजियारियां।
चन्दातन लावत बिरह लाय, कर पाटी पटकत करत हाय,
दुःख बाढ़्यौ सखी नहिं पास कोऊ ब्याकुल बिरहिन सुकुमारियां।

तलफत जल बिनु मछरी सी सेज, रहि जात पकरि कार सों करेज,
'हरीचन्द' पिया की याद परै जब बातैं प्यारा प्यारियां ॥74॥

काफी पीलू

क्यौं फकीर बनि आया बे, मेरे बारे जोगी।
नई बैस कोमल अंगन पर काहें भभूत रमाया बे, मेरे बारे जोगी।
को वे मात पिता तेरे जागी जिन तोहिं नाहिं मनाया बे।
कांचे जिय कहु काके कारन प्यारे जोग कमाया बे, मेरे बारे जोगी।
बड़े बड़े नैन छके मद रंग सों मुख पर लट लटकाया बे।
'हरीचन्द' बरसाने में चल घर घर अलख जगाया बे, मेरे बारे जोगी ॥75॥

गौरी

मोहन मीत हो मधुबनियां।
मतवारो प्यारो रसवादी रसिया छैल चिकनियां॥
बटपारो लंगर लड़वारौ भरन देत नहिं पनियां।
घाट बाट रोकत 'हरीचन्दहि' नयो बन्यो दधि दनियां ॥76॥

मोहन प्यारो हो नन्द गैयां।
नित नई अट पट चाल चलावत देखी सुनी जो नैया॥
लकुट लिए रोकत मग जुवतिन मानत परेहु न पैयां।
'हरीचन्द' छैला ब्रज जीवन वाको कोउ न गोसैयां ॥77॥

मोहन बांको हो गोकुलिया।
चलन न देत पन्थ रोकत गहि चंचल अंचल चुलिया।
नैन नचावत दधि मटुकिन की करिकै ठाला ठुलिया।
'हरीचन्द' टोना कछु जानत जासों सब बृज भुलिया ॥78॥

लावनी

बिना उसके जल्वा के दिखाती कोई परी या हूर नहीं।
सिवा यार के, दूसरे का इस दुनिया में नूर नहीं॥
जहां में देखो जिसे खूबरू वहां हुस्न उसका समझो।
झलक उसी की सभी माशूकों में यारो मानो॥
जहां कोई खुशगुलू मिलै तुम वहां उसी का बोल सुनो।
जुल्फों को भी उसी का पेंच समझ कर आके फंसो॥
नशीली आंखैं वहां नहीं हैं जहां मेरा मखमूर नहीं।
सिवा यार के.॥1॥

जहां पै देखो नाज गजब का उसके सअ नखरे जानो।
देख करिश्मा, उसी सीगें में उसको गरदानो॥
जहां हा भोलापन तुम उस भोले को वहां पै पहिचानो।
जुल्म जो देखो, तो उस जालिम की बेरहमी मानो॥
बिना उसके इस शीशए दिल को करता कोई चूर नहीं।
सिवा यार के. ॥2॥

बिना मिले उस मह के झलक माशूकपना आता ही नहीं।
बगैर उसके, निवानी शक्ल कोई पाता ही नहीं॥
मजाल क्या है दिल छीनै उस बिना दिया जाता ही नहीं।
उसको छोड़ कर, दूसरा आंखों को भाता ही नहीं॥
जितने खूबरू जहां में हैं वो कोई उससे दूर नहीं।
सिवा यार के. ॥3॥

वही मेरा माशूक झलक इन बुतों में भी दिखलाता है।
वही इश्क में, आशिकों को हर तरह फंसाता है॥
कहीं मेहरबां बनता है और कहीं जुल्म फैलाता है।
गरज कि हर जा, मुझे वो यार ही नजर आता है॥
'हरीचन्द' जो और देखते वो आशिक भरपूर नहीं।
सिवा यार के. ॥4॥79॥

करि निठुर श्याम सों नेह सखी पछताई।
उस निरमोही की प्रीति काम नहिं आई॥
उन पहिले आकर हमसे आंख लगाई।
करि हाव भाव बहु भांति प्रीति दिखलाई॥
ले नाम हमारा बंसी मधुर बजाई।
अब हमें छोड़ के दूर बसे जदुराई॥
कुबरी ने मोहा रहे वहीं बिलमाई।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई॥1॥

हमने जिसके हित लोक लाज सब छोड़ी।
सब छोड़ रहे एक प्रीत उसी से जोड़ी॥
रही लोक बेद घर बाहर से मुख मोड़ी।
पर उन नहिं मानी सो तिनका सी तोड़ी॥

इक हाथ लगी मेरे जग बीच हंसाई।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई ॥2॥

हम उन बिन सखियां बन बन ढूंढ़त डोलै।
पिय ब्यारे प्यारे मुख से सब छिन बोलैं॥
जिन कुंजन में हरि हंसि हंसि करी कलोलैं।
वहां ब्याकुल हो हम मूंद मूंद दृग खोलैं।
दै दगा जुदा भए मोहन बिपति बढ़ाई।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई ॥3॥

क्या करैं कोई तदबीर न और दिखाती।
दिन रोते कटता रात जागते जाती॥
बिरहा से सब छिन हाय दहकती छाती।
कोई उनसे जा यह मेरी बिथा सुनाती॥
'हरीचन्द' उपाय न चलै रही पछताई।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई ॥4॥80॥

तुम सुनो सहेली संग की सखी सयानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी॥
एक दिन मैं अंधेरी रात रही घर सोई।
पलैगों पै इकली और पास नहिं कोई॥
हरि आय अचानक सोए पास भय खोई।
मुख चूम कस्यो मेरे भुज सों भुज सोई॥
मैं चौंकि उठी लियो गल लगाय सुखदानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥1॥

एक सांझ अकेली मैं थी गलियों आती।
लिये अंचल नीचे घर हित दीआ बाती।
आए इतने में सखि मेरे बाल संघाती।
उन दीप बुझाए लगाय लई मोहिं छाती॥
मैं औचक रह गई कियो जोई मनमानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥2॥

एक दिन मेरे घर जोगी बन कर आए।
सिर जटा बढ़ाए अंग भभूत लगाए॥

चड़ सिढ़ी नाम लै हर को अलख जगाए।
मैं भिच्छा ले गई तब मुख चूमि लुभाए।
बोले भिच्छा थी मुझे यही मेरी रानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥3॥

जब मिले जहां हंसि लीनों चित्त चुराई।
मुख चूमि भए बलिहारी, कंठ रहे लाई॥
बिनती कर बोले सदा प्रीति दिखलाई।
सपने में भी नहिं देखी कभी रुखाई।
रहे सदा हाथ पर लिए मुझे दिल जानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥4॥

एक दिन कुंजों में साथ दूसरी नारी।
अपने मुख बैठे थे मिलकर गिरिधारी॥
मैं गई तो सकुचे झट यह बुद्धि बिचारी।
बोले यह आई तुमहिं मिलवन प्यारी॥
तुम घर भेजन को बिनती करि यहि आनी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥5॥

मेरे सुख ने पिय में सब दिन सुख माना।
मुझे अपना जीवन प्रान सदा कर जाना॥
मेरे हित सब सखियों का सहते ताना।
मुरझाए जो मुख मेरा कुछ मुरझाना॥
गुन लाख एक मुख कैसे बोलौं बानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥6॥

वह बन बन बिरहन कुंज कुंजतरु पातैं।
वह गल भुज डालत प्रीत रीति की घातैं॥
वह चन्द चांदनी और निराली रातैं।
एक एक की सौ सौ जी में खटकती बातैं॥
'हरीचन्द' बिना भई रो रो हाय दिवानी।
पिय प्यारे की मैं कहं लौं कहौं कहानी ॥7॥81॥

दुःख किस्से कहूं कोई साथ न सखी सहेली।
मुझे छोड़ गए मनमोहन हाय अकेली॥

मैं पिय बिनु तड़पूं हाय पास नहिं कोई।
रही सपने की सम्पत सी सब सुख खोई॥
जो मैं पिय बिनु नहिं कभी पलंग पर सोई।
सोई आज सेज सूनी लखि दुःख सों रोई॥
जंगल सी मुझको लगती हाय हवेली।
मुझे छोड़ गए मनमोहन हाय अकेली॥1॥

मेरे बाल सनेही मुझको छोड़ सिधारे।
तड़पूं ब्याकुल मैं बिन बृज के रखवारे॥
कहां बिलमि रहे किन मोहे पीय हमारे।
नहिं खबर मिली भए निपट निठुर पिय प्यारे॥
यह बिरह बिथा नहिं जाती है अब झेली।
मुझे छोड़ गए मनमोहन हाय अकेली॥2॥

मेरा बाला जोबन पड़ी बिपति सिर भारी।
दिन कैसे काटूं भई उमर की ख्वारी॥
यह नई आपदा सिर से जात न टारी।
कहां गए हाय मुझे छोड़ पिया गिरधारी॥
भई उन बिन मैं मुरझाए जली ज्यों बेली।
मुझे छोड़ गए मनमोहन हाय अकेली॥3॥

गए सुरत भूल नहीं पाती भी भिजवाई।
करि याद पिय की हाए आंख भरि आई॥
सांपिन सी सेज घर बन सों परत दिखाई।
जीना भया भारी दामोदर दुखदाई।
'हरीचन्द' बिना भई जोगिन दे गल सेली।
मुझे छोड़ गए मनमोहन हाय अकेली॥4॥82॥

वही तुम्हें जाने प्यारे जिसको तुम आप ही बतलाओ।
दिखे वही बस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ॥
क्या मजाल है तेरे नूर की तरफ आंख कोई खोले।
क्या समझे कोई, जो इस झगड़े के बीच आकर बोले॥
खयाल के बाहर की बातें भला कोई क्योंकर तोले।
ताकत क्या है, मुअम्मा तेरा कोई हल कर जो ले॥

कहां खाक यह कहां पाक तुम भला ध्यान में क्यों आओ।
देखे वही बस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥1॥

गरचे आज तक तेरी जुस्तजू खासो आम सब किया किये।
लिखी किताबें हजारों लोगों ने तेरे ही लिये॥
बड़े बड़े झगड़े में पड़े हर शख्स जान रहते थे दिये॥
उम्र गुजारी, रहे गल्तां पेचां जब तक कि जिये॥
परम तुम हौ वह शै कि किसी के हाथ कभी क्यों कर आओ।
देखे वही बस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥2॥

पहिले तो लाखों में कोई बिरला ही झुकता है इधर।
अपने ध्यान में, रहा वह चूर झुका भी कोई अगर॥
पास छोड़कर मजहब का खोजा न किसी ने तुम्हे मगर।
तुमको हाजिर, न पाया कभी किसी ने हर जा पर॥
दूर भागते फिरो तो कोई कहां से पाए बतलाओ।
देखे वही बस जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥3॥

कोई छांट कर ज्ञान फूल के ज्ञानी जी कहलाते हैं।
कोई आप ही, ब्रह्मा बन करके भूले जाते हैं॥
मिला अलग निरगुन व सगुन कोई तेरा भेद बताते हैं।
गरज की तुझको, ढूंढ़ते हैं सब पर नहिं पाते हैं॥
'हरीचन्द' अपनों के सिवा तुम नजर किसी के क्यों आओ।
देखे वही बस, जिसे तुम खुद अपने को दिखलाओ ॥4॥83॥

चाहे कुछ हो जाय उम्र भर तुझको प्यारे चाहैंगे।
सहेंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे॥
तेरी नजर की तरह फिरैगी कभी न मेरी यार नजर।
अब तो यों ही, निभैगी यों ही जिन्दगी होगी बसर॥
लाख उठाओ कौन उठे है अब न छुटैगा तेरा दर।
जो गुजरैगी, सहैंगे करेंगे यों ही यार गुजर॥
करोगे जो जो जुल्म न उनको दिलबर कभी उलाहैंगे।
सहैंगे सब कुछ मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे ॥1॥

आह करैंगे तरसैंगे गम खाएंगे चिल्लाएंगे।
दीन व ईमां बिगाड़ेंगे घर बार डुबाएंगे॥

फिरैगे दर दर बे इज्जत हो आवारे कहलाएंगे।
रोएंगे हम हाल कह औरों को भी रुलाएंगे॥
हाय हाय का सिर पीटैगे तड़पैंगे कि कराहैगे।
सहैंगे सब कुछ, मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे॥2॥

रुख फेरो मत मिलो देखने को भी दूर से तरसाओ।
इधर न देखो, रकीबों के घर में प्यारे जाओ॥
गाली दो कोसो झिड़की दो खफा हो घर से निकलवाओ।
कत्ल करो या नीम बिस्मिल कर प्यारे तड़पाओ॥
जितना करोगे जुल्म हम उतना उलटा तुम्हैं सराहैंगे।
सहैंगे सब कुछ हैं मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे॥3॥

होके तुम्हारे कहां जाएं अब इसी शर्म से मरते हैं।
अब तो यों ही, जिन्दगी के बाकी दिन भरते हैं॥
मिलो न तुम या कत्ल करो मरने से नहीं हम डरते हैं।
मिलेंगे तुमको, बाद मरने के कौल यह करते हैं॥
'हरीचन्द' दो दिन के लिए घबरा के न दिल को डाहैंगे।
सहैंगे सब कुछ हैं मुहब्बत दम तक यार निबाहैंगे॥4॥84॥

बाल या दिल के बवाल दिलबर ने मुखड़े पर डाले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥
छल्लेदार छबीले लम्बे-लम्बे यह छहराते हैं।
वल खा कर, फंद में अपने दिल को फंसाते हैं॥
चिलकदार चुनवारे गिडुरी से होकर रह जाते हैं।
हिल हिल करके कभी यह अपनी तरफ बुलाते हैं॥
पेचदार खम खाए उलझे सुलझे घूंघरवाले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥1॥

कहूं इश्क पेचां आशिक को पेच में भी यह लाते हैं।
फांसी भी हैं, मुसाफिर को बेतरह फंसाते हैं॥
जाल हैं यह जंजाल से सबको जाल में करके जाते हैं।
जादू की यह, गिरह हैं दिलको अजब भुलाते हैं॥
काले काले राजब निकाले पाले क्या यह काले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥2॥

देख इनको तलवार ने खम दम म्यान में मुंह को छिपा दिया।
भौरों ने भी, न इन सा हो के गूंजना शुरू किया॥
हजार सिर बुलबुल न पटका हुई न ऐसी सांवलिया।
सिवार ने भी शर्म से पानी में मुंह डुबा लिया॥
मुश्क से खुशबू में रेशम से चमक में ये चौकाले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥3॥

बंसी हैं दिल के शिकार को लालच देके फंसाने के।
छींके हैं यह, लटकते दोनों दिल लटकाने के॥
आंकुस की हैं नोक जिगर से खींच के दिल को लाने के।
जंजीरों से यह बढ़ कर दिल को कैद कर जाने के॥
दिल के दुखाने को बीछू के डंक से भी जहरीले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥4॥

तुम्हैं नूर की शमा कहूं तो धुआं इन्हैं कहना है बजा।
रुखसारों पर यः दोनों चंवर ढला करते हैं सदा॥
यह वह उक्दा है जो किसी से अब तक प्यारे नहीं खुला।
कहूं मुअम्मा, तो इसमें नहीं बाल भर फर्क जरा॥
दिल के पहुंचने को गालों तक कमंद दोनों डाले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥5॥

इनमें जो आकर फंसा वह फिर न उम्र भर कभी छुटा।
बला है बस ये, हमेशा इनसे बचाए दिलको ख़ुदा॥
जन्त्र मन्त्र कुछ लगा न उसको जिसको इन सांपों ने डसा।
'हरीचन्द' के, जुल्फ में दिल अब तो बेतरह फंसा॥
भूल भूलैयां से उलझे चिकने महीन चमकीले हैं।
जुल्फ के फन्दे तुम्हारे सबसे यार निराले हैं॥6॥85॥

आंखों में लाल डोरे शराब के बदले।
है जुल्फ छुटीं रूख पर निकाब के बदले॥
नित नया जुल्म करना सवाब के बदले।
झिड़की देना हर दम जवाब के बदले॥
त्योरी में बल बालों के ताव के बदले।
खून में रंगना कपड़ा शहाव के बदले॥
सब ढंग आज-कल हैं जनाब के बदले।
है जुल्फ छुटीं रुख पर निकाब के बदले॥1॥

पीते हैं जिगर का खून आब के बदले।
खाते हैं सदा हम गम कबाब के बदले॥
खुशबू तेरी सूंघी गुलाब के बदले।
लेते हैं नाम तेरा किताब के बदले॥
तब रूपोशी यह किस हिसाब के बदले।
है जुल्फ छुटीं रुख पर निकाव के बदले॥2॥

ह्यां सदा जईफी है शबाव के बदले।
मस्तों से मिले बस शेखो शाब के बदले॥
रातों जो जागते रहे ख्वाब के बदले।
नागिन जिस पर अब हैं सहाब के बदले॥
मुंह तेरा देखा माहताब के बदले।
है जुल्फ छुटीं रुख पर निकाब के बदले॥3॥

दिन कभी न इस खान खराब के बदले।
मरना बेहतर इस इजतिराब के बदले॥
हो 'हरीचन्द' पर खुश अताब के बदले।
करे अब तो रहम अजाब के बदले॥
क्यों नए चोचले हैं हिजाब के बदले।
है जुल्फ छुटीं रुख पर निकाब के बदले॥4॥86॥

सपने में बनाई हुई

मोहिं छोड़ि प्रान प्रिय कहुं अनत अनुरागे।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुःख लागे॥
रहे एक दिन वे जो हरि ही के संग जाते।
बृन्दाबन, कुंजन रमत फिरत मदमाते॥
दिन रैन श्याम सुख मेरे ही संग पाते।
मुझे देखे बिन इक छन प्यारे अकुलाते॥
सोइ गोपीपति कुबरी के रस पागे।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुःख लागे॥1॥

कहां गईं श्यामा की वे मनहरनी बातैं।
वह हंसि हंसि कंठ लगावनि करि रस घातैं॥

वह जमुना तट नव कुंज कुंज द्रुम पातैं।
सपने सी भईं अब वे बिहरन की रातैं॥
सहि सकत न कठिन बियोग अगिन तन दागे।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुःख लागे॥2॥

पहिले तो सुन्दर मोहन प्रीति बढ़ाई।
सब ही बिधि प्यारे अपनी करि अपनाई॥
सुख दै बहु भांतिन नित नव लाड़ लड़ाई।
अब तोड़ि प्रीति मोहिं छोड़ि गए ब्रजराई॥
संजोग रैन बीतन बियोग दुःख जागे।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुःख लागे॥3॥

क्या करूं सखी कुछ और उपाय बताओ।
मेरे पीतम प्यारे मुझसे आन मिलाओ॥
जिय लगी बिरह की भारी अगिन बुझाओ।
मैं बुरी मौत मर रही मिलाइ जिलाओ॥
'हरीचन्द' श्याम संग जीवन सुख सब भागे।
अब उन बिनु छिन छिन प्रान दहन दुःख लागे॥4॥87॥

जब तक फंसे थे इसमें तब तक दुःख पाया औ बहुत रोए।
मुंह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥
बिना बात इसमें फंस कर रंज सहा हैरान रहे।
मजा बिगाड़ा, अपना नाहक ही की परेशान रहे॥
इधर उधर झगड़े में पड़े फिरते बस सर गरदान रहे।
अपना खोकर, कहाते बेवकूफो नादान रहे॥
बोझ फिक्र का नाहक को फिरते थे गरदन पर ढोए।
मुंह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥1॥

मतलब की दुनिया है कोई काम नहीं कुछ आता हैं।
अपने हित को, मुहब्बत सब से सभी बढ़ाता है॥
कोई आज औ कल कोई अब छोड़ के आखिर जाता है।
गरज कि अपनी गरज को सभी मोह फैलाता है॥
जब तक इसे जमा समझे थे तब तक थे सब कुछ खोए।
मुंह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥2॥

जिसको अमृत समझे थे हम वह तो जहर हलाहल था।
मीठा जिसको जानते थे वह इनारू का फल था॥
जिसको सुख का घर समझे थे वह तो दुःख का जंगल था।
जिनको सच्चा समझते थे वह झूठों का दल था॥
जीवन फल की आशा में उलटे हमने थे बिष बोए।
मुंह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥3॥

जहां देखो वहीं दगा और फरेब और मक्कारी है।
दुःख ही दुःख से, बनाई यह सब दुनिया सारी है॥
आदि मध्य औ अंत एक रस दुःख ही इसमें जारी है।
कृष्ण भजन बिनु, और जो कुछ है वह ख्वारी है।
'हरीचन्द' भव पंक छुटै नहिं बिना भजन रस के धोए।
मुंह काला कर, बखेड़े का हम भी सुख से सोए॥4॥88॥

पिय प्राननाथ मनमोहन सुन्दर प्यारे।
छिनहूं मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे॥
घनश्याम गोप गोपी पति गोकुल राई।
निज प्रेमीजन हित नित नित नव सुखदाई॥
बृन्दाबन रच्छक ब्रज सरबस बलभाई।
प्रानहुं ते प्यारे प्रियतम मीत कन्हाई॥
श्री राधानायक जसुदानन्द दुलारे।
छिनहूं मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे॥1॥

तुव दरसन बिन तन रोम रोम दुःख पागे।
तुव सुमिरन बिनु यह जीवन बिष सम लागे॥
तुमरे संयोग बिनु तन बियोग दुःख दागे।
अकुलात प्रान जब कठिन मदन मन जागे॥
मम दुःख जीवन के तुम हो इक रखवारे।
छिनहूं मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे॥2॥

तुमहीं मम जीवन के अवलम्ब कन्हाई।
तुम बिन सब सुख के साज परम दुखदाई॥
तुव देखे ही सुख होत न और उपाई।
तुमरे बिनु सब जग सूनो परत लखाई॥

हे जीवनधन मेरे नैनों के तारे।
छिनहूं मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे ॥3॥

तुमरे बिनु इकछन कोटि कलप सम भारी।
तुमरे बिनु स्वरगहु महा नरक दुखकारी ॥
तुमरे संग बनहू घर सों बढ़ि बनवारी।
हमरे तौ सब कुछ तुमही हौ गिरधारी ॥
'हरीचन्द' हमारे राखौ मान दुलारे।
छिनहूं मत मेरे होहु दृगन सों न्यारे ॥4॥89॥

बरवा

(धुन–'मोरि तो जीवन राधे' इस चाल पर)

मोहन दरस दिखा जा।
ब्याकुल अति प्रान प्यारे दरस दिखा जा ॥
बिछुरी मैं जनम जनम की फिरी सब जग छान।
अबकी न छोड़ों प्यारे यही राखो है ठान ॥
'हरीचन्द' बिलम न कीजै दीजै दरसम दान ॥90॥

दरस मोहिं दीजै हो पिय प्रान।
दरस दीजै अधर पीजै कीजै परस सुजान ॥
तुम बिनु व्याकुल धीर न आवत लीजै अरज यह मान।
'हरीचन्द' मोहिं जानि आपनी करिए जीवन दान ॥91॥

पुरबी रेखता

हमैं दरसन दिखा जाओ हमारे प्रान के प्यारे।
तेरे दरसन को ऐ प्यारे तरस रहीं आंख बरसों से ॥
इन्हैं आकर के समझाओ हमारे आंखों के तारे ॥
सिथिल भई हाय यह काया है जीवन ओठ पर आया।
भला अब तो करो माया मेरे प्रानों के रखवारे ॥
अरज 'हरीचन्द' की मानो लड़कपन अब भी मत ठानो।
बचा लो प्रान दरसन दो अजी ब्रजराज के बारे ॥92॥

ठुमरी

पियारे सैयां कौन देस रहे रूसि जोबना को सब रंग चूसि।
'हरीचन्द' भए निठुर श्याम अब पहिले तो मन मूसि ॥93॥

पियारे पिया कौन देश रहे छाय।
का पर रहे बिलमाय।
मेरी सुध बिसराय प्रेम सब जिय सों दूर भुलाय।
'हरीचन्द' पिय निठुर बसे कित जोगिन हमहि बनाय ॥94॥

पिया प्यारे तोहि बिनु रह्यो नहिं जाय।
कौन सो करौं मैं उपाय।
कहत 'चन्द्रिका' धाइ मिलो अब लेहु गरे लपटाय ॥95॥

आओ पिया प्यारे गरे लगि जाओ।
काहें जिअ तरसाओ, कहत 'चन्द्रिका' धाइ मिलो
अब जिय की जरनि जुड़ाओ ॥96॥

खेमटा

अब ना आओ पिया मोरि सेजरिया।
जात विदेस छोड़ि तुम हमकों हनि हनि हिय मैं बिरह कटरिया।
कहत 'चन्द्रिका' हरीचन्द पिय जाओ वहीं जहां लाए नजरिया ॥97॥

रेखता

मोहन पिय प्यारे टुक मेरे ढिग आव।
बारी गई सूरत के बदन तौ दिखाव।
तरस गए अंग अंग गर मैं लपटाव।
तेरी मैं चेरी मुझे मरत सों जिलाव।
वही रूप वही अदा दीने निज घाव।
प्यारे! 'हरीचन्दहिं' फिर आज भी दरसाव ॥98॥

दिलदार यार प्यारे गलियों में मेरे आ जा।
आंखें तरस रही हैं सूरत इन्हें दिखा जा।
चेरी हूं तेरी प्यारे इतना तो मत सता रे।
आंखों ही दुख सहा रे टुक अब तो रहम खा जा ॥
तेरे ही हेत मोहन छानी है खाक बन बन।
दुख झेले सर पः अनगन अब तो गले लगा जा ॥
मन को रहूं मैं मारे कब तक बता दे प्यारे।
सूखे बिरह में तारे पानी इन्हें पिला जा ॥

सब लोक लाज खोई दिन रैन बैठ रोई।
जिसका कहीं न कोई उसका तो जी बचा जा ॥
मुझको न यों भुलाओं कुछ शर्म जी में लाओ।
अपनों को मत सताओ ए प्रान प्यारे राजा ॥
'हरीचन्द' नाम प्यारी दासी है जो तुम्हारी।
मरती है वह बिचारी आकर उसे जिला जा ॥99॥

बंसी बजा के हम को बुलाना नहीं अच्छा।
घर बार को यों हमसे छुड़ाना नहीं अच्छा ॥
घर बार छुड़ाते हो तो फिर हमको ने छोड़ो।
अपनों को यों दामन से छुड़ाना नहीं अच्छा ॥
करना किसी पै रहम इक अदना सी बात पर।
मुतलक किसी प ध्यान न लाना नहीं अच्छा ॥
हम तो उसी में खुश हैं खुशी हो जो तुम्हारी।
फिर हम से छिपा कर कहीं जाना नहीं अच्छा ॥
गाओ जो चाहो बंसी में हैं राग हजारों।
रट नाम की मेरे ही लगाना नहीं अच्छा ॥
मिल जाएंगे हम कुंज में मौका जो मिलेगा।
गलियों में हमारे सदा आना नहीं अच्छा ॥
'हरीचन्द' तुम्हारे ही हैं हम तो सभी तरह।
यों अपने गुलामों को सताना नहीं अच्छा ॥100॥

अथ बंगला गान

प्रानप्रिब शशि मुखि बिदाय दाओ आमारे।
शून्य देह लोप जाबो प्रान दिए तोमारे ॥
करि हे बिनय हइया सदय आमारे बिदायदाओ जाई देशान्तरे ॥1॥

प्राननाथ निदय हय बिदाय चेओ ना।
तोमा बिन प्रान, नाहिं रबे प्रान ॥
किसे पाब त्रान आमाय बलो ना।
आमि हे अबला, ताहा ते सरला, बिरह ज्वाला, प्राने सबे ना ॥2॥

जाई जाई करे नाथ दिओ नाहे जातना।
तोमार विच्छेदे ए जीवन रबे ना ॥

पुनः ए नयन शशांक बदन करिबे दर्शन कबे ओहे बलो ना।
तोमारे ना हेरे प्रान जेकी करे कि कब तोमारे, तुमि किए भावना ॥3॥

प्राननाथ बिदेशे त जेते दिबना।
जाबे जाओ कान्त किन्तु हे नितान्त, आमारे एकांत, आर कान्त पाबे।
तोमार विहन, ए छार जीवन, ओ प्रानधन आर रबे ना ॥4॥

आर जातना प्रान सहे ना।
सदा मन उचाटन, झरिछे दु नयन,
कान्त बुझिए जीवन, आमार आर रबे ना।
हाए एमन समय, कोथा ओहे रसमय,
हइया अति सदय, आछ प्रान बलो ना ॥5॥

प्राननाथ देखा दाओ आसि अबलाय।
जे दुःख पेतेछि आमि, मन जाने आर,
आमि जानि आरि जानेन ईश।
जिनि के मने आमि जानाब तोमाय ॥6॥

आमार जे दशा माथ आसिया हे देख ना।
'हरिश्चन्द्र' नाथ जार, केन हेन दशा तार,
बल ओहे गुन मनि, आमार हे बलो ना ॥
सदा मन उचाटन, दहिते छे जीवन मन,
असह्य 'चन्द्रिका' जीवने सहेना यातना ॥7॥

कोथाय रहिल सखि से गुन मान।
बिच्छेद यातना, आर जे सहेना। कि करि बल न ओ प्रान सजनी।
केमने एखन, धरिब जीवन। से कान्त विहन बल ओ धनी ॥8॥

हाय विधि एत मोरे केन निर्दय।
अमूल्य रतन करिया अर्पन, केन गो हरन ताहारे कराय।
मम प्रान-धन, हृदय रतन रमनी मोहन कोथाय गो जाय ॥9॥

तुमि कर के तोमार कारे बल रे मन आपन।
मिछा ए संसार माया जुड़े आछे त्रिभुवन ॥

दारा सुल परिवार संगे के जाबे तोमार।
जखन तुमि मुंदिबे दु नयन ॥10॥

ओरे हरि दयामय!
ए भव जंत्रना, आर जे सहे ना।
करिया करुना, उधारो आमाय ॥11॥

ओहे नाथ करुनामय!
प्रभु हरि दयामय, दया करो ए जनाय,
नामे ना कलंक रय उद्धारो तराय ॥
आमि अति मूढ़ मति, न जानी भक्ति स्तुति,
कि हबे आमार गति, बल गो आमाय ॥12॥

मन केन रे भाव एत।
ओइ जे दिवा निशि भावछ बसी, जेन बुधि हुए छे हत ॥
एतेक, भावना, किसेर कारन, हबे बूझि पागलेर मत ॥13॥

आमार नाथ बड़ दयामय।
करुना आकर दयार सागर दयामय नाम जगत भीतर।
एक मुखे गुन वर्णना जे भार, कहि छे 'चन्द्रिका' भाविया हृदये ॥14॥

कलिंगड़ा एक ताला

ओ प्रान नयन कोने चाईले पर क्षति कि आछे।
आमार केंदे सोहाग जेंचे मान तोमार काछे ॥
जथा इच्छा तथा जावो, सदत हृदय रओ।
तोमार विहन कओ, आमार के आछे ॥15॥

सिन्धु धीसा तिताला

ए सोहाग आर आमार काज नाई।
सदत हृदय जे ज्वाला पाई ॥
हृदय दहन जायगो जीवन।
कि करि एखन बल गोसाईं ॥16॥

प्राननाथ कि बले छिले।
ए दारुण ज्वाला हृदये केन गो दिले॥
हृदय माझे त राखिब तोमाय।
सदत बलिते नाथ हे अमाय॥
से सब कथन रहिल कोथाय।
भेवे देख प्रान कि करिले॥17॥

कोथाय रहिले प्रान एमन बरखा ते।
देख घन, बरिषे नयन, अबलारे भिजाते।
बल ओरे प्रान तोमाय कोन जन, शिखाले एमन आमारे कांदते॥
चन्द्रिका जे बले नाथ कि करिले अबला बधिले बुझि हे प्रानेते॥18॥

आदरे आदरे भालो तो छिले।
जे तोमार अनुगत तार कि करिले॥
नव जलधर तुमि तृषित चातकि आमी,
ओहे प्राननाथ कोथा बारि बिन्दू बरषिले।
प्रान प्रिय प्रान धन, बल जातना एमन,
'चन्द्रिका' हृदये केन गो दिले॥19॥

ओहे हरि जगतेर पति।
दया कर दयामय आमि दीन हीन अति॥
लाए छे शरण चरणे जे जन, रुष्ट कि कारण ताहार प्रति।
नाम दयाकर जगत भीतर कि हबे आमार बल गो गति॥20॥

आशाय आशाय भालो जातना दिले।
जाओ तथा गुन मनि जथा निशि पोहाईले॥
से धनि तोमार धनि तुमि तार प्रेमे रिणि,
बांधा आछ गुनमनी तबे हेथा केन आसिले॥21॥

तोमाय भुलिब केमने।
हृदय अंकित छबि अति यतने॥
दिवा निशि मुख देखि हृदय आदरे राखि,
प्रान सदा एई बासना मने॥22॥

एक बार भाव ओरे मन।
शेपेर से दिन तव निकट एखन ॥
दिन दिन हीन बल मन हएछे दुर्बल,
रोगेर अति प्रबल भए भीत हएछे जीवन ॥23॥

एतेक जीवने केन मरन बासना।
बुझि कपालेर दोपे बिधिर विडम्बना ॥
केन रे अबोध मन कर कामना एमन,
से दुःख तव कारन बुझि ताहा जान ना ॥24॥

एखनि एमन हबे स्वपने छिल ना ज्ञान।
ना होते मिलने सुखि आगे ते जाइवे प्रान ॥
जन्म जन्मान्तरे जेन पाई प्राननाथ हेन।
बिधिर काछे एई मोर शेष अकिंचन ॥25॥

किछु सुख होलो जीवने।
प्राननाथ भुलाएछे सेई नवीने ॥
आमार अभाव काले बिरह बेदना ज्वाले,
आघात हबे ना तार कोमल हृदय
स्थाने एई भेवे सुखमने ॥26॥

नव प्रेमे प्रेमी होते कर वासना।
बल पल ओरे प्रान मोरे बल ना ॥
एई प्रेमे प्रेमी होले मम चिंता जाबे चले,
ईहा तेई जावे मोर हृदि बेदना ॥
तोमाय पाब जन्मान्तरे एई आशा हृदे कोरे।
प्रान जाबे आर जाबे हृदि जातना ॥27॥

सेई जे आमाय तोमाय छिल कथा मने आछे कि ना बल।
सेई जे छिल जत भाल बासा मने आगे कि ना आछे बल ॥
कत कत छिल मने आशा कत छिल हृदे भालो बासा।
शेषे होली आशा नैराशा मने आछे कि या आछे बल ॥
हृदये दिए छ कतेक ब्यथा मने आछे कि ना आछे बल ॥
तुमि हे कि कछु किछुई जान ना मम मने आछे सब बेदना।
आमि हृदये पेयेछि ब्यथा नाना मने आछे कि ना आछे बल ॥

दिए छिल तक 'चन्द्रिका' बाजा ओहे चन्द्र तव प्रेमे बाधा।
आछे मन प्रान सब साधा मने आछे कि ना आछे बल ॥28॥

हेरिब सतत सखी कालई बरन।
मने पड़े जेन सदा से नील रतन॥
मृगमद दिन सिरे कज्जल नयन तारे,
नित्य नील वर्ण चीरे आच्छादित तन।
'हरिश्चन्द' मुख सदा कृष्ण नामे आछे साधा,
से पेमे अन्तर बाधा कृष्ण पदे आछे मन ॥29॥

जाओ ओहे गुनमनि ए कि काज करिले।
आमार प्रानेर छबि काड़िते बसिले॥
ममाधिक प्रान प्रिय के आछे तोमार प्रिय।
आमार भाल वासा छबि कारे दिते निए छिले॥
'चन्द्रिका' बले बल ना केन करहे छलना।
रक्षित छबि ते मम तुमि केन हाथ दिले ॥30॥

राखो हे प्रानेश ए प्रेम करिया जतन।
तोमाय करेछि समर्पन॥
जत दिन रबे प्रान श्रीरचने दिओ स्थान,
हरिश्चन्द्र प्रान धन एई अकिंचन।
'चन्द्रिका' हृदय धन नाहिक तोमा बिहन,
तब करे ते आपने करेछि जीवन मन ॥31॥

थाकिते जीवन मन नाथ ए कि करिले।
आमार आशार प्रेम कारे तुमि दान दिले॥
'चन्द्रिका' हृदय मन तब करे समर्पन।
तार हृदि हरिधन कारे प्राण दिते निले ॥32॥

आमाय भालो बेशे आर तोमार काज नाई।
तुम अन्य प्रान ज्वले आंमाय भालो बास बोले॥
सदा भासि आंखि जले हृदे नाना दुःख पाई।
बिदाय दाओ गुनमनी सजब एबे सन्यासिनी॥
हब नाथ बिदेशिनी सुख पथे दिया छाई।
'हरिश्चन्द्र' प्रान धन 'चन्द्रिकार' निवेदन,
बासना एमन मन विदेशे ते प्रान जाई ॥33॥

ए प्रेम राखिते केन करिछ जतनो रे।
सेई प्रेम राखा गिया जथा बांधा मनो रे॥
सेई विनोदिनी धनि तुमि तार प्रेमे रिणी,
बांधा आछो गुनमनि ताहारई प्रेम डोरे।
छाड़ो एई प्रेम आशा जाना गेल भालो बासा,
हृदय सब नैराशा 'चन्द्रिकार' एखनो रे॥34॥

मिछा केन दिते आश प्रेमेर परिचय।
सतिनेर छबि आंकि आपन हृदय॥
प्रेम कथा बलि प्रान कोरो ना आर जालातन,
राख गिया प्रानधन ताहार जा आज्ञा हय।
'हरीचन्द' प्रान पति तुमिरे निर्दय अति,
'चन्द्रिकार' नाहे गति जानिनु निश्चय॥35॥

आज आमार होलो सुप्रभात।
नवीन वत्सरे पद दिल प्राननाथ॥
ओ वत्सरे दिन हेन बिधि पुनः देन जेन।
धरे ए बासना मन पूर्ण करे जगन्नाथ॥36॥

आज किवा सुखि होलो जीवन।
बेंचे छिले ताई जीवन पाईले दिन एमन॥
प्राननाथेर जन्म दिन दिल दरसन।
देख 'चन्द्रिकार' आज किवा सुख हृदि माझे,
आनन्देर आज साज सेजे छे मन॥37॥

कि आनन्देर दिन आज हेरिनु नयने।
इहार समान दिन नहिक ए भुवने॥
हरिश्चन्द्र प्रानपति आज तारे जन्म-तिथि,
बिधि सुख दिल अति आजि 'चन्द्रिका' मने॥38॥

एई दिन पुनः हेरि मने वासना।
नवीन वत्सरे आइ पद दिले हृदिराज,
तारे सुखे राखुन प्रभु एई कामना।
पुनः एई दिन हेरी एकान्त वासना करी,
'चन्द्रिका ' हृदय आज सुख उपजिल नाना॥39॥

शुनियाछि तब कृपा पतित गामिनी।
पाइबे कोथाए तवे पतित आमार तुल्य,
पाप मात्र कर्म जार दिवस यामिनी॥
सर्वस्व स्वरूप जार मिथ्याचार व्यवहार,
हिंसा छल द्यत मद्य मांस ओ कामिनी॥40॥

निभृत निशीथे सई ओ बांशी बाजिल।
पूरित करिया बन भेदिया गगन घन,
जे कांपाईया समीरन मधुर रवे गाजिल॥
स्तंभित प्रवाह नीर ताड़ित मयूर कीर,
झंकारिया तरुगन एक तान साजिल।
'हरिश्चन्द्र' श्याम बांशी स्वर कामदेव फांसी,
कुलबधु सुनियाई आर्यपथ त्याजिल॥41॥

कोथाय आछ ओहे प्रिय अबला ज़ीवन।
प्रानधन श्याम धन॥
नव नील वर्ण तन पूर्ण चन्द्र निभानन।
कूजित वंशिकास्वन प्रसन्न बदन॥
कर दुःख बिनाशन ओहे गोपिका रमन।
आशिया श्रीबृन्दावन दाओ दर्शन॥
'हरिश्चन्द्र' निवेदन सुन दिया किछु मन।
ओई पदे समर्पण आछे गो जीवन॥42॥

सई मजाले मजाले श्याम मजाले आमाय।
सतत बांशीर ध्वनि करे मोरे पागलिनी,
सई कादाले कांदाले श्याम कांदाले आमाय॥
बांशी ते गहन बने डाके काला घने घने,
सई मताले मताले श्याम मताले आमाय॥43॥

केह जाओ गो जाओ मधुपुरि ते।
बुझाईए सेई प्रानेर श्यामे आनिते॥
बल पिया प्रानधने राधा जे बांचे ना प्राने।
तोमार विच्छेद बान नाहिं पारे सहिते॥44॥

मदन मोहन मधु सूदन दयामय।
बलि शुन गुनमनि सेथा राधा विनोदिनी।
बिरहे ब्याकुल धनि चल गो तराय ॥45॥

ओहे श्याम आछे कि आर आमाय मने।
सुन हे श्याम त्रिभंग दिया ए प्रनय भंग।
सेथाय कुबजा संग भूले ए दुःखिनी जने॥
सुन हरि प्रानधन आमार ए निवेदन।
आर कि ओहे दर्शन दिबे नाए बृन्दाबने ॥46॥

ग़ज़ल

तेरी सूरत मुझे भाई मेरा जी जानता है।
जो झलक तूने दिखाई मेरा जी जानता है॥
अरे जालिम तेरे इस तीरे निगह से हमने।
चोट जैसी कि है खाई मेरा जी जानता है॥
खाएँगे जहर नहीं डूब मरेंगे जाकर।
जो है कुछ जी में समाई मेरा जी जानता है॥
कत्ल करके न खबर ली मेरे कातिल अफसोस।
जां इसी दुःख में गंवाई मेरा जी जानता है॥
प्यार की वह तेरी चितवन व नशीली आंखें।
दिल को किस तरह हैं भाई मेरा जी जानता है॥
दे के जी और पै जीने का मजा खो बैठे।
जीते जी पै बन आई मेरा जी जानता है॥
सब्र की फौज के वा उठ गए दिल हार गया।
आंख तूने जो लड़ाई मेरा जी जानता है॥
ख्वाब सा हो गया शब को तेरी सुहबत का खयाल।
रात वह फेर न आई मेरा जी जानता है॥
दाग दिल पर य रहेगा कि तेरे कूचे तक।
थी 'रसा' की न रसाई मेरा जी जानता है॥1॥

दिल मेरा ले गया दगा करके।
बेवफा हो गया वफा करके॥
हिज्र की शब घटा ही दी हमने।
दास्तां जुल्फ की बढ़ा करके॥

शुअलारू कह तो क्या मिला तुझको।
दिलजलों को जला जला करके॥
वक्ते रेहलत जो आए बालीं पर।
खूब रोए गले लगा करके॥
सर्व कामत गजब की चाल से तुम।
क्यों कयामत चले बपा करके॥
खुद बखुद आज जो वो बुत आया।
मैं भी दौड़ा खुदा खुदा करके।
क्यों न दावा करे मर्सीहा का।
मुर्दे ठोकर से वह जिला करके॥
क्या हुआ यार छिप गया किस तर्फ।
इक झलक सी मुझे दिखा करके॥
दोस्तो कौन मेरी तुरबत पर।
रो रहा है 'रसा रसा' कर के॥2॥

[मल्लिकचन्द्र ऐंड कम्पनी बनारस से तीसरी बार पुस्तिकाकार प्रकाशित। प्रेम तरंग के प्रकाशन वर्ष को शिवनन्दन सहाय ने सन 1874 ई. कहा है। ब्रजरत्नदास की सूचना के अनुसार इसका प्रकाशन 9 अप्रैल सन 1877 ई. के कविवचन सुधा में हुआ था। कविवचन सुधा के किसी एक अंक में इतनी बड़ी रचना का प्रकाशन मुश्किल था।]

143762

सतसई सिंगार

सन 1875 ई.

सतसई सिंगार

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोइ।
जना तन की झाईं परैं स्याम हरित दुति होइ ॥1*॥

स्याम हरित द्युति होइ परैं जा तन की झांईं।
पाय पलोटत लाल लखत सांवरे कन्हाई॥
श्री 'हरीचन्द' वियोग पीत पट मिलि दुति टेरी।
नित हरि जा रंग रंगे हरौ बाधा सोइ मेरी॥

सीस मुकुट, कटि काछनी कर मुरली उर माल।
इहि बानिक मो मन बसौ सदा बिहारी लाल ॥301॥

सदा बिहारी लाल बसौ बांके उर मेरे।
कानन कुंडल लटकि निकट अलकावलि घेरे॥
श्री 'हरीचन्द' त्रिभंग ललित मूरत नटवर सी।
टरौं न उर तैं नैकु आज कुंजनि जो दरसी ॥2॥

मोहन मूरति श्याम की अति अद्भुत गति जोइ।
बरसत सुचि अन्तर तऊ प्रतिबिम्बित जग होइ ॥161॥

प्रतिबिम्बित जग होइ कृष्णमय ही सब सूझै।
एक संयोग वियोग भेद कछु प्रगट ने बूझे॥
श्री 'हरिचन्द' न रहत फेर बाकी कछु जोहन।
होत नैन मन एक जगत दरसत तब मोहन ॥3॥

---

* दोहों के आगे की ये संख्याएं बिहारी रत्नाकर से मिलान करने के लिए दी गई हैं।

तजि तीरथ हरि राधिका तन दुति कर अनुराग।
जिहिं ब्रज केलि निकुंज मग पग पग होतप्रयाग ॥201॥

पग पग होत प्रयाग सरस्वति पद की छाया।
नख की आभा गंग छांह सम दिनकर जाया॥
छन छवि लखि 'हरीचन्द' कलप कोटिन लव सम लजि।
भजु मकरध्वज मनमोहन मोहन तीरथ तजि ॥4॥

सघन कुंज छाया सुखद सीतल मन्द समीर।
मन ह्वै जात अजौं वहै वा जमुना के तीर ॥681॥

वा जमुना के तीर सोई धुनि आंखिन आवै।
कान बेनु धुनि आनि कोऊ औचक जिमि नावै॥
सुधि भूलति 'हरिचन्द' लखत अजहुं वृंदावन।
आवन चाहत अवहिं निकसि मनु स्याम सरस घन ॥5॥

सखि सोहत गोपाल के उर गुंजनि की माल।
बाहर लसति मनौ पिये दावानल की ज्वाल ॥312॥

दावानल की ज्वाल धूम सह मनहुं विराजै।
प्रिया विरह दरसाइ मनहुं संगम सुख साजै॥
सोई 'श्री हरिचन्द' विहंसि कर लेत कबहुं लखि।
मानिक मुक्ता नील बनत गुंजा सों लखु सखि ॥6॥

कर लै, चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ भुज भेंटि।
लहि पाती पिय की लखति, बांचति, धर सिमेटि ॥635॥

बांचति, धरति समेटि, खोलि पुनि पुनि तिहि बांचै।
बरन बरन पर प्रान वारि आनन्द जिय राचै॥
प्रेम औधि 'हरिचन्द' जानि उलही उर अन्तर।
नैन नीर जुग भरे लिए ही रहत सदा कर ॥7॥

नित प्रति एकत ही रहत बयस बरन मन एक।
चहियत जुगल किसोर लखि लोचन जुग अनेक ॥237॥

लोचन जुगल अनेक होएं तौ कुछ सुख पावैं।
जग की जीवन मूरि प्रिया प्रिय निरखि सिरावैं॥
गौर स्याम 'हरीचन्द' कोटि मोहन मनमथ रति।
इक बरन इक रूप लखौ इक ही टक नित प्रति॥8॥

लोचन जुगल अनेक पलटि यह अविधि पलक किय।
सुधा श्रवन सम बैन श्रवन हित श्रवनहु जुग दिय॥
सेवत हित 'हरिचन्द' किए द्वै ही कर अनुचित।
विधि सब धरी अनीति जुगल छबि किमि लखिये नित॥8॥

मोर मुकुट की चंद्रिकन यों राजत नन्द नन्द।
मनु ससि सेखर को अकस किय सेखर सत चन्द॥419॥

किय सेखर सत चन्द सुरंग केसरी कुलह पर।
गंगाधर सी लटकि रही दुहुं दिसि मोती लर॥
कहा कहौं 'हरीचन्द' आजु छवि नागर नट की।
सब जिय उपजत काम लटक लखि मोर मुकुट की॥9॥

किय सेखर सत चन्द जटित नगपेच बिंब परि।
स्याम सच्चिकन चिकुर आभ सों स्याम भये घिरि॥
जमुना तट 'हरिचन्द' सरद निमि रास लटक की।
छवि लखि मोही आज पीत पट मोर मुकुट की॥191॥

जहां जहां ठाढ़ौ लख्यौ स्याम सुभग सिर और।
उनहूं बिन छन गहि रहत दृगन अजौं वह ठौर॥182॥

दृगन अजौं वहि ठौर खरे ही परत लखाई।
क्यौंहू सुधि नहिं जात सोई छवि नैननि छाई॥
सुमिरत सोइ 'हरीचन्द' पीर कसकत अति उर मह।
अंसुवनि सींचत तहां खरे निरखे हरि जहं जहं॥10॥

सोहत ओढ़े पीत तट स्याम सलोने गात।
मनौ नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यौ प्रभात॥689॥

आतप पर्‍यौ प्रभात किधौं बिजुरी घन लपटी।
जरद चमेली तरु तमाल मैं सोभित सपटी॥
प्रिया रूप अनुरूप जानि 'हरीचन्द' बिमोहत।
स्याम सलोने गात पीत तट ओढ़े सोहत॥11॥

किती न गोकुल कुलबधू, काहि न किहि सिख दीन।
कौने तजी न कुल गली ह्वै मुरली सुर लीन॥652॥
ह्वै मुरली सुर लीन कोन ब्रज पतिब्रत राख्यौ।
किन प्रन पार्‍यौ, लोक सील किन दूरि न नाख्यौ॥
धुनि सुनिकै 'हरिचंद' न उठि धाई तजि को कुल।
हरि सों जल पय सरिस मिलि अस किती न गोकुल॥12॥

मिलि परछांहीं जोन्ह सों रहे दुहुंन के गात।
हरि राधा इक संग ही चले गलिन मैं जात॥653॥

चले गलिन मैं जात जुगल नहिं देत लखाई।
राधा मिलि रहिं जोन्ह छांह मिलि रहे कन्हाई॥
गौर स्याम 'हरीचन्द' अबहिं दोउ देखो झिलि मिलि।
दिए हाथ पै हाथ साथ ही जाते हिलि मिलि॥13॥

गोपिन संग निसि सरद की रमत रसिक रस रास।
लहाछेह अति गतिन की सबनि लखे सब पास॥291॥

सबनि लखे सब पास दिए नाचत गल बाहीं।
उरप तिरप गति लेत एक बहु गोपिन माहीं॥
लाग डांट 'हरीचन्द' तत्तथेइ संगीतक रंग।
तान मान बन्धान रह्यौ निसि ब्रज गोपिन संग॥14॥

मोर चन्द्रिका स्याम सिर चढ़ि कत करति गुमान।
लखिवी पाइनि तर लुठति सुनियत राधा-मान॥676॥

सुनियत राधा मान कियो हरि जात मनावन।
ह्वैं हैं तोसी और दसेक नख-बिंबित चावन॥
धूरि भरी 'हरिचन्द' होइहै बिगत तंद्रिका।
जावक रंग सों लाल लाल की मोर चन्द्रिका॥15॥

इन दुखिया अंखियान कों सुख सिरजौई नांहि।
देखे बनै न देखतें बिन देखे अकुलाहिं ॥663॥

बिनु देखे अकुलाहिं विकल अंसुवन झर लावैं।
सनमुख गुरुजन लाज भरी ये लखन न पावें॥
चित्रहु लखि 'हरिचन्द' नैंन भरि आवत छिन छिन।
सुपन नींद तजि जात चैन कबहुं न पायो इन ॥16॥

बिनु देखे अकुलाहिं बिरह दुःख भरि भरि रोवैं।
खुली रहैं दिन रैन कबहुं सपनेहु नहिं सोवैं॥
'हरीचन्द' संजोग बिरह सम दुखित सदाहीं।
हाय निगोरी आंखिन सुख सिरजौई नाहीं ॥16॥

बिनु देखे अकुलाहिं बावरी ह्वै ह्वै रोवैं।
उघरी उघरी फिरै लाज सब सुख खोवैं॥
देखै 'श्रीहरिचन्द' नैन भरि लखैं न सखियां।
कठिन प्रेम गति रहत सदा दुखिया ये अंखियां ॥16॥

नाचि अचानक ही उठे बिनु पावस बन मोर।
जानति हौं नन्दित करी इहि कित नन्दकिसोर ॥469॥

इहि कित नन्दकिसोर स्याम घन अबहीं आए।
प्रफुलित लखियत लता बेलि सर जलज मुंदाए॥
पद रेखा 'हरिचन्द' चमकि प्रकटत नट बानक।
स्वेत सुगन्धित पवन अचल इत नाचि अचानक ॥17॥

प्रलय करन बरखन लगे जुरि जलधर इक साथ।
सुरपति गरब हरयौ हरिख गिरधर गिरि धरि साथ ॥549॥

गिरधर गिरि घर हाथ सकल ब्रज लोग बचाए।
बरसि सुधा-रस सात दिवस नर नारि जिवाए॥
मिले नयन 'हरीचन्द' तहां तजि गुरुजन की भय।
इत तैं रस बरसात करी उत घन जन परलय ॥18॥

डिगत पानि डिगलात गिरि लखि सब ब्रज बेहाल।
कम्प किसोरी दरस कें खरे लजाने लाल ॥601॥

खरे लजाने लाल जबैं तैं भौंह मरोरी।
सजग होइ गिरि धर्‍यौ कोर करूना करि जोरी॥
लकुट लाय 'हरीचन्द' रहे तब गोपहु हरि ढिग।
अरी खरी तू बाल नेक चितए हरि गे डिग ॥19॥

लोपे कोपे इन्द्र लौं रोपे प्रलय अकाल।
गिरिधारी राखे सकल गो गोपी गोपाल ॥521॥

गो गोपी गोपाल अबै सब गोबरधन तर।
हरि गिरि लीन्हें हाथ तकत इक टक तुव मुख पर॥
'हरीचन्द' गहि दया उतै ही लखु कर चोपे।
नाहीं तौ हरि चौंकि गिरैहैं गिरि ब्रज लोपे ॥20॥

गो गोपी गोपाल जदपि गोपाल बचाए।
पै तिन कौं निज बदन सुधा दै तहीं जिवाए॥
नाहीं तो 'हरीचन्द' सात दिन इक कर रोपे।
किमि हरि गिरि कर लिए रहत सगरो ब्रज लोपे ॥20॥

गो गोपी गोपाल राखि गिरिधर कहवाए।
हाथन हीं तू सदा तिन्हैं लै रहत लगाए॥
चढ़े रहत 'हरीचन्द' बैन दृग जिय हरि चोपे।
गिरिधर धारिनि क्यौं न होत तू रति रस लोपे ॥20॥

लाज गहौ, बेकाज कत घेरि रहै, घर जाहिं।
गो रस चाहत फिरत हौ, गो रस चाहत नांहि ॥126॥

गो रस चाहत नाहिं रूप लखि लाल लुभाने।
सो रस पैहौ नाहिं फिरत काहे मंडराने॥
सांझ भई 'हरीचन्द' जान घर देहु दुहाई।
लखिहै कोऊ आइ लाज कछु गहौ कन्हाई ॥21॥

मकराकृति गोपाल के कुंडल सोहत कान।
धंस्यौ मनौ हिय सर समर, ड्यौढ़ी लसत निसान ॥203॥
ड्यौढ़ी लसत निसान मनौ तुव गुन प्रगटावत।
जोहिं सुनि हरि अति बिकल कुंज तोहिं तुरत बुलावत ॥
चलति न क्यौं 'हरीचन्द' बृथा लावत बिलंब इत।
छोडु मकर तुव बिना स्याम जल बिनु मकराकृत ॥22॥

अघर धरत हरि के परत ओठ दीठि पट जोति।
हरित बांस की बांसुरी इन्द्र धनुष रंग होति ॥420॥

इन्द्र धनुष रंग होति स्याम घन लहि छबि पावत ।
याही तें हरि सुधा सार सम रस बरसावत ॥
मुक्त माल बक पांति सांझ फूली माला मध।
बिजुरीसम 'हरीचन्द' पीत पट रह्यौ लपटि अध ॥23॥

इन्द्र धनुष सी होति बधन बिरही अबलागन।
बिनु बलमी तै भए इतो बिष होइ कहां तन ॥
हम बंचित ही रहत सदा 'हरिचन्द' लोक डर।
हाय निगोरी यह बंसी पीवत अधराधर ॥23॥

छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यौ जोबन अंग।
दीपति देहु दुहून मिलि दिपति ताफता रंग ॥
दिपति ताफता रंग वसन बिरची गुड़िया सी।
चतुराई नहिं चढ़ी तऊ कछु लाज प्रकासी ॥
देह नितम्बनि भार अजौं कटि भले लुटी नहिं।
जोबन आयो जऊ तऊ मुगधता छुटी नहिं ॥23॥

दिपति ताफता रंग मिलित बय सोभा बाढ़ी।
कछु त/नाई चढ़ी जीय कछु लाजहु गाढ़ी ॥
आइ चली 'हरीचन्द' जदपि जिय मैं कछु रसता।
बलिहारी चलि लखौ तऊ तन छुटी न सिसुता ॥24॥

तिय तिथि तरूनि किसोर बय पुन्य काल सम दोन।
काहू पुन्यनि पाइयत बैस सन्धि संक्रोन ॥274॥

बैस सन्धि संक्रोन समय सब दिन नहिं आवत।
दूती बनि दैवज्ञ मिलन को समय बतावत॥
श्री 'हरिचन्द' सुकुंज सेज तीरथ जानहु जिय।
देहुअधर रस दान लाल भागन पाई तिय॥25॥

बैस संधि संक्रौन सात बिनु चार सौति कहं।
दवै की षट भौं नव सालत जिय अठ दृग बारह॥
अजौ न ग्यारह कुच सु पांच कटि दस धुन नहिं जिय।
करहुन एक न देर होहु त्रय भाग मिली तिय॥25॥

ललन अलौकिक लरिकई लखि लखि सखी सिहाति।
आजु काल्हि मैं देखियत उर उकसौहीं भांति॥
उर उकसौहीं भांति बनक कछु कहत न आवै।
देखे ही सुख होइ तिहारे मनहिं रिझावै॥
चलि निरखौ 'हरीचन्द' जुगल बय मिलन अलौकिक।
नैन बैन कछु भए औरही ललन अलौकिक॥268॥

भावका उभरौंहो भयौ, कछुक पर्‍यौ भरुआय।
सीपहरा के मिस हियौ निसि दिन हेरति जाय॥252॥

निसि दिन हेरति जाय कछु हंसि हंसि कै बोलै।
आंख मिचौनी के मिस सखि दृग नापति डोलै॥
हिय हरखै 'हरीचन्द' पियहि लखि होत लजौंहीं।
कटि सूछमता प्रगट करत भावक उभरौंही॥27॥

अपने अंग के जानि कै जोबन नृपति प्रवीन।
स्तन मन नयन नितम्ब कौ बड़ौ इजाफा कीन॥2॥

बड़ौ इजाफा कीन सबनि जागीर बढ़ाई।
कंचुकि चाहत अंजन सारी खिलत दिवाई॥
मदन चक्कवै जानि करन कारज ता मन के।
जोबन नृप अधिकार बढ़ाए अपने तन के॥18॥

इक भीजै, पहले परैं, बूड़ै, कहैं हजार।
किते न औगुन जग करत बै नै चढ़ती बार ॥461॥

बै नै चढ़ती बार कूल मरजादा तोरत।
भंजत धीरज मेंड़ लाज सामां सब बोरत॥
बेग कठिन 'हरिचन्द' भेद यह तदपि दुहूं दिक।
चतुर होत इक पार जानि कै बूड़त लहि इक ॥29॥

देह दुलहिया की बढ़ै ज्यों ज्यों जोबन जोति।
त्यौं त्यौं लखि सौतैं सबैं बदन मलिन दुति होति ॥40॥

बदन मलिन दुति होति सौत गुरुजन सुख पावत।
लाल हजारन भांति मनोरथ उर उपजावत॥
तजत गरब 'हरिचन्द' जिती जुवती जग मंहियां।
ज्यौं ज्यौं उलहति चलति सलोने देह दुलहिया ॥30॥

नव नागरि तन मुलुक लहि जोबन आमिल जोर।
घटि बढ़ि तें बढ़ि घटि रकम करी और की और ॥220॥

करी और की और लखत सिसुता बलि छूटी।
दियो नितम्बनि भार लखौ बीचहिं कटि लूटी।
कुछ उमगे 'हरिचन्द' भई बुधिहू गुन आगरि।
चपल नैन बढ़ि चले मदन परसत नव नागरि ॥31॥

लहलहाति तन तरुनई लचि लग लौ लफि जाइ।
लगै लांक लोइन भरी लोइन लेति लगाइ ॥532॥

लोइन लेति लगाइ फेरि छूटै न छुड़ाए।
बनत चहंटुआ नैन लगे डोलत संग धाए॥
लाल लटू 'हरिचन्द' लटू सम देखत छाती।
भटू फिरत संम लगे तरुनई लखि उलहाती ॥32॥

सहज सचिक्कन, श्याम रुचि, सुचि, सुगन्ध, सुकुमार।
गनत न मन पथ अपथ, लखि बिथुरे सुथरे बार ॥95॥

बिथुरे सुथरे बार देखि उरझयौही चाहत।
मानत नहिं कुल कानि लाज नहिं तनिक निबाहत॥
जूरा मैं बंधि लटकि रहत अलकन के छींकन।
चोटिन में गुंथि जात केस लखि सहज सचीकन॥33॥

वेई कर ब्यौरौ वहै ब्यौरौ क्यों न बिचार।
जिनहीं उरझ्यौ मो हियौ तिनहीं सुरझे बार॥436॥

तिनहीं सुरझे बार बार जिनपै मैं वारी।
कहे देत कर परसनि सखि यह तौ गिरधारी॥
उन बिन को 'हरिचन्द' परसि प्रगटै मनमथ।
रोम पांति उकसाति पीठ लागैं वेई कर॥34॥

कच समेटि, भुज कर उलटि खरी सीस पट डारि।
काको मन बांधै न यह जूरो बांधनिहारि॥
जूरो बांधनिहारि बांधि मन छोड़ि न जानै।
सींचति सरस सनेह सुगन्ध हूं लै सानै॥
तजति नहिं 'हरीचन्द' मोहिं बोलति मुखहु न बच।
जुलुफ जंजीरन सीस फूल को कुलुफ देत कच॥35॥

छुटे छुटाव जगत तें सटकारे सुकुमार।
मन बांधत बेनी बंधे नील छबीले बार॥573॥

नील छबीले बार हरत मन सब ही भांतिन।
बधे, छुटे, सटकारे गूंथे मोती पांतिन॥
अहि सिवार अलि आद सबन को गरब मिटावैं।
अंखियन अरुझे रहत न सुरझैं छुटे छुटावैं॥36॥

कुटिल अलक छुटि परत मुख बढ़िगो इतो उदोत।
बंक बंकारी देत ज्यौं दाम रुपैया होत॥442॥

दाम रुपैया होत उलैया तें ब्यवहारन।
सोलह सै गुन बढ़त बदन सोभा तिमि बारन॥
अमल कमल अलि पांति रहत जिमि जमल जोर जुटि।
ससि पैं अहि सम ससि बदनी के कुटिल अछुटि॥37॥

ताहि देखि मन तीरथनि बिकटनि जाइ बलाय।
जा मृगनैनी के सदा बेनी परसत पाय॥
बेनी परसत पाय जमुन सी लोल कलोलै।
मोतिन मिस तिमि गंग संग लाही ही डोलै॥
चरन महावर सरिस सरस्वति मिलति जौन छन।
तिय तीरथपति होत लहत फल जाहि देखि मन॥38॥

नीकौ लसत लिलार पर टीकौ जटित जराय।
छबिहि बढ़ावत रवि मनौं ससि मंडल मैं आय॥105॥

ससि मंडल मैं आइ सूर सोभाहि बढ़ावत।
मोती लर तारागन सी तिमि अति छबि पावत॥
तिय सोभा 'हरीचन्द' कियौ सौतिन मुख फीको।
लखौ लाल चलि कुंज आजु प्यारी-मुख नीको॥39॥

सबै सुहाए ही लसैं बसत सुहाई ठाम।
गोरे मुख बेंदी लसै अरुन, पीत, सित, स्याम॥271॥

अरुन, पीत, सित, स्याम, खुलै सबही मन मोहैं।
सांच कहत जग लोग सबै सुंदर कहं सोहैं॥
बिनु सिंगार ही लेत जौन मन सहज लुभाए।
क्यौं न लगैं सिंगार ललन तेहि सबै सुहाए॥40॥

कहत सबै, बेंदी दिए आंक दस गुनो होत।
तिल लिलार बेंदी दिए अगनित बढ़त उदोत॥327॥

अगनित बढ़त उदोत तीस, अस्सी, नब्बे गुन।
तीन, आठ, नव, सत, सहस्र 'हरिचन्द' बढ़त पुन॥
बन्दी बेना बैंदी भौं लहि बनत रूपा जब।
मोती लर तें होत मुहर लखि थकित रहत सब॥41॥

अगनित बढ़त उदोत न सो कबि पैं गिनि आवै।
निरखत मन हर लेत तिहारे मन अति भावै॥
सो सोभा 'हरिचन्द' बरनि नहिं जात कछू अब।
बलि निरखौ चलि स्याम सहज छबि जाहि कहत सब॥41॥

भाल लाल बैंदी छए छुटे बार छबि देत।
गह्यौ राहु अति आहु करि मनु ससि सूर समेत ॥355॥

मनु ससि सुर समेत इकत गहि राहु दबावत।
स्वेद कना मिस अमृत निकसि तब ससि तें आवत ॥
बारिध औ पिय नाते तब गहि जुगल कमल बर।
निरुवारत तकि तमहिं परसि तिय भाल लाल कर ॥42॥

पायल लगी रहै लगे अमोलक लाल।
भोडरहू की बेंदुली चढ़ति तिया के भाल ॥441॥

चढ़ति तिया के भाल तिमिहिं सो तिय गरबानी।
हम सब कुल की होय फिरत दूरहि मंडरानी ॥
कानी हरि 'हरीचन्द' करी बेबस करि घायल।
भोडर राख्यौ सीस जर्‌यौ रतनन लै पायल ॥43॥

चढ़ति तिया के भाल पिया मन सुख उपजावति।
कोटि रतन रबि ससिहूं सों बढ़ि सोभा पावति ॥
मूरतमान सुहाग बिदु लखि कवि-मति कायल।
यातें यह अनमोल जदपि नवलख की पायल ॥43॥

चढ़ति तिया के भाल तैसहीं तू गरबानी।
सुनत सखिन की बात न पीतम कों पतियानी ॥
रहति मान करि बृथा कोप मैं करि मति मायल।
पियहिं लुठावति चरन तरें परसावति पायल ॥43॥

चढ़ति तिया के भाल सबै सुन्दर कहं सोहत।
तासों करु न सिंगार बेंदुली ही मन मोहत ॥
चलु 'हरिचन्द' निकुंज दूर तजि माल हिमायल।
उत पिय तुव बिन ब्याकुल इत तू पहिरति पायल ॥43॥

चढ़ति तिया के भाल सदा निज मान बढ़ावत।
तैसहिं नूपुर बोलन सों आदर नहिं पावत ॥
सूचति रति अभिसार सबन कहं बाजि उतायल।
याही सों मनि जटितहु राखत पद तर पायल ॥43॥

भाल लाल बैंदी ललन आखत रहे बिराजि।
इन्दु कला कुज मैं बसी मनौं राहु भय भाजि ॥690॥

मनौ राहु भय भाजि इंदु कुज मंडल आयो।
ताहू पै तिन बाहर ही निज जोर जमायो॥
पूजि देव तिय न्हाइ खरी बाढ़ी अति सोभा।
बिथुरे केसनि तिलक अखत लखि पिय मन लोभा ॥44॥

पिय मुख लखि पन्ना जरी बेंदी बढ़ैं बिनोद।
सुत सनेह मानौं लियो बिधु पूरन बुध गोद ॥707॥

बिधु पूरन बुध गोद मोद भरि कै बैठाऱ्यौ।
होइ उच्च के जिन सोहाग को चौचन्द पाऱ्यौ॥
सेंदुर केसर पान दिठौना बेसर कच सुख।
औरहु ग्रह मिलि बसे इकत लखि सुन्दर तिय मुख ॥45॥

गढ़ रचना बरुनी अलक चितवनि भौंह कमान।
आध बंकाई ही बढ़ैं तरूनि तुरंगम तान ॥316॥

तरुनि तुरंगम तान बंकाइहि तें छबि पावत।
ताही तें तू सदा मान की मति उपजावत॥
वेहू ललित तृभंग सदा बांके सब सों बढ़।
वह जोरी 'हरीचन्द' भली बिधि रची आपु गढ़ ॥46॥

नासा मोरि नचाइ दृग करी कका की सौंह।
कांटे लौं कसकति हिए गरी कंटीली भौंह ॥406॥

गरी कंटीली भौंह न भूलति कबहुं भुलाए।
वह चितवनि वह मुरनि चलनि चख चपल नचाए॥
प्रान रहे 'हरीचन्द' एक सौंहन की आसा।
उन तौ बिछुरत ही बुधि बल मन धीरज नासा ॥47॥

गरी कंटीली भौंह जीय सों चुभत सदाहीं।
अब उनके बिनु मिले सखी जिय मानत नाहीं॥

लाउ बेगि 'हरीचन्द' पूरि मम कोटिन आसा।
नाहीं तो यह तन बियोग मनमथ अब नासा ॥47॥

गरी कंटीली भौंह कोप करि प्रगट बंकाई।
मम भुज छूटन हेत सरस रिसि जौन दिखाई॥
वह छलि भाजी हाय रह्यौ मैं लखत तमासा।
मिलन मनोरथ पुंज पलक मूंदत सब नासा ॥47॥

गरी कंटीली भौंह सोइ कसकत जिय भारी।
गुरुजन की भय देनि खानि हा हा वह प्यारी॥
मिलन औध 'हरिचन्द' बदनि वह राखनि आसा।
भूलति क्यौंहूं नाहिं नचावनि भौं दृग नासा ॥47॥

गरी कंटीली भौंह बिरह ब्याकुल अति भारी।
कोउ बिधि बेगि मिलाउ मोहिं सुन्दर सोइ प्यारी॥
कहियो तुम करि सौंह न पूरत क्यौं अब आसा।
ताकी जाको बुधि बल सब देखत तुम नासा॥

खौरि पनच, भृकुटी धनुष, बधिक समर, तजि कानि।
हनत तरुन दृग तिलक सर, सुरक भाल भरि तानि ॥104॥

सुरक भाल भरि तानि खोजि चतुरन ही मारत।
बधि फिर खोज न लेत चवाइन चौचन्द पारत॥
जिय ब्याकुल 'हरीचन्द' होत गति मति सब बौरी।
गोरे गोरे भाल बिलोकत केसरि खौरी ॥48॥

रस सिंगार मंजन किए, कंजन भंजन दैन।
अंजन रंजनहूं बिना, खंजन गंजन नैन ॥46॥

खंजन गंजन नैन लुकंजन मनहुं लगाए।
पैठि हिए मन लयो तबहुं पहिं परत लखाए।
वारौं कोटिक मीन, मैन सर, मृग छबि सरबस।
कहं ये जड़ पसु निरस कहां वे भरे मदन रस ॥49॥

खेलन सिखए अलि भलैं चतुर अहेरी मार।
कानन चारी नैन मृग नागर नरन सिकार ॥45॥

नागर नरन सिकार करत ये जुलुम मचावत।
अंजन गुनहूं बंधे उड़न झपटत गहि लावत॥
चीन्हि चीन्हि 'हरीचन्द' रसिक ये मारत सेलन ।
बधि फिर सुधि नहिं लेत भले सिखए यह खेलन॥
सायक सम घायक नयन, रंगे त्रिबिध रंग गात।
झखौ बिलखि दुरि जात जल, लखि उलजात लजात ॥55॥

लखि उलजात लजात, हरिन बन बसत निरंतर।
खंजन जिन मद गंजन करि निवसत तरुवर पर॥
सो मोहत 'हरिचन्द' जौन त्रिभुवन के नायक।
बुझे त्रिबेनी नीर जीय घायक दृग सायक ॥51॥

अर तैं टरत न वर परे; दई मरक मनु मैन।
होड़ा होड़ी बढ़ि चले चित, चतुराई नैन ॥3॥

चित, चतुराई, नैन मधुरता बच रस साने।
जोबन कुच पिय प्रेम सबै साथहि उमगाने॥
जीतन हरि 'हरीचन्द, कुमक नृप मदन सुघर तें।
आवत सब ही बढ़े बढ़ेई टरत न अर तें ॥52॥

जोग जुगुति सिखए सबै मनौ महा मुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैतता, कानन सेवत नैन ॥13॥

कानन सेवत नैन रहत नितही लौ लाए।
हरि मद रस सों छके छबीले उमग बढ़ाए॥
सेली डोरे लाल लखत गुदरी पल अनमिख।
क्यों न लहैं अद्वैत सिद्धि प्रिय जोग जुगुति सिख ॥53॥

बर जीते सर मैन के, ऐसे देखे मैं न।
हरिनी के नैनान तैं हरि नीके ए नैन ॥67॥

हरिनी के ए नैन अनी के घन बरुनी के।
फीके कमलन करत भावते जी के ती के॥
ही के हर 'हरिचन्द' रंग चीते प्रिय प्रीते।
नीते मानत नाहिं चपल चीते बर जीते॥54॥

संगति दोष लगै सबै, कहे जु सांचे बैन।
कुटिल बंक भ्रव संग तैं भए कुटिल गति नैन॥303॥

भए कुटिल गति नैन कुटिलई पिय सों ठानत।
सीधे जित अरि रहत कान सिख नेक न मानत॥
अरुझि परत 'हरिचन्द' सैन सजि बरुनिन पंगति।
घायहु बांको करत खरे बिगरे लहि संगति॥55॥

दृगनि लगत, बेधत हियौ, बिकल करत अंग आन।
ए तेरे सब तें बिषम ईछन तीछन बान॥349॥

ईछन तीछन बान आज अति अचरज पारैं।
मिलत करेजे घाय करैं बिछुरे तिय मारैं॥
काढ़े औरहु धंसत बढ़त उपचार निरखि ढिग।
जेहि लागत तेहि लगन देत नहिं लगन लाय दृग॥56॥

झूठे जानि न संग्रहै मनु मुंद निकसे बैन।
याही तें मानों किए, बातनि कौं बिधि नैन॥346॥

बातनि कौं बिधि नैन किए सब बिधि बिधि जानी।
बिनु बोलेहू जासु मधुर बोलनि रस सानी।
हाव भाव 'हरीचन्द' छिपे रस धरे अनूठे।
कहे देत जिय बात करत मुख के छल झूठे॥57॥

फिरि फिरि दौरत देखियत, निचले नैकु रहैंन।
ये कजरारे कौन पै करत कजाकी नैन॥670॥

करत कजाकी नैन कजा की सैन सैन गति।
बटपारे बरजोर बिचारे पथिक देत हति॥

कावा सम 'हरिचन्द' फिरत कावा धावा धरि।
पैनिज ठौरहि रहत करत अचरज अति फिरि फिरि ॥58॥

खरी भीरहूं भेदि कै कितहूं तैं इत आय।
फिरै दीठि जुरि दुहुंनि की सबकी दीठि बचाय॥
सबकी दीठि बचाय नीठि मिलिही ये जाहीं।
कोटि उपाय न करौ ठौरही ये ठहराहीं॥
कठिन प्रीति 'हरिचन्द' भीत गुरुजन हरि सगरी।
करत आपनो काज लाज तजि यह गति निखरी ॥59॥

सब ही तन समुहाति छिन, चलति सबन दै पीठि।
वाही तन ठहराति यह, किबिलनुमा लौं दीठि ॥30॥

कीबिलनुमा लौं दीठि एक हरि दिसि ही हेरै।
कोटि जतन कोउ करौ अनत कहुं रुखहु न फेरै॥
पीतम बिनु 'हरिचन्द' कहौ क्यौं अनत लमै मन।
सरल भाव यों भले लखौ किन छिन सबही तन ॥60॥

किबिलनुमा लौं दीठि न कबहूं प्रन करि फेरै।
छबि सागर डूब्यो निज मन ससि फिरि फिरि हेरै॥
हरि चुम्बक 'हरीचन्द' करत दृग लीहहिं करसन।
तिन ही ठहरति जदपि करत कावा सब ही तन ॥60॥

किबिलनुमा लौं दीठि भई सब तजि पिय अनुसर।
ताहि देखि 'हरीचन्द' प्रेम गति सुदृढ़ करी अर॥
बिन देखे हरि धाम लखन को तजति न वह प्रन।
तौ परछत हरि पाइ कहा यह चितवै सब तन ॥60॥

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजि जात।
भरे भौन में करत हैं नैनन ही सों बात ॥32॥

नैनन ही सों बात करत दोऊ अरुझाने।
अलख जुगल के खेल न काहू लखत लखाने॥
इन्हैं काम सों काम होइ किन लाखन जन महं।
ये अपने रस मगन भीर करिहै इनको कहं ॥61॥

कंज नयनि मंजन किए बैठी ब्यौरति बार।
कच अंगुरिनि बिच दीठि दै निरखति नन्दकुमार ॥78॥

निरखति नन्दकुमार सखिन की दीठि बचाए।
एक पन्थ द्वै काज करति मुख अलक छिपाए॥
छिप्यौ चन्द 'हरीचन्द' संघन घन देइ लुकंजन।
तहं सों द्वै उडुगन निरखत करि ढिग जुग कंजन ॥62॥

सब अंग करि राखी सुघर नागर नेह सिखाइ।
रस जुत लेति अनंत गति पुतरी पातुर राइ ॥274॥

पुतरी पातुर राइ नचति मन हरति सुहावनि।
अतिहि चतुर गुन भरी अनेकन भाव दिखावनि॥
मनहिं हरति 'हरीचन्द' हठनि नित रंगी मदन रंग।
को जोहत नहिं मोहत यह छबि पूरति सब अंग ॥63॥

दीठि बरत बांधी अटनि, चढ़ि धावत न डरात।
इत उत तें चित दुहुंन के नट लौं आवत जात ॥193॥

नट लौं आवत जात संक बिनु इत उत मिलि भल।
करत कला बहु भांति मैन गुरु मंत्र जोग बल।
दृष्टिबन्ध 'हरिचन्द' होत जग लखत न नीठी।
खेलि लहत रस केलि रीझ चित नट चढ़ि दीठी ॥64॥

लीनेहुं साहस सहस, कीने जतन हजार।
लोइन लोइन सिंधु तन, पैरि न पावत पार ॥213॥

पैरि न पावत पार रहत त्रिबली तरंग फंसि।
कुच गिर सों टकराइ नाभि भंवरन घूमत धंसि॥
अरुझत बारहि बार रूप चादर परि भीने।
नैन कहर दरियाव पाइ बूड़त मन लीने ॥65॥

पहुंचति डंटि रन सुभट लौं, रोकि सकैं सब नाहिं।
लाखनहुं की भीर मैं आंखि उतै चलि जाहिं ॥178॥

आंखि उतै चलि जाहिं रुकत नेकहु नहिं रोके।
करैं आपुनो काज संक बिनु गिनत न टोके॥
छकी प्रेम 'हरीचन्द' परस्पर लगीं दरस ठटि।
मिलत धाइ अकुलाइ हेरि उतही पहुंचति डटि॥66॥

गरी कुदुम्बिनि भीर मैं रही बैठि दै पीठि।
तऊ पलक करि जाल उत सलज हंसौंहीं दीठि॥97॥

सलज हंसौंहीं दीठि झपकि उत फिरही जांहीं।
गुरु जन नजरि बचाए दुरि सनमुख समुहांहीं॥
कछु देखन मिस सहज इतहि उत दुरि दुरि अगरी।
पीतम दिसि लखि लेत लालचिन चपल अचगरी॥67॥

भौह ऊंचै, आंचर उलटि, मौर मोरि मुंह मोरि।
नीठि नीठि भीतर गई, दीठि दीठि सों जोरि॥242॥

दीठि दीठि सों जोरि काज परबस अकुलानी।
गुरुजन आयसु बंधी सलोनी ओट दुरानी॥
प्रेम भरी 'हरीचन्द' चलत दृग चपल लजौहैं।
देबस चितवनि चितै गई मोरत निज भौहैं॥68॥

लागत कुटिल कटाच्छ सर क्यों न होय बेहाल।
लगत जु हिए दुसार करि, तऊ रहत नटसाल॥375॥

तऊ रहत नटसाल सदा सालत जिय मांहीं।
बेधि पार ह्वै जांहि तदपि ये निसरत नांहीं॥
सुधि न टरत 'हरिचन्द' छिनकहू सोअत जागत।
बारेकहू के लगे सदा लागत से लागत॥69॥

अनियारे, दीरघ दृगिनि किती न तरुनि समान।
वह चितवनि औरै कछू, जेहि बस होत सुजान॥588॥

जेहि बस होत सुजान भावते हैं कछु न्यारे।
सहज प्रीति रस रीति बिबस निज पिय बस पारे॥

कहा भयो 'हरिचन्द' जु पै लाखन तिय पिय ढिग।
प्रेमी रीझत प्रेम न अनियारे दीरघ दृग ॥70॥

जदपि चवाइनि चीकिनी चलति चहूं दिसि सैन।
तऊ न छांड़त दुहुंन के हंसी रसीले नैन ॥336॥

हंसी रसीले नैन करत बस रस अरुझाने।
भाव भरे रस भरे मैन के मनहुं खजाने॥
जग रीझो खीझो बरजौ घटिहैं नहिं चाइनि।
ये अपने रस पगे चाव किन करहिं चवाइनि ॥71॥

फूले फदकत लै फरी, पल कटाच्छ करवार।
करत बचावत विय नयन पाइक घाइ हजार ॥247॥

पाइक घाइ हजार करत जुरि जुरि दुरि जाहीं।
फिर डंटि सनमुख लरहिं बचहिं अभिरहिं मुरि जाहीं॥
जुगल चतुर 'हरीचन्द' भीर भुलवत नहिं भूले।
भिरे प्रेम रन रंग सुभग दृग गुन बल फूले ॥72॥

चमचमात चंचल नयन बिच घूंघट पट झीन।
मानहु सुर सरिता बिमल जल उछलत जुग मीन॥
जल उछलत जुग मीन रूप चारा ललचाने।
झलकत मुख तिमि निरखि न पिय मन रहत ठिकाने॥
सेत बसन 'हरिचन्द' कहिय तन उपमा केहि सम।
प्रगटत बाहर प्रभा चारु मुख चमकम चमचम ॥73॥

नावक सर से लाइकै तिलक तरुनि गइ ताकि।
पावक झर सी झमकि कै गई झरोखे झांकि ॥570॥

गई झरोखे झांकि पिया उर बिरह बढ़ाई।
नीके मुख नहिं लख्यो रह्यौ तासों अकुलाई॥
मीन उछरि जल ढुरै लुकै बन जिमि भजि सावक।
तिमि सो नैन नवाइ दुरी हति पिय उर नावक ॥74॥

सटपटाति सी ससि मुखी मुख घूंघट पट ढांकि।
पावक झर सी झमकि कै गई झरोखे झांकि ॥646॥

गई झरोखे झांकि लाज बस ठहरि सकी नहिं।
इत पिय मुख नहि लख्यौ भले तासों ब्याकुल महिं ॥
परे लाज बस जुगल बिकल वह घर मधि ये बट।
मिलि न सकत 'हरिचन्द' प्रेम की हिय मधि सटपट ॥75॥

छुटत न लाज न लालचौ प्यौ लखि नैहर गेह।
सटपटात लोचन खरे, भरे सकोच सनेह ॥524॥

भरे सकोच सनेह निरखि ढिग पिय ललचाहीं।
दुरि दुरि देखहिं कबहुं कबहुं लखि लोग लजाहीं ॥
रोकेहू नहिं रहत न घूंघट तजि सुख लूटत।
बिच चुम्बक के लोह सरिस कोउ बिधि नहिं छूटत ॥76॥

दूरौ खरे समीप को मानि लेत मन मोद।
होत दुहुन के दृगन ही बत रस हंसी बिनोद ॥639॥

बतरस हंसी बिनोद मान अरू मान मनावनि।
रिझनि खिझनि संकेत बदनि पुनि कंठ लगावनि ॥
नैनन ही 'हरिचन्द' करत सुख अनुभव पूरो।
नैन मिले जिय निकट जदपि ठाढ़े दोउ दूरो ॥77॥

तिय, कित कमनैती पढ़ी, बिन जिहि भौंह कमान।
चित बेधै चूकति नहीं बंक बिलोकनि बान ॥356॥

बंक बिलोकनि बान सबै बिधि अजगुत पारत।
बिनु देखी जो बस्तु ताहि तकि कै किमि मारत ॥
काढ़े औरहु चुभत अनोखे चोखे सर हिय।
बधिन बेझ लै जात सिकारिनि अति बिचित्र तिय ॥78॥

नीचे ही नीचे निपट दीठि कुही लौं दौरि।
उठि ऊंचे, नीचे दियो मन कुलिंग झकझोरि ॥257॥

मन कुलिंग झकझोरि कियो परबस मोहिं प्यारी।
कहां जाऊं, का करौं, भयो जिय अतिहि दुखारी ॥
अब नहिं आन उपाय सुधाघर रस बिनु सींचे।
सब बिधि कियो निकाम निरखि दृग ऊंचे नीचे ॥79॥

नैन तुरंगम अलक छबिछरी लगी जेहि आइ।
तिहि चढ़ि मन चंचल भयो मति दीनी बिसराइ ॥
मति दीनी बिसराइ बिबस इत सों उत डोलै।
छुटी धीरता डोर न मुखहू सों कछु बोलै ॥
सुपथ कुपथ नहिं लखत भयो बुधि बिनु उन्मद सम।
सब बिधि ब्याकुल भयो चेत चढ़ि नैन तुरंगम ॥80॥

ऐंचति सी चितवनि चितै भई ओट अलसाइ।
फिर उझकनि कों मृग नयनि दृगनि लगनिया लाइ ॥320॥

दृगनि लगनिया लाइ इहां सों कितै दुरानी।
कल न परत बिनु लखे बिकल गति मति बौरानी ॥
छांड़ि बिबस 'हरिचन्द' गई बुधि धीरज सैंचति।
दृग बंसी मन मीन रूप निज गुन बिझ ऐंचति ॥81॥

करे चाह सों चुटुकि कै खरें उड़ौहैं मैन।
लाज नवाए तरफरत करत खूंद सी नैन ॥542॥

करत खूंद सी नैन मेंड़ गुरुजन की तोरत।
लोक लीक नहिं गिनत उतैही हठि मुख जोरत ॥
मन सहीस 'हरीचन्द' थक्यौ बुधि बागहि पकरे।
खरै बिबस भे रहत न लाज लगामन जकरे ॥82॥

नेकु न झुरती बिरह झर नेह लता कुम्हिलाति।
नित नित होति हरी, खरी झालरति जाति ॥98॥

खरी झालरति जाति मनोरथ करि उमगाई।
सींचि सींचि अंसुवानि अवधि तरु लाइ चढ़ाई ॥
बनमाली 'हरिचन्द' चलहु लावहु लै उर सी।
लखहु आपनी नेह लता बलि नेकु न झुरसी ॥83॥

कर उठाइ घूंघट करत उसरत पट गुझरौट।
सुख मोटैं लूटीं ललन लखि ललना की लौट ॥424॥

लखि ललना की लौट ललन दृग टरत न टारे।
लोट पोट ह्वै रहे छके सुधि सकल बिसारे॥
दुरि दुरि साम्हे होत रसिक 'हरिचन्द' चतुर तर।
अरुझे बारहिं बार लखत त्रिबली मुख दृग कर ॥84॥

नभ लाली आली भई चटकाली धुनि कीन।
रतिपाली, आली, अनत, आए बनमालीन ॥115॥

आए बनमाली न करी सखि बहुत कुचाली।
काली ब्याली रैन बिरह घाली जिय माली॥
बाली दीपक जोति मन्द भइ प्रीति न पाली।
टाली हाली औध भई खाली नभ लाली ॥85॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खं. 2 सं. 8 सन 1875 ई. से खं. 6 सं. 5 सन 1878 ई. तक प्रकाशित]

प्रेम प्रलाप

सन 1877 ई.

प्रेम प्रलाप

नखरा राह राह को नीको।
इत तो प्रान जात हैं तुम बिनु तुम न लखत दुख जी को ॥
धावहु वेग नाथ करुना करि करहु मान मत फीको।
'हरीचन्द' अठलानि पने को दियो तुमहिं बिधि टीको ॥1॥

खुटाई पोरहि पोर भरी।
हमहिं छांड़ि मधुबन में बैठे बरी कूर कुबरी ॥
स्वारथ लोभी मुंह देखे की हमसों प्रीति करी।
'हरीचन्द' दूजेन के ह्वै कै हा हा हम निदरी ॥2॥

चरित सब निरदय नाथ तुम्हारे।
देखि दुखी जन उठि कि न धावज लावत कितहि अबारे ॥
मानी हम सब भांति पतित अति तुम दयाल तौ प्यारे।
'हरीचन्द' ऐसिहि करनी ही तौ क्यौं अधम उधारे ॥3॥

प्रभु हो ऐसी तो न बिसारो।
कहत पुकार नाथ तब रूठे कहुं न निबाह हमारो ॥
जौ हम बुरे होइ नहिं चूकत नित ही करत बुराई।
तौ फिर भले होइ तुम छांड़त काहे नाथ भलाई ॥
जो बालक अरुझाइ खेल मैं जननी सुधि बिसरावै।
तो कहा माता ताहि कुपित है ता दिन दूध न प्यावै ॥
माता पिता गुरु स्वामी राजा जौ न छमा उर लावै।
तो सिसु सेवक प्रजा न कोउ बिधि जग में निबहन पावै ॥
दयानिधान कृपानिधि केशव करुण भक्त भयहारी।
नाथ न्याव तजते ही बनिहै 'हरीचन्द' की बारी ॥4॥

नाथ तुम अपनी ओर निहारो।
हमरी ओर न देखहु प्यारे निज गुन गनन बिचारो ॥
जौ लखते अब लौं जन औगुन अपने गुन बिसराई।
तौ करते किमि अजामेल से पापी देहु बताई ॥
अब लौं तो कबहुं नहिं देख्यौ जन के औगुन प्यारे।
तौ अब नाथ नई क्यौं ठानत भाखहु बार हमारे ॥
तुव गुन छमा दया सों मेरे अघ नहिं बड़े कन्हाई।
तासों तारि लेहु नन्द नन्दन 'हरीचन्द' को धाई ॥5॥

मेरी देखहु नाथ कुचाली।
लोक वेद दोउन सों न्यारी हम निज रीति निकाली ॥
जैसो करम करै जग मैं जो सो तैसो फल पावै।
यह मरजाद मिटावन की नित मेरे मन में आवै ॥
न्याय सहज गुन तुमरो जग के सब मतवारे मानै।
नाथ ढिठाई लखहु ताहि हम निहचय झूठो जानै ॥
पुन्यहि हेम हथकड़ी समझत तासों नहिं बिस्वासा।
दयानिधान नाम की केवल या 'हरिचन्दहि' आसा ॥6॥

लाल यह नई निकाली चाल।
तुम तो ऐसे निठुर रहे नहिं कबहुं पिया नन्दलाल ॥
हमरिहि बारी और भए कह तुम तौ सहज दयाल।
'हरीचन्द' ऐसी नहिं कीजै सरनागत प्रतिपाल ॥7॥

अनीतैं कहौ कहां लौं सहिए।
जब ब्यौहारन देखि देखि के कब लौं यह जिय दहिए ॥
तुम कछु ध्यानहि मैं नहिं लावत तौ अब कासों कहिए।
'हरीचन्द' कहवाइ तुम्हारे मौन कहां लौं रहिए ॥8॥

अहो इन झूठन मोहिं भुलायो।
कबहुं जगत के कबहुं स्वर्ग के स्वादन मोहिं ललचायो ॥
भले होई किन लोह हेम की पाप पुन्य दोउ बेरी।
लोभ मूल परमारथ स्वारथ नामहिं मैं कछु फेरी ॥
इनमैं भूलि कृपानिधि तुमरो चरन कमल बिसरायो।
तेहि सों भटकत फिर्‍यौ जगत मैं नाहक जनम गंवायो ॥

हाय हाय करि मोह छांड़ि कै कबहुं न धीरज धार्‍यौं।
या जग जगती जोर अगिनि मैं आयसु दिन सब जार्‍यौ ॥
करहु कृपा करुनानिधि केशव जग के जाल छुड़ाई।
दीन हीन 'हरिचन्द' दास कों बेग लेहु अपनाई ॥9॥

दीन पै काहे लाल खिस्याने।
अपनी दिसि देखहु करुनानिधि हमपैं कहा रिसाने ॥
माछर मारे हाथ जलहि इक कहत बात परमाने।
महा तुच्छ 'हरिचन्द' हीन सों नाहक भौंहहिं ताने ॥10॥

हमहूं कबहुं सुख सों रहते।
छांड़ि जाल सब निसि दिन मुख सों केवल कृष्णहि कहते ॥
सदा मगन लीला अनुभव मैं दृग दोउ अविचल बहते।
'हरीचन्द' घनस्याम बिरह इक जग दुःख तृन सम दहते ॥11॥

कहो किमि छूटै नाथ सुभाव।
काम क्रोध अभिमान मोह संग तन को बन्यौ बनाव ॥
ताहू मैं तव माया सिर पैं औरहु करन कुदांव।
'हरीचन्द' बिनु नाथ कृपा के नाहिंन और उपाव ॥12॥

बेदन उलटी सबहि कही।
स्वर्ग लोभ दै जंगहि भुलायो दुनिया भूलि रही ॥
सुद्ध प्रेम तुब कहुं नहिं गायो जो श्रुति सार सही।
'हरीचन्द' इनके फंदन परि तुब छबि जिय न गही ॥13॥

सूरता अपुनी सबै डुलाई।
हमसे महा हीन किकर सों करि कै नाथ लराई ॥
दयानिधान क्षमासागर प्रभु बिदित नाम कहवाई।
हमरे अघहिं देखि तुम प्यारे कीरति तौन मिटाई ॥
कबहुं न नाथ कृपा सों मेरे अघ ह्वैहैं अधिकाई।
तौ किन तारि हीन 'हरीचन्दहि' मेटत जगत हंसाई ॥14॥

कुढ़त हम देखि देखि तुव रीतैं।
सब पैं इक सी दया न राखत नई निकाली नीतैं ॥

अजामेल पापी पै कीनी जौन कृपा करि प्रीतैं।
सो 'हरिचन्द' हमारी बारी कहां बिसारी जी तैं ॥15॥

बड़े को होत बड़ी सब बात।
बड़ो क्रोध पुनि बड़ी दयाहू तुम मैं नाथ लखात ॥
मोसे दीन हीन पै नहिं तौ काहे कुपित जनात।
पै 'हरीचन्द' दया रस उमड़े ढरतेहि बनि है तात ॥16॥

हमारे जिय यह सालत बात।
दयानिधान नाम तुव आछत हम ऐसेहिं रहि जात ॥
और अधी तो तरत पाप करि यह श्रुति कथा सुनात।
हम मैं कौन कसर नन्द-नन्दन यह कछु नाहिं जनात ॥
जह लौं सोचे सुने किए अघ बदि बदि संझा प्रात।
तऊ तरन को कारन दूजो 'हरीचन्दहि' न लखात ॥17॥

अहो हरि अपुने बिरुदहि देखौ।
जीवन की करनी करुनानिधि सपनेहुं जनि अवरेखौ ॥
कहुं न निबाह हमारो जौ तुम मम दोसन कहं पेखौ।
अवगुन अमित अपार तुम्हारे गाइ सकत नहिं सेखौ ॥
करि करुना करुनामय माधव हरहु दुखहि लखि भेखौ।
'हरीचन्द' मम अवगुन तुव गुन दोउन को नहिं लेखौ ॥18॥

करुना करि करुनाकर बेगहि सुध लीजिए।
सहि न सकत जगत दाव तुरत दया कीजिए ॥
हमरे अवगुनहिं नाथ सपनेहुं जिनि देखौ।
अपुनी दिसि प्राननाथ प्यारे अवरेखौ ॥
हम तो सब भांति हीन कुटिल कूर कामी।
करत रहत धन जन के चरन की गुलामी ॥
महा पाप पुष्ट दुष्ट धरमहिं नहिं जानौं।
साधन नहिं करत एक तुमहिं सरन मानौं ॥
जैसे हैं तैसे तुव तुमहीं गति प्यारे।
कोऊ बिधि राखि लेहु हम तो सबहि हारे ॥
द्रुपद सुता अजामिल गज की सुध कीजै।
दीन जानि 'हरिचन्द' बांह पकरि लीजै ॥19॥

जोड़ को खोजि लाल लरिए।
हम अबलन पैं बिना बात ही रोस नहीं करिए॥
मधुसूदन हरि कंस निकंदन रावन हरन मुरारि।
इन नांवन की सुरत करो क्यों ठानत हमसों रारि॥
निबलन कों बधि जस नहिं पैहौ सांचो कहत गुपाल।
'हरीचन्द' ब्रज ही पै इतने कहा खिसाने लाल॥20॥

पियारे बहु बिधि नाच नचायो।
यह नहिं जानि परी केहि सुख के बदले इतो दुखायो॥
ब्रज बसि कै सब लाल गंवाई घर घर चाव चलायो।
हम कुल बधुन कलंकिनि कुलटा डगरै डगर कहायो॥
हम जानी बदनाम दै हरि करिहै सब मन भायो।
ताको फल यों उलटो दीनो भलो निबाह निभायो॥
ऐसी नहिं आसा ही तुम सों जो तुम करि दिखरायो।
'हरीचन्द' जेहि मीत कह्यौ सोइ निठुर धैरि बनि आयो॥21॥

जिनके देव गुबर धन धारी ते औरहि क्यौं मानै हो।
निरभय सदा रहत उनके बल जगतहि तृन करि जानै॥
देवी देव नाग नर मुनि बहु तिनहिं नाहिं उर आनै हो।
'हरीचन्द' गरजत निधरक नित कृष्ण कृष्ण बल साने हो॥22॥

हमारे ब्रज के सरबस माधो।
किन ब्रत जोग नेम जप संजम बृथा गोरि तन साधो॥
अष्ट सिद्धि नव निधि को सब फल यहै न और अराधौ।
'हरीचन्द' इनहीं के पद जुग पंकज मन अलि बांधो॥23॥

पिय तोहिं राखौंगी हिय मैं छिपाय।
देखन न दैहों काहु पियारे रहौंगी कंठ निज लाय॥
पल की ओट होन नहिं दैहौं लूटौंगी सुख समुदाय।
'हरीचन्द' निधरक पीओंगी अधरामृतहि अघाय॥24॥

तुम सम कौन गरीब नेवाज।
तुम सांचे साहेब करुनानिधि पूरन जन मन काज॥

सहि न सकत सखि दुखी दीन जन उठि धावत ब्रजराज।
विह्वल होइ संवारत निज कर निज भक्तन के काज ॥
स्वामी ठाकुर देव सांच तुम वृन्दावन महराज।
'हरीचन्द' तजि तुमहिं और जे जांचत ते बिनु काज ॥25॥

तो तेरे मुख पर बारी रे।
इन अंखियन को प्रान पिया छबि तेरी लागत प्यारी रे ॥
तुम बिनु कल न परत पिय प्यारे बिरह बेदना भारी रे।
'हरीचन्द' पिय गरे लगाओ पैयां परौं गिरधारी रे ॥26॥

तुमरी भक्त बछलता सांची।
कहत पुकारि कृपानिधि तुम बिनु,
और प्रभुन की प्रभुता कांची ॥
सुनत भक्त दुख रहि नसकत तुम,
बिनु धाए एकहु दिन बांची।
द्रवत दयानिधि आरत लखतहि,
सांच झूठ कछु लेत न जांची ॥
दुखी देखि प्रहलाद भक्त निज,
प्रगटे जग जै जै धुनि मांची।
'हरीचन्द' महि बांह उबार्‍यौ,
कीरति नटी दसहुं दिसि नांची ॥27॥

मेरे माई प्रान जीवन धन माधो।
नेम धरम ब्रत जप तप सबही जाके मिलन अराधो ॥
'जो कछु करौं सबै इनके हित इन तजि और न साधों।
'हरीचन्द' मेरे यह सरबस भजौं कोटि तजि बाधो ॥28॥

हौं जमुना जल भरन जात ही मारग माहिं मिले री कान्ह।
करि मुठ भेर अंक बरबस भरिरोक्यौ री मोहिं अंचल तान ॥
भौंह नचाइ प्रेम चितवन लखि हंसि मुसुकाइ नैन रह्यौ जोरि।
घट गिराइ करि और अचगरी दूर-खरो भयो अंचर छोरि ॥
कहा कहौं कछु कहि नहिं आवत करिकै हिये काम की चोट।
मन लै तन लै नैन चैन लै प्रानहुं लै भयो अंखियन ओट ॥
कहा करौं कित जाऊं सखी री वा बिन मो कहं कछु न सुहाय।
हियो भर्‍यौ आवत छिनही छिन हाय कहा करौं कछु न बसाय ॥

कित पाऊं कित अंक लगाऊं कित देखूं वह सुन्दर रूप।
हाथ मिले बिन किमि जिय राखौं कहां मिलै मेरे गोकुल भूप ॥
रोऊत बीतत रैन दिवस मोहिं बेबस ह्वै हौं रहौं करि हाय।
जो तन तजै मिलैं मोहि निहचै तौ जिअ त्यागौं कोटि उपाय ॥
हाय कहा करौं करि न सकत कछु रोअत ही जैहै सखि जीय।
'हरीचन्द' बिनु मिले स्याम घन सुन्दर मोहन प्यारे पीय ॥29॥

जनन सों कबहूं नाहिं चली।
सदा सर्बदा हारत आए जानत भांति भली ॥
कहा कियो तुम बलि राजा सों चतुराई न चली।
बांधन गए बंधाए आपुहि व्यर्थहि बने छली ॥
भीषम नै परतिज्ञा टारी चक्र गहायो हाथ।
अरजुन को रथ हांकत डोले रन मैं लीने साथ ॥
जसुदा जू सों हाथ बंधायो नाचे माखन काज।
मैं रिनियां तुम्हरो गोपिन सों कह्यौ छोड़ि के लाज ॥
रिन बहु जानि छोड़ि कै गोकुल भागे मथुरा जाय।
सदा सर्वदा हारत आए भक्तन सों ब्रजराय ॥
हम सोहूं हारत ही बनिहै कबहुं न जैहो जीत।
तासों तारौ 'हरीचन्द' को मानि पुरानी प्रीति ॥30॥

श्री राधे कहा अजगुत कियो।
अखिल लोक निकुंज नायक सहज निज करि लियो ॥
जासु माया जगत मोहत लखि तनिक दृग कोर।
प्रभु तुव मोह मोहे नचत भौंह मरोर ॥
रसन को अवलम्ब जेहि आनन्दघन स्रुति कहत।
साई रसिक कहावत तो सों तोहि सों सुख लहत ॥
जासु रूठे जगत मैं कछु सेस नहिं रहि जात।
सोइ तव रूठे बिकल ह्वै दीन बने लखात ॥
जगत स्वामी नाम के करि भेद जौन कहात।
सो कहत तोहिं स्वामिनी यह अतिहि अचरज बात ॥
रिखिन जो रस नहिं लह्यो करि थके कोटि प्रसंस।
सहज किय 'हरीचन्द' सो करि प्रगट बल्लभ बंस ॥31॥

तुम बिनु तलपत हाय बिपति बढ़ी भारी हो।
तुम बिनु कोऊ नहिं मोर पिया गिरधारी हो॥
तुम बिनु व्याकुल प्रान धरौं कैसे धीर हो।
आइ मिलौ गर लगौ पिया बलबीर हो॥
तुम बिनु सूनी सेज देखि जिय जारई।
काम अकेली जानि बान कसि मारई॥
तुम बिनु अति अकुलाय बैन नहिं कहि सकौं।
मिलौ पिया 'हरीचन्द' भई बौरी बकौं॥32॥

करनी करुनासिन्धु की कासों कहि जाई।
अति उदार गुन गुन भरे गोबरधन राई॥
तनिक तुलसी दल के दिये तेहि बहु करि मानै।
सेवा लघु निज दास की परबत सी जानै॥
अजामेल सुत आपनो तुव नाम पुकार्‍यौ।
ताके अघ सब दूर कै तुम तुरत उबार्‍यौ॥
कहा ब्याध गजराज सों करनी बनि आई।
कहा गीध गनिका कियो तारयो तुम घाई॥
कहा कपिन को रूप है का गुन बड़िआई।
तिन सों बोले बन्धु से ऐसी करुनाई॥
कहां सुदामा बापुरो कहं त्रिभुवन स्वामी।
ताकी अग्रज सारखी किय चरन गुलामी॥
कहां ग्वाल और ग्वालिनी करनी की पूरी।
जिनके संग बन मैं फिरे हरि करत मजूरी॥
ब्रज के मृग पसु भीलनी तृन बीरुध जेते।
बन्धु सरिस माने सबै करुनानिधि तेते॥
कहां अधम अघ सों भर्‍यौ 'हरीचन्द' भिखारी।
जेहि माधो सहजहि लियो गहि बांह उबारी॥33॥

मेरी तुमरी प्रीति पिया अब जानि गए सब लोगवा।
लाख छिपाए छिपे नहिं नैना इस प्रगट्यो संजोगवा॥
हंसत सबै मारत मिली ताना सुनि सुनि बाढ़त सोगवा।
ताहू पर 'हरीचन्द' मिलत नहिं कठिन भयो यह रोगवा॥34॥

प्राननाथ मन मोहन प्यारे बेगहि मुख दिखराओ।
तलफत प्रान मिले बिनु तुमसों क्यों न अबहिं उठि धाओ॥
केहि बिधि कहौं कहत नहिं आवै जिय के भाव पियारे।
अपनो नेह हमहिं पहिचानत हे ब्रजराज दुलारे॥
जग मैं जा कहं प्रीति रीति सब भाषत हैं नर नारी।
तासों अधिक बिलच्छन हमरी प्रेम चाल कछु न्यारी॥
मोह कहत कोउ भक्ति बखानत नेह प्रेम कोउ भाखै।
तिन सब सों बढ़ि प्रीति हमारी कहो नाम कह राखै॥
समुझत कोउ न बात हमारी पगल सबहिं बखानै।
तुमरे नेह अलौकिक की गति कहौ कोऊ किमि जानै॥
जाके कहे सुने जग रीझत सो कछु और कहानी।
हम जिमि पागल बकत सुनत नहिं तासों कोउ मम बानी॥
जानत नहिं परिनाम आपनो केवल रोअन जानै।
अति विचित मेरी गति प्यारे कैसे कहो बखानै॥
छूटत जग न धरम कछु निबहत रहत जीअ अकुलाई।
होत न कछु निरनै का ह्वै है तुम बिन कुंअर कन्हाई॥
कहा करैं कित जांय पियारे कछुक उपाव बताओ।
'हरीचन्द' ऐसे नेहिन कों क्यौ न धाइ पर लाओ॥35॥

तुम बिनु प्यारे कहूं सुख नाहीं।
भटक्यौ बहुत स्वाद रस लंपट ठौर ठौर जग मांहीं॥
प्रथम चाव करि बहुत पियारे जाइ जहां ललचाने।
तहं ते फिर ऐसो जिय उचटत आवत उलटि ठिकाने॥
जित देखो तित स्वारथ ही की निरस पुरानी बातैं।
अतिहि मलिन व्यवहार देखि कै घिन आवन है तातै॥
हीरा जेहि समझत सो निकरत कांचो कांच पियारे।
या व्यवहार नफा पाछें पछतानो कहत पुकारे॥
सुन्दर चतुर रसिक अरु नेही जानि प्रीति जित कानो।
तिन स्वारथ अरु कारो चित हम भले सबहि लख लीनो॥
सब गुन होई जुपै तुम नाहीं तौ बिनु लोन रसोई।
ताही सो जहाज पच्छी सम गयो अहो मन होई॥
अपने और पराए सब ही जदपि नेह अति लावैं।
पै तिन सों संतोख होत नहिं बहु अचरज जिय आवैं॥
जानत भलें तुम्हारे बिनु सब बादहि बीतत सांसैं।
'हरीचन्द' नहिं छुटत तऊ यह कठिन मोह की फांसैं॥36॥

भूलि भव भोगन झूमत फिर्‌यौं।
स्वर कूकर सूकर लौं इत उत डोलत रमत फिर्‌यौं ॥
जहं जहं छुद्र लह्यौ इन्द्री सुख तहं तहं भ्रमत फिर्‌यौं।
छन भर सुख नित दुखमय जे रस तिन मैं जमत किर्‌यौं ॥
कबहुं न दुष्ट मनहि करि निज बस कामहि दमत फिर्‌यौं।
'हरीचन्द' हरि पद पंकज गहि कबहुं न नमत फिर्‌यौं ॥37॥

जो पै ऐसिहि करन रही।
तो क्यों इतनी प्रीत बढ़ाई जो न अंत निबही ॥
मीठे मीठे बचन बोलि कै दीनी क्यों परतीति।
अब क्यौं छांड़ि पराए ह्वै गए कहो कहो कौन यह नीति ॥
जौ भधुपुरी गमन तुम पहिलेहि बदि राखी मन माहीं।
क्यों बृन्दाबन सरद चांदनी बिहरे दे गल बाहीं ॥
कहां गई वह बात तुम्हारी कहां गयो वह प्यार।
कित गई प्रेम भरी वह चितवनि जिहि लखि लाजत मार ॥
पहिले कहि देते हम सों नहिं निबहैगो यह प्रेम।
'हरीचन्द' यह दगा दई क्यों ठानि प्रीति को नेम ॥38॥

प्राननाथ भई सब भांति तिहारी।
बिगरी सबही भांति कोऊ नाहिन रखवारी ॥
कहा करैं कि जायं ठौर नहिं कतहुं लखाई।
सब भांतिन सों दीन भई दोउ लोक गंवाई ॥
माने घरम न एक रही तुव पद अनुरागीं।
कठिन करम अरु ज्ञान लखत दूरहि तें भागीं ॥
तुव पद बल अभिमान न कोउ कहं तृन सम जान्यो।
हित अनहित नहिं लख्यौ जगत काहुवै न मान्यो ॥
काहूं की नहिं होइ रही कोउ कियो न अपनो।
ऐसी बेसुध जगत बसी मनु देखत सपनो ॥
भली बात जेहि जगत कहत सो एक न कीनी।
रही कुचालन सनी सदा गति अपजस पीनी ॥
काहू सों नहिं डरीं रहीं बहु बैर बढ़ाई।
अनहित जगहिं बनायो नहिं सीखी चतुराई ॥
महामोद मैं बहीं सदा दुख ही दुख पायो।
रोअत ही करि हाय हाय सब जनम गंवायो ॥

सुख केहि कहत न हाय कबौं सपनेहूं जान्यौ।
जग के स्वादन हूं कहं नहिं कबहूं पहिचान्यौ॥
उमगि उमगि कै सदा रहीं रोअत दुख मानी।
कोउ सों मरम न कह्यो रहीं मन फिरत दिवानी॥
'हरीचन्द' कोउ भांति निबाही प्रीति तुम्हारी।
पै अब सो नहिं चलत हहा प्यारे बनवारी॥39॥

खोजहू न लीनो फेरि नैन बान मारि कै।
तड़पत ही छोड़ि गयो घायल करि डारि कै॥
भौंह की कमान तान गुन अंजन छाकि कै।
काम लहर सों बुझाई मार्‍यौ मोहिं ताकि कै॥
आकुल हौं तलपत तेहि दया नाहिं आवई।
पानिप पानिप पिआइ मोहि ना जिआवई॥
प्रानहु अवसाने तन ब्याकुल भई भारी।
'हरीचन्द' निरदै मन मोहना सिकारी॥40॥

जहां तहां सुनियत अति प्यारो
प्यारे हरि को सुखद बिसद जस।
करन रन्ध्र मैं स्रवत सुधा सम
सीतल होय हियो सुनि अति रस॥
अजामेल गज सों जो कीनी
दीन सुदामा कों जु कियो हित।
सबरी कपि गनिका की करनी
नाथ कृपा गावत सब जित तित॥
बधिक बिराध व्याध जवनादिक
तारे छिनक बार लागी नहिं।
पावन कियो पुलिंदी गन कों दै
कुच कुंकुम जुत पद रज महिं॥
भांति अनेक बिबिध बिधि बरनित
अगिनित गुनगन गथित मथित श्रुति।
जहां तहां सुनियत सबके मुख
श्रवन सुखद सन्तत हिय हित अति॥
कोउ जस कोउ गरीब नेवाजी
कोऊ पतित पावनता गावत।

दीन बंधु ताई हितकारी
सरस सुझाव नेह बरसावत ॥
नृप नारी द्रौपदी आदि सम
गावत ग्राम नगर नारी नर।
हियो भर्‍यौ आवत सुनि सुनि कै
गोविन्द नामांकित जस सुन्दर ॥
कहं लौं कहौ कहत नहिं आवत
जो हरि करत पतित हित कारन।
'हरीचन्द' सरनागत वत्सल,
दीन दयानिधि पतित उधारन ॥41॥

मनवत मनवत ह्वै गयो भोर।
खसित निसा नायक पच्छिम दिसि सोर करन तम चोर ॥
पियहि सबै निसि जागत बीती खरे खरे कर जोर।
आलस बस अब लरखरात पग निरखत तुव दृग कोर ॥
क्यों सखि प्रेमहि लाज लगावति करिकै बृथा मरोर।
'हरीचन्द' गर लग उठि पिय के हौं तोहिं कहत निहोर ॥42॥

आजु मेरे भोरहि जागे भाग।
आए पिया तिया रस भाने खेलत दृग जुग फाग ॥
भलौं हमैं भूलै तौ नाहीं राख्यौ जिय अनुराग।
सांझ भोर एक ही हमारे तुव आवन की लाग ॥
मंगल भयो भोर मुख निरखत मिटे सकल निसि दाग।
'हरीचन्द' आओ गर लागो सांचो करौ सोहाग ॥43॥

हम तुम पिया एक से दोऊ।
मानौ बिलग न नेक सांवरे घट बढ़िकै नहिं दोऊ ॥
तुम जागे हमहूं निसि जागे तिय संग जोहत बाट।
खरे बिताई निसि हम दोउन मनवत पकरि कपाट ॥
सिथिल बसन तुमरे औ हमरे भोगत पछरा खात।
थाकी गति दोउन की आलस इत उत आवत जात ॥
अरुनारे दृग अंजन फैल्यौ बिलसत होइ हरास।
टूटे बन्द कहा कंचुकि के लपटत लेत उसास ॥
हम तुम एक प्रान सन दोऊ यामै कछू न भेद।
'हरीचन्द' देखहु बिन श्रम सों दोऊ के मुख स्वेद ॥44॥

ईमन

गोरी गोरी गुजरिया भोरी कान्हर नट के संग
ललित जमुन तट नव बसंत करि होरी।
सोभा सिन्धु बहार अंग प्रति दिपति देह
दीपक सी छबि अति मुख सुदेस ससि सोरी॥
आसा करि लागी पिय सों रट पंचप सुर गावत ईमन
हट मेघ बरन 'हरीचन्द' बदन अभिराम की बरजोरी।
सारंगनैनि पहिरि सुहा सारी भयो कल्यान
मिले श्री गिरिधारी छबि पर जन तृन तोरी॥45॥

प्यारे की छबि मनमानी सिर मोर मुकुट
नट भेख धरे मेरे घर आए दिलजानी।
चतुर खिलारी गिरिधारी हंसि हंसि गए लाए
मन भाए 'हरीचन्द' न सुरत भुलानी॥46॥

प्यारी जू के तिल पर बलि बलिहारी।
जा मिस बसन कपोल न अनुछिन लघु बनि पिय गिरधारी॥
पिय की दीठ चीन्ह मनु सोहत लागत अति ही प्यारी।
'हरीचन्द' सिंगार तत्त्व सी लखि मोहन मनवारी॥47॥

कहु रे श्रीवल्लभ राजकुमार।
दीन उधारन आरति नासन प्रगट कृष्ण अवतार॥
काहें तू भरमायो डोलत साधन करत हजार।
यह भव रुज क्यौंहू नहिं जैहै बिना चरन उपचार॥
कौन पतित सो प्रेम निबहि है जो बहु अघ आगार।
श्रुति पुरान कछु काम न ऐहैं यह तोहिं कहत पुकार॥
बुरे दिनन को साथी नहिं कोउ मात पिता परिवार।
'हरीचन्द' तासों बिट्ठल भजु अरे यहै श्रुति सार॥48॥

जौ पैं श्रीवल्लभ सुतहिं न जान्यौ।
कहां भयो साधन अनेक मैं परिकै बृथा भुलान्यौ॥
बादि रसिकता अरु चतुराई जौ यह जीअ न आन्यौ।
मर्‌यौ बृथा विषया रस लम्पट कठिन करम मैं सान्यौ॥

सोई पुनीत प्रीत जेहि इनसों बृथा बेद मथि छान्यौ।
'हरीचन्द' श्रीबिट्ठल बिनु सब जगत झूठ करि मान्यौ ॥49॥

पतित उधारन नाम सही।
श्रीवल्लभ बिट्ठल बिनु दूजों नेह निबाहन हार नहीं॥
साधन बृथा न करु मन लम्पट भूलि बुद्धि क्यों जात बही।
कोऊ कछू काम नहिं ऐहै क्यों डोलत करि मही मही॥
दीनन को हित नाहिंन दूजो यहै बात करि सपथ कही।
'हरीचन्द' ये अधम उधारन अरे यही इक यही यही ॥50॥

चिर जीयो मेरो श्रीवल्लभ कुल।
माया मत खर तिमिर दिवाकर
प्रेम अमृत पय रस सागर पुल॥
कलि खल गन उद्धरन रसिक जन
सरन करन बिरहिन बिरहाकुल।
'हरीचन्द' दैवी जन प्रियतम
पतित उद्धरन महिमा अन तुल ॥51॥

श्रीवल्लभ प्रभु मेरे सरबस।
पचौ बृथा करि जोग जाय कोउ
हमको तो इक यहै परम रस॥
हमरे मात पिता पति बन्धू
हरि गुरु मित्र धरम धन कुल जस।
'हरीचन्द' एकहि श्रीवल्लभ
तजि सब साधन भए इनके बस ॥52॥

गीत

बना मेरा ब्याहन आया बे।
बना मेरा सब भन भाया बे॥
बना मेरा छैल छबीला बे।
बना मेरा रंग रंगीला बे॥
बनरा रंगीला रंगन मेरा सबन के दृग छावना।
सुन्दर सलोना परम लोना श्याम रंग सुहावना॥

अति चतुर चंचल चारु चितवन जुवति चित्त चुरावना।
ब्याहन चला रंग रस रला जसुमति लला मन भावना॥
बना के मुख मरवट सोहै बे।
बना देखन मन मोहै बे॥
बना केसरिया जामा बे।
बना लखि मोहत कामा बे॥
लखि कान मोहै श्याम छबि पर लखत सुन्दर जेहरा।
सिर जरकसी चीरा झुकाए खुला तिस पर सेहरा॥
कटि ललित पटुका बंधा सूहा सुभग दोहरा तेहरा।
जियमें हमारी नवल दुलहिन हेत धरे सनेहरा॥
बना के नैना बांके बे।
बने दोनों मद छाके बे॥
बना की भौंह कमानै बे।
बनी का हिअरा छानै बे॥
छाने बना का नवल हिअरा भौंह बांकी प्यार की।
जुलफैं बनी उलफैं जिया की हिलत मोहन मार की॥
कर सुख मेहंदी पग महावर लपट अतर अपार की।
जिय बस गई सूरत निवानी दूलहे दिलदार की॥
बना मेरा सब रस जानै बे।
बना प्रीतहि पहिचानै बे॥
बना चतुरा रस बादी बे।
बनी रस अधर सवादी बे॥
रस अधर स्वादी बनी का अंग अंग रस कस के भरा।
जिय प्रेम मानै नेह जानै सकल गुन आगर खरा॥
बिधि मदन मानी छबि गुमानी नवल नेही नागरा।
निधि रसिक की 'हरीचन्द' सरबस नन्द बंस उजागरा॥53॥

लावनी

सखी चलो सांवला दूलह देखन जावैं।
मधुरी मूरत लखि अंखियां आज सिरावैं॥
नीली घोड़ी चढ़ि बना मेरा बन आया।
भोले मुख मरवट सुन्दर लगत सुहाया॥
जामा चीरा जरकसी चमक मन भाया।
सूहा पटुका कटि कसे भला छबि छाया॥

हाथों मेंहदी मन हाथों हाथ चुरावैं।
मधुरी मूरत लखि अंखियां आज सिरावैं॥
सिर मौर रंगीला तुर्रों की छबि न्यारी।
मोती लर गूथा सेहरा मुख मन हारी॥
फूलों की बेनी झबिया लटकै प्यारी।
सिर पेंच सीस कानन कुंडल छबि भारी॥
घुंघराली अलकैं नैनन को अति भावैं।
मधुरी मूरत लखि अंखियां आज सिरावैं॥
तैसी दुलहिन संग श्रीवृषभानु कुमारी।
मौरी सिर सोहत अंग केसरी सारी॥
मुख वरवट कर मैं चूरी सरस संवारी।
नकबेसर सोभित चितहि चुरावनवारी॥
सिर सेंदुर मुख मैं पान अधिक छबि पावै।
मधुरी मूरत लखि अंखियां आज सिरावैं॥
सखियन मिलि रस सों नेह गांठ लै जोरी।
रहिं वारि फेरि तन मन धन सब तृन तोरी॥
गावत नाचत आनन्द सों मिलि कै गोरी।
मिलि हंसत हंसावत सकत न कंकन छोरी॥
'हरीचन्द' जुगल छबि देखि बधाई गावैं।
मधुरी मूरत लखि अंखियां आज सिरावैं॥54॥

ईमन, ताल नाम गर्भित

जै आदि ब्रह्म औतारी इक अलख अगोचर चारी।
लक्ष्मीपति घन जलद बरन तन रुद्र तीन
दृग चार बदन पति सुन्दर गरुड़ सवारी।
कहा कहों री रूपक हरि को चलत कबहुं
धीमे कहुं द्रुत गति बृंदाबन बनवारी॥
सुफल कतल कर जुलुफ बनी सिर भक्त जनन के आड़े आवत
'हरीचन्द' यह सृष्टि रची रचि अचिर चरचरी सारी॥55॥

लावनी

तुम बिनु व्याकुल बिलपत बन बन बनमाली।
मति करु बिलंब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥
तुव ध्यान धारि धरि बसी अघर बजावैं।
भरि बिरह नाम लै राधा राधा गावैं॥

तुव आगम सुमिरत छन छन सेज सजावैं।
मग लखत द्वार पर बार बार उठि धावैं॥
मुरछात देखि तुव बिना सेज कहं खाली।
मति करु बिलम्ब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥

संजोग साज सिंगार न तुव बिनु भावैं।
तन चन्द चांदनी औरहु बिरह जरावैं॥
जल चन्दन माला फूल न कछू सुहावैं।
तुम आगम बिनु कर मींजि मींजि पछतावैं॥
भई रैन चैन बिनु डसन मदन बिख ब्याली।
मति करु बिलम्ब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥

अपने अपराधन कबहूं बैठि बिचारै।
तुव मिलन मनोरथ अल बल बैन उचारै॥
कबहूं संगम सुख सुमिरत हियरो हारै।
कबहूं तेरे गुन कहि कहि धीरज धारै॥
भई रात ऊजरी दुःख बियोग सौं काली।
मति करु बिलम्ब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥

सुमिरत तोहि दृग भरि रहत श्याम सुखदाई।
गद्गद गल बचनहु बोलि न सकत कन्हाई॥
पिय दुखित दसा देखी नहिं अब तो जाई।
कर जोरत मिलु अब मोहन सों सखि धाई॥
'हरीचन्द' मनावत पूरब छाई लाली।
मति करु बिलम्ब उठि चलु बेगहि सुनु आली॥56॥

अष्टपदी

रासे रमयति कृष्णं राधा।
हृदि निघाय गाढ़ालिंगन कृत हृत बिरहातप बाधा॥
आश्लिष्यति चुम्बति परिरम्भति पुनः पुनः प्राणेशं।
सात्विकभावोदयशिथिलायित मुक्ताऽकुञ्चितकेशं॥
भुजलतिकाबन्धनमांबद्धं कामकल्पतरुरूपं।
सीमन्तिनी कोटिशतमोहनसुन्दरगोकुलभूपं॥

स्वालिंगनकण्टकित तनु स्पर्शोदितमदनविकारं।
स्खलित वचनरचन श्रवण स्खलितीकृतरतरति मारं॥
रतिविपरीतलालसालसरस लसित मोहिनीवेशं।
निज सीत्कारमोहितप्रमदादत्तमाधवावेशं॥
हुंकृतिद्विगुणसुरतपणश्रमलोलित नाशाभूषं।
निजासेचनकसिंचित शशधार मुख स्वेदपीयूषं॥
वात्स्यायनबिधिविहितषडङ्ग विलक्षण रक्षण दक्षं।
चतुराशीति चतुर तरता धृत कामकलाकलपक्षं॥
स्वेद सुगन्धविमूर्च्छितालिकुल सहकिङ्किणिकलरावं।
नखदानाघरखंडनजनितोद्भटसहचारीभावं॥
कठिनकुचामर्दन शिथिलीकृतकरकङ्कणभुजबन्धं।
प्रतिमुद्रितसिंदूरकज्जलादिक मुख हृदय स्कन्धं॥
निशावसानाजागर जेनित सखीजनमोहित तन्द्रे।
गायति गोकुलचन्द्राग्रज कवि हरिश्चन्द्र कुलचन्द्रे॥57॥

गरबो

थारे मुख पर सुन्दर श्याम, लटूरी लट लटके छे।
जे ने जोईने म्हारो मन लाल, ज़ाइ जाइ अटके छे॥
थारा सुन्दर नैन विशाल, प्यारा अति रूडा छे।
जेने जोईने जग ना रूप, लागे भूंडा छे॥
थारा सुन्दर गोल कपोल, गुलाब ज़ेब्हा फूल्या छे।
जेने जोईने मन भ्रमर, जुवतिओ ना भूल्या छे॥
तारे कंठे बे बघनखा, मनोहर सोहे छे।
जेवा नव ससिना बे कटकां, लखतां मोहे छे॥
तारा बोली अमृत सनी, करण सुखदाई छे।
जेने साम्हड़तां मन जाय, एह्वी मिठाई छे॥
तारो नख सिख रूप अनूप, सोभा प्यारी छे।
जेनी सोभा लखीने 'हरीचन्द' बलिहारी छे॥58॥

बाला वल्लभ सुमिरण करतां सहु दुख भागे छे।
जेनो मंगलमय सुभ नाम अमृत जेवो लागे छे॥
जेनो सुन्दर श्याम स्वरूप कृष्ण जेवो सोहे छे।
जेने कंकुम तिलक ललाटे म्हारूं मन मोहे छे॥

जेने नैणा जुगल विशाल कृपा रस भरी रह्या छे।
जेमा राधा कृष्णना रूप शोभा करी रह्या छे॥
जेनी लांबी लांबी बांहों शोभा पाए छे।
जेथी तार्‍या पतित हजार म्हारो मन भाए छे॥
जेना चरणे जन ना शरण तीर्थमय उभये छे।
जेने जोतां जनना चित्त भिया थाय निभये छे॥
म्हारा लछमन नन्दन प्यारा गुरु केहवाये छे।
जेना पद रज पर 'हरीचन्द' बलि बलि थाए छे॥59॥

कवित्त

जानि बिन पीतम सहाय लै बसन्त काम,
इनहीं कबहुं महा प्रलय प्रचारे हैं।
आयो जानि आज प्रान प्यारो 'हरीचन्द' ह्वै कै,
सीतल सुगन्ध मन्द मन्द पग धारे हैं।
मूंदि दै झरोखन कों डारि परदान जामैं,
आवै नाहिं क्योंहूं पौन अति बजमारे हैं।
छुअन न दैहौं इन्हैं सपनेहूं अंग यह,
बेई अहैं आग ह्वै ह्वै अंग जिन जारे हैं॥60॥

हय चले हाथी चले रथ चले प्यादे चले,
ऊट चले रेल चली तार धाय कै चली।
सूर चले चन्द चल्यौ तारा चलें दिन चल्यौ,
रैन चली छिन चले पल पल में टली।
बाप चल्यो बेटा चल्यो नारि चली मीत चले,
'हरीचन्द' चली देव दानव की मंडली।
प्रति जुग प्रति वर्ष प्रति मास प्रति दिन,
प्रति घरी प्रति छिन लागी है चला चली॥61॥

गौरी

प्रान पिया के गुन गन सुनौ री सहेली आय।
सुमिरत गर भरि आवत मोपैं कह्यो न जाय॥
हौं निकसी घर बाहिर पिय मिले मारग मांह।
मो पग छांह छुआई प्यारे मुकुट की छांह॥

मो दृग जल भरि आयो लखि कै ललन सनेह।
बेबस मन भयो ब्याकुल कंपि सिथिल भई देह॥
लखि मग बहु जन हौं कछु बोलि सकी नहिं हाय।
मुख की छांह मिलायो मुख पिय तब चलि धाय॥
गेंद उठावन मिस लै मस पग तर की धूरि।
हा हा नैन लगाई मोहन जीवन मूरि॥
चलि चलि आगे पाछे लटू भयो मंड़राइ।
अनुचर भाव दिखायो प्रान जीवन जदुराइ॥
इक दिन भवन अकेली दुपहर बैठी भौन।
आए भेस बनाए सुन्दर राधा रौन॥
उठन चली आदर हित लखि पिय मोहन मैन।
बादन इमि बैठाई कहि कहि सादर बैन॥
ठोढ़ी गहि मुख निरखत इक टक भरि दृग नीर।
भुज गहि कहि हिय लाई प्रान पिया बलबीर॥
इक चुम्बन हित उझकत जब लौं मैं ललचाय।
तब लौं सौ सौ लीन्हे प्यारे कंठ लगाय॥
देखि सकी न पिया मुख नीचे ह्वै गए नैन।
तब लौं मैं दृग चूम्यो सिर हिय धरि सुख दैन॥
मम दृग जल-कन देखत पिय अति ही अकुलाय।
कसिकै हिए लगायो निज दृग जल बरसाय॥
मम मुख ससि दिमि निरखत पिय दृग भए चकोर।
भे आनन्द घन चातक देखत मेरी ओर॥
मम मुख पिय सुख पावत मम मय भे पिय प्रान।
आदरमय मोहिं कीन्हीं प्यारे चतुर सुजान॥
इक मुख गुन गन अगनित कैसे कहौं बयान।
हिय उमगत गर रुंधत नैन रहत झर लाय॥
परम मधुर नित नूतन कहं लौं कहिए गाय।
'हरीचन्द' पिय गुन गन जीवन एक उपाय॥62॥

हिंडोले का प्रसंग

एरी हरियारी मांहि नीकी अति लागे तोहि,
सारी हरियारी जासों तूही हरि प्यारी है।
बृन्दाबन देवी तू प्रतच्छ मनो आज भई,
हरिहू की परम बियोग ताप हारी है।

गौर स्याम एकता रहस्य मनु प्रकट कियो,
हरि मैं सब भई सोई हरित सिंगारी है।
'हरीचन्द' हेतु हरि कलप तरोवर में,
लपटि रही कीरति की बेलि हरियारी है ॥63॥

दीपावली का पद

कुंज महल रतन खचित जगमग प्रतिबिंबन अति
सोभित ब्रज बाल रचित दीप मालिका।
इक इक सत सत लखात सो छबि बरनी न जात
जोतिमई सोहित सुन्दर अरालिका॥
मानहु सिसुमार चक्र उड़ुगन सह लसत गगन
उदित मुदित पसरित दस दिसि उजालिका।
मेट्यौ तम तोम तमकि बहु रबि इक साथ चमकि
अगनित इमि दीप करै कौन तालिका॥
सोरह सिंगार किए पीतम को ध्यान हिए,
हाथ किए मंगलमय कनक थालिका।
गावन मिलि सरस गीत झलकत मुख परम प्रीत,
आई मिलि पूजन प्रिय गोप बालिका॥
राधा हरि संग लसत प्रमुदित मन हेरि हंसत,
जुग मुख छबि छूट परत गोख जालिका।
'हरीचन्द' छबि निहार मान्यौ त्यौहार चार,
धनि धनि दीपावलि सब ब्रज रसालिका ॥64॥

जीव का दैन्य

कहिए अब लौं ठहर्‍यौ कौन।
सोई भाग्यो तुव साम्हें सो गयो परिछ्यौ जौन॥
नारद विश्वामित्र पराशर महा महा तप खानि।
असन बसन तजि बन में निबसे जन कहं कंटक जानि॥
तिनहूं की जब भई परिच्छा तब न नेक ठहराए।
माया नटी पकरि तिनहूं कहं पुतरी से नचवाए॥
तो जे जग मैं बसत विषय के कीट पाप मैं पागे।
तिनको तुम परखन का चाहत हम तो अघ अनुरागे॥

अपुनो विरुद्ध समुझि करुनानिधि निज गुन गनहिं बिचारी।
सब बिधि दीन हीन 'हरीचन्दहि' लीजै तुरत उधारी ॥65॥

प्यारे मोहिं परखिए नाहीं।
हम न परिच्छा जोग तुम्हारे यह समुझहु मन माहीं॥
पापहिं सों उपज्यौ पापहिं में सगरो जनम सिरान्यो।
तु सन्मुख सो न्याव तुला पैं कैसे कै ठहरान्यौ॥
कीटहु ते अति तुच्छ मन्द मति अधम सबहि बिधि हीना।
जो ठहरौ किमि जांच समय में जो सबही बिधि दीना॥
दया निधान भक्त वत्सल करुनामय भव भयहारी।
देखि दुखी 'हरीचन्दहि' कर गहि बेगहि लेहु उबारी ॥66॥

सांझ सबेरे पंछी सब क्या कहते हैं कुछ तेरा है।
हम सब इक दिन उड़ जाएंगे यह दिन चार बसेरा है॥
आठ बेर नौबत बज बजकर तुझको याद दिलाती है।
जाग जाग तू देख घड़ी यह कैसी दौड़ी जाती है॥
आंधी चलकर इधर उधर से तुझको यह समझाती है।
चेत चेत जिन्दगी हवा सी उड़ी तुम्हारी जाती है॥
पत्ते सब हिल हिलकर पानी हर हर करके बहता है।
हर के सिवा कौन तू है वे यह परदे में कहता है॥
दिया सामने खड़ा तुम्हारी करनी पर सिर धुनता है।
इक दिन मेरी तरह बुझोगे कहता तू नहिं सुनता है॥
रोकर गाकर हंसकर लड़कर जो मुंह से कह चलता है।
मौत मौत फिर मौत सच है ये ही शब्द निकलता है॥
तेरी आंख के आगे से यह नदी बही जो जाती है।
यों ही जीवन बह जाएगा यह तुझको समझाती है॥
खिल खिलकर सब फूल बाग में कुम्हला कुम्हला जाते हैं।
तेरी भी गति यही है गाफिल यह तुझको दिखलाते हैं॥
इतने पर भी देख और सुनकर क्या गाफिल हो फूला है।
'हरीचन्द' हरि सच्चा साहब उसको बिलकुल भूला है ॥67॥

कवित्त

वह द्विजवर हम अधम महान वह अति ही
सन्तोषी मैं तो लोभ ही को जामा हौं।

वह स्रुति पढ़्यो महामूढ़ बुद्धि मेरी उन
तन्दुल दियो हौं मनहूं सो निहकामा हौं।
'हरीचन्द' आइ बनी एकै बात दीनानाथ
यासों मोहिं राखि लेहु जो पै अध धामा हौं।
बालपने ही सों सखा मान्यौ है तुमहिं एक
दीन हीन छीन हौं मैं याही सों सुदामा हौं ॥68॥

होइ कुल नारी ऐसी बात क्यौं बिचारी यामें
प्रति अघ भारी यह कहत पुकारी हौं।
यही करनी है जो तौ खोजौ कोऊ धनी बली
हौं तो निज नारि के वियोग में दुखारी हौं।
'हरीचन्द' याही सों सुदामा बतरात इमि
छांड़ौ मेरो हाथ ना तो दैहों शाप भारी हौं।
द्वारिका में जाइ कै पुकारिहौं हरिहि मोहि
काहे दुख देत मैं तौ बाम्हन भिखारी हौं ॥69॥

कितै गई हाय मेरी कुटिया परन छाई
साढ़े तीन पादहू की खटियौ कहा भई।
कितै गए जनम के जोरे माटी भांड़ मेरे
सहसन टूक की कथरिया कितै गई।
'हरीचन्द' कहत सुदामा बिलखाई इत
लाई किन राशि मनि कंचन महामई।
और जो गयो तो सहि जैहों कोऊ भांति पै
बताओ कोऊ हाय मेरी बाम्हनी कहां गई ॥70॥

परन कुटीर मेरी कहां बहि गयी इत
कंचन महल ऊंचे ठाढ़े हैं महा विचित्र।
मृत्तिका के भांड़हू बिलाने मेरे कंथा सह
टूटी पटरी मैं धरी पोथी हू गई पवित्र।
'हरीचन्द' नारिहू को खोज ना मिलत कहूं
रोअत सुदामा हाय कैसो भयो है चरित्र।
मिलन सों रह्यौ सह्यौ घरहू उजार्‍यौ वाह
द्वारिका के नाथ भली मित्रता निबाही मित्र ॥71॥

फल दियो भीलनी अजामिल उचार्‌यो नाम
गिद्ध कियो जुद्ध, गज कलिका चढ़ाई है।
गोपी गोप नेह कीनो केवट चरन धोयो
सेवा करी भील कपि रिपु सों लराई है।
'हरीचन्द' पद को परस मुनि नारि लह्यौ
गनिका पढ़ावत सुवा को नाम गाई है।
इनके न एकौ गुन औगुन सबै के मोमैं
एतेहू पै तारौ सबै आपु की बड़ाई है ॥72॥

देखि कै काली कराली महा डरि बुद्धि न तो पद मांहि धंसी है।
लक्ष्मी के बहु वैभव चाहि न लालच में मति मेरी फंसी है॥
त्यों 'हरीचन्द' सरस्वति सेइ न ज्ञान के ध्यान न मैं हुलसी है।
चाकर हैं ब्रज सांवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेंट कसी है ॥73॥

जो बिनु नासिका कान को ब्रह्म है ता दिसि बुद्धि न नेकु धंसी है।
निर्गुन जौन निरंजन है छबि ताकी न या जिय माहिं धंसी है॥
त्यों 'हरीचन्द जू' सीस सहस्र के देव मैं इच्छा न नेकु गंसी है।
चाकर हैं ब्रज सांवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेंट कसी है ॥74॥

छोटे हैं छोटिहि बात रुचै मोहिं यासों न जाल में बुद्धि फंसी है।
गुंज हरा परे देखि नरामधि दृष्टि तहीं मम जाय धंसी है॥
त्यों 'हरीचन्द' जू मोर पखौअन गौअन देखि महा हुलसी है।
चाकर हैं ब्रज सांवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेंट कसी है ॥75॥

लोचन चारु चकोरन को सुख दायक गोप ससी है।
होत हियो हरियारो बिलोकत कंठ हरा हरि के तुलसी है॥
पालक हैं 'हरीचन्द' को तौन जो नन्द को बालक लोक जसी है।
चाकर हैं ब्रज सांवरे के जिन टेंटिन ऊपर फेंट कसी है ॥76॥

[सन 1877 ई. की हरिश्चन्द्र चन्द्रिका में प्रकाशित]

होली

सन 1879 ई.

प्यारे,

कहां चले? इधर आओ, त्यौहार घर का करो। देखो, हम ने होली के कुछ खेल इन पत्रों में लिखे हैं, इन से जी बहलाओ।

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

होली

दोहा

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर॥

झपताल सहाना

सखी बनि ठनि तू चली आज कितकौं न जानत है मग श्याम खड़ो री।
चन्दन सों बदन ढांकि नीले पट देखु न आगे ही छैल अड़ो री॥
वा मारग कोउ जान न पावत होरी को खम्भ सों ह्वै कै गड़ो री।
'हरीचन्द' वासो भली दूर ही की बिहारी खिलारी फफन्दी बड़ो री॥1॥

बिहाग

रे निठुर मोहिं मिल जा तू काहे दुख देत।
दीन हीन सब भांति तिहारी क्यों सुधि धाइ न लेत॥
सही नजात होत जिय व्याकुल बिसरत सब ही चेत।
'हरीचन्द' सखि सरन राखि कै भल्यो निबाह्यो हेत॥2॥

सिन्दूरा

कान्ह तुम बहुत लगावत अपुने कों होरी खिलार।
निकसि आव मैदान दुरत क्यौं लै चौगान निवार॥
तू नन्द गैंयां तौ हैं हमहूं बरसाने की नार।
अब को दांव जो जीतैं तोपैं 'हरीचन्द' बलिहार॥3॥

एरी या ब्रज मैं बसिकै तरह दिए ही बनै काज।
वह तो निलज बिचार करत नहिं तू कत खोवत लाज॥
तू कुलबधू सुलच्छनि गोरी क्यों डरवावति गाज।
'हरीचन्द' के मुख नहिं लगनो होरी के दिन आज॥4॥

सखी री कासों ठानत सरबर तू बे काम।
वह तो धूत फफन्दी ब्रज को तू है कुल की बाम॥
कौन जीतिहै ढीठ निलज सों तू कित नाहक करत कलाम।
'हरीचन्द' निज बाट चली चलयाकों उपाधी नाम॥5॥

धनाश्री

मनमोहन चतुर सुजान, छबीले हो प्यारे।
तुम बिनु अति ब्याकुल रहैं सब ब्रज के जीवन प्रान॥
तुमरे हित नन्द लाडिले हो छोड़ि सकल धन धाम।
बन बन मैं ब्याकुल फिरैं हो सुन्दर ब्रज की बांम॥
तनक बांस की बांसुरी हो लेत जबै तुम हाथ।
ब्याकुल धावैं देव बधू तजि अपने पति को साथ॥
सुर नर मुनि मन मोहनी हो मोहन तुमरी तान।
जमुना जू बहिबो तजैं थकि टरत न देव बिमान॥
जड़ चैतन होइ जात हैं चैतन जड़ होइ जात।
जौ इन सब की यह दसा तौ अबलन की का बात॥
उठि धावैं ब्रज-नागरी हो सुनि मुरली की टेर।
लाज संक मानै नहीं हो रहत श्याम कों घेर॥
मगन भई सब रूप मैं हो गोकुल गांव बिसारि।
'हरीचन्द' जन बारने हो धन्य धन्य ब्रज नारि॥6॥

इकताला

झूलत पिय नन्दलाल झुलवत सब ब्रज की बाल
बृन्दाबन नवल कुंज लोल दोलिका।
संग राधिका सुजान गावत सारंग तान
बजत बांसुरी मृदंग बीन ढोलिका॥
उधम अति होत जात घूंघट मैं नहिं लखात।
छूटत बहुरंग उड़त अबिर झोलिका।
'हरीचन्द' दै असीस कहत जियौ लख बरीस।
दिन दिन यह आवै तेवहार होलिका॥7॥

काफी

अरे जोगिया हो कौन देस तें आयो।
हां हां रे जोगी मीठे तेरे बोल॥टेक॥

आंखैं लाल बनी मद माती कुसुम फूल के रंग।
मानो शिव बरसाने आयो चेला न कोऊ संग॥
हां हां रे जागी पहिरे बघंबर चोल॥
हां हां रे जोगी तू तो चेला काम को झूठो साध्यौ ध्यान।
जैसे बकुला गंगा जल में बैठत आइ सुजान॥
हां हां रे जोगी खोलि आपुने नैन॥
हां हां रे जोगी अबलन कों ऐसे देखै जैसे ब्रज को रसिका कोय।
जोग लियो कैसो रे जोगी यह तो जोग न होय॥
हां हां रे जोगी नारी बिन कैसो चैन॥
हां हां रे जोगी कुंज कुटी एकान्त थली मैं जौ तू निकसै।
तौ इक मोहन मन्त्र कों हम दैहैं तोहि सिखाय॥
हां हां रे जोगी होयगो परम अनन्द॥
हां हां रे जोगी तोसों मन्तर लेहिंगी हो भेंट धरैं धन धाम॥
जोगी तेरे कारने सब जोगिन ब्रज की बाम॥
हां हां रे जोगी चेला तेरो 'हरीचन्द'॥
हो कौन देस तें आयो अरे जोगिया ॥8॥

होरी काफी

तुही कहा ब्रज में अनोखी भई।
कान नहिं काहू की करत दई॥

जानत नहिं कछु चाल यहां की आई अबहिं नई।
मोहन मिलतहि जानि परैगी भूलैगी सबई॥
छैल खिलार रसिक होरी को लीने सखा कई।
गाय कबीर अबीर उड़ावत आवत ह्वै है सई॥
देखत ही तोहिं दौरि परैगौ जानि नवेली नई।
हार तोरि रंग डारि चूमि मुख चूरी करिदै रई॥
तब तोसों कछु बनि नहिं ऐहै जब तेरी लाज गई।
'हरीचन्द' सों को ऐसी जौ नै कै नाहिं गई ॥9॥

होरी

जो मैं डरपत ही सो भई।
छैल छबीलो खिलारन लीने आगे ठाढ़ो दई॥
फेंट गुलाल धरे डफ कर लै गावत तान नई।
वाकी तान सुनत सो को नहिं जाकी लाज गई॥

एक प्रीत, मेरी वासों पुनि दूजे होरी छई।
'हरीचन्द' छिपिहैं नाहीं अब जानैंगे लो कई ॥10॥

डफ की

हम चाकर राधा रानी के।
ठाकुर श्री नन्दनन्दन के वृषभानु लली ठकुरानी के॥
निरभय रहत बदत नहिं काहू डर नहि डरत भवानी के।
'हरीचन्द' नित रहत दिवाने सूरत अजब निवानी के ॥11॥

अब तेरे भए पिया बदि कै।
दगे नाम सों यार तिहारे छाप तेरौ सिर ऊपर लै॥
कहां जाहिं अब छोड़ि पियारे रहें तोहि निज सरबस दै।
'हरीचन्द' ब्रज की कुंजन में डोलैंगे कहि राधे जै ॥12॥

चिर जीओ फागुन कौ रसिया।
जब लौ सूरज चन्द उंजेरी तब लौं ब्रज मैं फिर बसिया॥
नित नित आओ होरी खेलन नित गारी नित ही हंसिया।
'हरीचन्द' इन नैन सदा रहौ पीत पिछौरी कटि कसिया ॥13॥

कोऊ नहिंनै जो बरजै निडर छैल।
अररानों ही परत डरत नहिं रोकि रहत मग बनि अरैल॥
वाके डर सों कोऊ कुल की नारि निकसत नहिं जमुना की गैल।
'हरीचन्द' कैसे निबहैगी फागुन में वाके फन्द फैल ॥14॥

धमार धनाश्री

मन महोन की लगवारि गोरी गूजरी।
मगन भई हरि रूप मैं सब कुल की लाज बिसारी॥
नन्द सुवन को नाम हो कोऊ वाके आगे लेइ।
सुनतहिं तन थरथर कंपे मुख उत्तर कछू न देइ॥
श्याम सुन्दर को चित्र हो वाहि जो कोऊ देत देखाइ।
नैनन सों अंसुवा बहै मुख बचन कह्यौ नहिं जाइ॥
जो कोऊ वासों पूछई मुख बोलत आन की आन।
जिय को भेद न खोलई वह नागरि चतुर सुजान॥
दृग को जल सूखै नहिं हो मनु जमुना बहि जाइ।
गोरो मुख पीरो पर्‍यौ मनु दिन मैं चन्द लखाइ॥

नित गुरुजन खीझत रहैं हो लरत ससुर अरु सांस।
तिनकी सब बातें सहै नहिं छोड़ै प्रेम की फांस॥
तन अति ही दुबरो भयो मनु फूल छरी की चाल।
भोरो मुख नित नित घटै अरु सूखे अधर रसाल॥
जो कोऊ कहि देइ हो मन मोहन निकसे आइ।
सुनतहि उठि धावै अरी गृह काज सबै बिसराइ॥
मग मैं जो मोहन मिलैं हौं नहिं देखत भरि नैन।
घूंघट पट की ओट मैं हो करत कछू इक सैन॥
जहं मन मोहन पग धरैं तहं की रज सीस चढ़ाइ।
सखियन कों संग छोड़िकै वह पीछे लागी जाइ॥
या ब्रज की सब ग्वालिनी हो ज्यौं ज्यौं करत चवाव।
त्यौं त्यौं वाके चित्त में हो बढ़त चौगुनो चाव॥
जो बैठे एकान्त में हो जपत उनहिं को नाम।
ध्यान करै नन्दलाल को नहिं भावै कछु धन धाम॥
खान पान सब छोड़िकै हो पति को सुख बिसराइ।
कोउ मिस सों ब्रजराज के वह घर के मारग जाइ॥
बातन मैं बहराइकै हो पूछत उनकी बात।
जौ हमहूं कछु पूछहीं तौ बातन मैं फिरि जात॥
नैन नींद आवै नहीं वाके लगे स्याम सों नैन।
भावै नहिं कोउ भोग हो वाने त्याग्यो सब सुख चैन॥
जो कोऊ समुझावही तौ औरहु ब्याकुल होइ।
'हरीचन्द' हरि मैं मिलिहौ हो जल पय सम सब खोइ॥15॥

राग देश

सखी हमरे पिया परदेश होरी मैं कासों खेलौं।
जिनके पीतम घर हैं सजनी तिनहिं की है होरी॥
हम अपने मोहन सों बिछुरी बिरह सिन्धु में बारी॥
चोआ चन्दन अबिर अरगजा औरहु सुख के साज।
'हरीचन्द' पिय बिनु सब हमको बिख से लागत आज॥16॥

सिन्दूरा

आज कहि कौन रुठायो मेरो मोहन यार।
बिनु बोले वह चलो गयो क्यों बिना किए कछु प्यार॥
कहा करौं कछु न बनत है कर मीड़त सौ बार।
'हरीचन्द' पछितात रहि गई खोइ गले को हार॥17॥

असावरी

तुम मम प्रानन तें प्यारे हो, तुम मेरे आंखिन के तारे हो।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आयो फागुन मास।
अब तुम बिनु कैसे रहौंगी तासों जीय उदास।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह होरी त्यौहार।
हिलि मिलि झुरमुट खेलिए हो यह बिनती सौ बार।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो अब तो छोड़ौ लाज।
निधरक बिहरौ मो संग प्यारे अब याको कहा काज।
प्राननाथ प्यारे लाल हो जौ रहिहौ सकुचाय।
तौ कैसे कै जीवन बचिहै यह मोहिं देहु बताय।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जग मैं जीवन थोर।
तो क्यों भुज भरिकै नहिं बिहरौ प्यारे नन्दकिशोर।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो तुम बिनु जिय अकुलाय।
ता पैं सिर पैं फागुन आयो अब तो रह्यो न जाय।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो तुम बिनु तलफैं प्रान।
मिलि जैये हौं कहत पुकारे एहो मीत सुजान।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह अति सीतल छांह।
जमुना कूल कदम्ब तरे किन बिहरौ दै गलबांह।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो मन कछु ह्वै गयो और।
देखि देखि या मधु रितु मैं इन फूलन को बे तौर।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो लेहु अरज यह मान।
छोड़हु मोहिं न इकली प्यारे मति तरसाओ प्रान॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो देखि अकेली सेज।
मुरछि मुरछि परिहौं पाटी पैं कर सों पकरि करेज।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो नींद न ऐहै रैन।
अति ब्याकुल करवट बदलौगी ह्वै ह्वै जिय बेचैन।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो करि करि तुम्हारी याद।
चौंकि चौंकि चहुं दिसि चितओंगी सुनै कोउ फरियाद।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो दुख सुनिहै नहिं कोय।
जग अपने स्वारथ को लोभी बादन मरिहौं रोय।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सुनतहि आरत बैन।
उठि धाओ मति बिलम लगाओ सुनो हो कमल दल नैन।

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सब छोड्यौ जा काज।
सोऊ छोड़ि जाइ तौ कैसे जीवैं फिर ब्रजराज।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो मति कहुं अनतै जाहु।
मिलि कै जिय भरि लेन देहु मोहिं अपनो जीवन लाहु।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो इनको कौन प्रमान।
ये तो तुम बिनु गौन करन कों रहत तयारहि प्रान।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जिय में नहिं रहि जाय।
तासों भुज भरि मिलि कै भेंटहु संदुर बदन दिखाय।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो पल की ओट न जाव।
बिना तुम्हारे काहि देखिहैं अंखियां हमैं बताव।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो साथिन लेहु बुलाय।
गाओ मेरो नामहि लै लै डफ अरु बेनु बजाय॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आइ भरौ मोहि अंक।
यह तो मास अहै फागुन को या मैं काकी संक।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो देहु अधर रस दान।
मुख चूमहु किन बार बार दै अपनै मुख को पान॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो कब कब होरी होय।
तासों संक छोड़ि कै बिहरो दै गल मैं भुज दोय।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो रहौ सादा रस एक।
दूर करौ या फागुन मैं सब कुल अरु बेद बिवेक॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो थिर करि थापौ प्रेम।
दूर करौ जग के सबै यह ज्ञान करम कुल नेम॥

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो सदा बसौ ब्रज देस।
जमुना निरमल जल बहौं अरु दुख को होउ न लेस।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो फलनि फलौ गिरिराज।
लहौ अखंड सोहाग सबै ब्रज बधू पिया के काज।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो जाइ पछारौ कंस।
फेरौ सब थल अपनि दुहाई करि दुष्टन का धंस।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो दिन दिन रहो बसन्त।
यही खेल ब्रज मैं रहौ हो सब बिधि अति सुखद समन्त।

प्राननाथ हो प्यारे लाल हो बाढ़ौ अविचल प्रीति।
नेह निसान सदा बजै जग चलौ प्रेम की रीति।
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो यह बिनती सुनि लेहु।
'हरीचन्द' की बांह पकरि दृढ़ पाछे छोड़ न देहु ॥18॥

देश

रंग मति डारो मोपै सुनो मोरी बात।
बड़ी जुगति हौं तोहिं बताऊं क्यौं इतने अकुलात ॥
श्री वृषभानु नन्दिनी ललिता दोऊ वा मग जात।
तुमहुं जाइ माधुरी कुंज मैं पहिलेहि क्यौं न दुरात ॥
वे उत औचक आइ परैं तब कीजौ अपनी घात।
'हरीचन्द' क्यौं इतहि खरे तुम बिना बात इठलात ॥19॥

पूरबी

तुमहिं अनोखे बिदेस चले पिय आयो फागुन मास रे।
फूले फूल फिरे सब पन्थी बहि रही बिपत बतास रे ॥
या रितु मैं कोउ जात न बाहर भयो काम परकास रे।
'हरीचन्द' तुम बिनु कैसे बचिहैं बिरहिन बिकल उदास रे ॥20॥

काफी

लाल फिर होरी खेलन आओ।
फेर वहै लीला को अनुभव हमको प्रगट दिखाओ ॥
फेर संग लै सखा अनेकन राग धमारहि गाओ।
फिर वही बंसी धुनि उचरौ फिर वा डफहि बजाओ ॥
फिर वही कुंज बहै बन बेली फिर ब्रज बास बसाओ।
'हरीचन्द' अब सही जात नहिं खबर पाइ उठि धाओ ॥21॥

सिन्दूरा

एरी कैसी भीर है होरी के दिन भारी।
जाइ मनाइ कोउ लै आओ प्रानपिया गिरधारी ॥
खेलनवारे बहुत मिलैंगे राग रंग पिचकारी।
'हरीचन्द' इक सो न मिलैगौ जा कहिहै मोहिं प्यारी ॥22॥

बिहाग

बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौं।
बिरह उसास उड़ाइ गुलालहि दृग पिचकारी मेलौं॥
गाओ बिरह धमार लाल तजि हो हो बोलि नवेली।
'हरीचन्द' चित माहिं गलाऊं होरी सुनो हों सहेली॥23॥

गौरी

एरी बिरह बढ़ावन आयो फागुन मास री।
हौं कैसी अब करूं कठिन परी गांस री॥
औरै रितु ह्वै गयी बयारहु और री।
औरै फूले फूल और बन ठौर री॥
और मन ह्वै गयो और तन पीय को।
और चटपटी लगी काम की जीय को॥
बन के फूलन देखि होत जिय सूल री।
बिनु पिय मेटै कौन बिरह की हूल री॥
बिसर्‍यौ भोजन पान खान सुख चैन री।
वही खुमारी चढ़ी रहत दिन रैन री॥
रजनी नींद न आवै जिय अकुलाय री।
चौंकि चौंकि हौं परौं चित्त घबराय री॥
अटा अटा चढ़ि डोलों पिय के हेत री।
कहूं नही मेरे लाल दिखाई देत री॥
सपने मैं जो कहुं पिय रूप दिखात री।
तौ यह बैरिन नींद चौंकि तजि जात री॥
जौ कहुं बाजन बाजै गोकुल गैल री।
तौ उठि धाऊं आवत जानूं छैल री॥
या घर में सखि क्यौं नहिं लागत आग री।
जाके डर हौं खेलन जात न फाग री॥
बैरिन मेरी सास जिठानी हैं सबै।
देखन देत न मोहन को मुख री अबै॥
जरौ लाज यह ऐहै कौने काम री।
जो नहिं देखन देत पिया घनश्याम री॥
मोहिं अकेली निरबल अबला जान री।
तानि कानि लौं खींच्यौ मदन कमान री॥

कहा करौं कहं जाऊं बताओ मोहिं री।
कहै किन और उपात सपथ है तोहिं री॥
जदपि कलंकिन कहत सबै ब्रज लोग री।
तऊ मिटत नहिं मुख लखिबे को सोग री॥
रोअनहूं नहिं देत प्रगट मोहिं हाय री।
क्यौं ऐसो दुख मिटै बताव उपाय री॥
फिरि डफ बाजत सुनि सखि आए श्याम री।
होरी खेलत प्राननाथ सुखधात री॥
अब कैसे रहि जाय मिलौंगी धाइ कै।
लाज छांड़ि जग नेह-निसान बजाइ कै॥
'हरीचन्द' उठि दौरी भामिनि प्रीति सों।
बरजेहु नहिं रही मिली मन मीत सों॥24॥

ईमन कल्याण

तैंडा होरी खेल मैंडे जीउ नूं भांवदा।
तू वारी कोई दी सरमन करदा बुरी वे गालियां गांवदा॥
पाय अबीर नैण बिच साडे बंसी निलज बजांवदा।
'हरीचन्द' मैनूं लगी लड़ तैंडी तूं नहि आस पुरांवदा॥25॥

अहीरी

वह नटवर घन सांवरो मेरो मन ले गयो री।
जब सों देखि लियो है वाको, तब सों भोजन-पान न भावै,
बैरनि लाज ह्वै गई मेरी बिरह दै गयो री॥
घर अंगना मोहिं नाहिं सुहावे, बैठत ही घुमरी सी आवै,
लोग कहैं मोहि देखि देखि याकों कहा ह्वै गयो री॥
'हरीचन्द' ग्वालिन रसमाती, सास ननद की डर न डेराती,
लोकलाज तजि संग मैं डोलै, कहा जानै का नन्दलाल टोना सो कै गयोरी॥
वह नटवर घन सांवरो मेरो मन लै गयो री॥26॥

गौरी

अरी मैं कहा करौं कित जाऊं, सखी री मन लै गयो वह छैल।
मेरी गलियन आइकै बंसी मधुर बजाय।
जादू सों कछु करि गयो वह मेरो नाम सुनाय॥अरी मैं.॥

तब सों कछु भावै नहीं हौं बन बन फिरूं उदास।
कहुं मोहि कल आवै नहीं हौं ब्याकुल लेहुं उसास ॥अरी मैं.॥
तरु तरु खग मृगन सों हौं पूछत डोलौं घाय।
मेरो प्यारे लाल कों हो देत न कोउ बजाय ॥अरी मैं.॥
सखी संग आवै नहीं जानि कलंकिन मोहिं।
सोई हम दूजी भई हौं कहा कहौं री तोहिं ॥अरी मैं.॥
और कछु भावै नहीं बिसर्‌यो भोजन पान।
रुचि और कछु ह्वैगइ मेरी कहं लौं करौं बखान ॥अरी मैं.॥
साई बन घरहू सोई हो सोई सबै समाज।
बिष मोहिं लागै अरी सब मिले बिना ब्रजराज ॥अरी मैं.॥
कोऊ नाहिं सुनावई हो खबर लाल की आय।
तन मन वापै वारिए हो भेद जो देहि बताय ॥अरी मैं.॥
प्रेम प्रगट जग मैं भयो हो बाज्यौ नेह निसान।
तऊ आस पुरई नहीं हो कैसे चतुर सुजान ॥अरी मैं.॥
तोरि सिंखला गेह की हो लोक लाज भय खोय।
'हरीचन्द' हरि सों मिलौं होनी होय सो होय ॥अरी मैं.॥27॥

पूरबी

एक बेर भरि नैन लखन दै फिर पिया जैयो बिदेसवा रे।
तुम बिन प्रान रहै वा नाहीं यह जिय मोहिं अंदेसवा रे।
'हरीचन्द' फिर कठिन परैगी कहिहै कोउ न संदेसवा रे ॥28॥

कहां बिलमे कौन देसवा में छाए मेरे अबहुं न आए पियवा रे।
राह देखत मोरि अंखियां थकि गई निसि बीति भयो भोरवा रे ॥
पाटी कर पटकत भईं ब्याकुल लागत हार पहरवा रे।
'हरीचन्द' पिय बिनु कैसी परिहै कौन लगै मोरे गरवा रे ॥29॥

ईमन कल्यान

सुनौ चित्त दै सब सखियां बरनि सुनाऊं श्याम सुन्दर के खेल।
कल हौं निकसी मारग याही रोकी मेरी गैल ॥
अबिर उड़ाइ गाइ गारी बहु (डफ बजाइ कै) करी रंग की रेल।
'हरीचन्द' तबतें नहिं भूलत नैनन तें वह केलि ॥30॥

डफ की

ऐसो उधम न करि अबै कंस जियै।
यह ऊधम तेरो सुन पावै जो तो पकर मंगावै तोहिं लिये दियै ॥
नै कै चलि अठलानि बुरी है सदा रहत अभिमान कियै।
'हरीचन्द' या फागुन मैं क्यों निबहैंगी हम लाज लियै ॥31॥

राग होरी बिभास

आए कहां सों आज प्रात रस भीने हो।
अति जंभात अलसात लाल रस भीने हो ॥
कित खेले तुम रैन फाग रस भीने हो।
कौन को दियो सोहाग लाल रस भीने हजे ॥
आज अहो बिनही गुलाल रस भीने हो।
नैन दोउ लाल लाल रस भीने हो ॥
गांव न मिली गुलाल प्यार रस भीने हो।
जावक लग्यो लिलार लाल रस भीने हो ॥
मिलत न चोआ वाके देस रस भीने हो।
अंजन अधर सुबेस लाल रस भीने हो ॥
कुमकुमा मोर द्वै चलाय रस भीने हो।
ताको चिन्ह दिखाय लाल रस भीने हो ॥
बांध्यौ अंग अंग भुज मृनाल रस भीने हो।
दइ उर बिनु गुन माल लाल रस भीने हो ॥
रंग के बदले पीक लाय रस भीने हो।
नीलो बसन उढ़ाय लाल रस भीने हो ॥
को ऐसी माती खेलार रस भीने हो।
जिन रिझयो रिझवार लाल रस भीने हो ॥
नैन मिलाओ करौ बात रस भीने हो।
काहे को सकुचात लाल रस भीने हो ॥
कौन सो आसव कियो पान रस भीने हो।
मत्त भए हौ सुजान लाल रस भीने हो ॥
'हरीचन्द' इमि कहत बाल रस भीने हो।
भुज भरि लई गोपाल लाल रस भीने हो ॥32॥

राग पीलू

रिझैया मन को कर जोरे ठाढ़ो द्वार।
तू तो मानिनि बात न मानै करत न कछू बिचार ॥

वह तो रसिया या दरसन को मानहि को रिझवार।
वाके नैनन आछे लागैं बिथुरे सुथरे बार॥
बिन भूषन तन कछुक बसन बिन बिन चोली बिन हार।
मोहिं कहत छबि निरखि लैन दै तू मति करि मनुहार॥
ठाढ़ो इक टक मुख निरखत हैं मनवत नाहिं बिचार।
'हरीचन्द' तू धन्य मानिनी धनि या छबि को प्यार॥33॥

सोरठ

दिन दिन होरी बृज में आओ।
चिरजीओ जग जग यह जोरी नित कर जोरि मनाओ॥
नित बरसो रंग नितहि कुतूहल नित नित खेल मचाओ।
'हरीचन्द' यह केलि बधाई नित आनन्द सो गाओ॥34॥

धमार सिन्दूरा

एरी डफ धुंकार सुनि घर न रहोंगी मिलोंगी मीत को धाय॥
फागुन लहि उमग्यो जो मदन जिय सो अब रोकि न जाय॥
प्राननाथ आवन सुनि फिर पग घर में क्यों ठहराय।
'हरीचन्द' गर लगोंगी पिया के जाने जगत बलाय॥35॥

ठेका या ब्रज को तेरे माथे कौन दयो।
जो तू लंगर ढीठ उपाधी ऊधम रूप भयो॥
काहु न डरत करत मन को नित ठानत रंग नयो।
'हरीचन्द' ब्रज डगर डगर बदनामी बीज बयो॥36॥

पिय मनमोहन के संग राधा खेलत फाग॥ध्रुव॥
दोउ दिसि उड़त गुलाल अरगजा दोउन उर अनुराग॥
रंग रेलनि झोरी झेलनि में होत दृगन की लाल।
'हरीचन्द' लखि सो मुख शोभा अयन सराहत भाग॥37॥

धमार देश

साडूला म्हारा भींजै न डारी रंग॥ध्रुव॥
मति नाखौ गुलाल आंखिन में सीखा छौ कनि रौढ़॥
नाम लेइ म्हारो मति गावो गारी संग बजाइ कै चंग॥
'हरीचन्द' मद मात्यो मोहन मति लागो म्हारे संग॥38॥

धमार काफी

सुन्दर श्याम शिरोमणि प्यारो खेलत रस भरि होरी जू।
इत सब सखा लसत रंग भीने उत वृषभानु किशोरी जू॥
नाचत गावत रंग बढ़ावत करन बजावत तारी जू।
हंसत हंसावत रंग बढ़ावत गावत मीठी गारी जू॥
श्री राधा हंसि मोहन पकरे अपने वश करि लीन्हें जू।
रंग नचाइ नचाइ गवायो मन भाए सुख कीन्हें जू॥
कहत लाल छूटन नहिं पैहौ बिनु फगुआ बहु दीन्हें जू।
मो बश परे भागि कित जैहौ बादि चतुरई कीन्हें जू॥
राधा जू के पाय पलोटौं अरज करो कर जोरी जू।
तब चाहौ छोरयो तो छोरै नृप वृषभानु किशोरी जू॥
हा हा खात लाल कर जोरे करत बहुत अनुहारी जू।
यह गति लखत देवगन व्याकुल ग्वाल हंसत दै वारी जू॥
तीन लोक जाकी चरन छांह बल जियत बसत सुख पाई जू।
ताकी गोपीजन के आगे चलत न कछु ठकुराई जू॥
शिव ब्रह्मा इन्द्रादिक जाको परसत चरन डराहीं जू।
ताको मुकुट उतारत गोपी तनिक शंक जिय नाहीं जू॥
जा दासी माया इक फेरे जग पर बस है नाचै जू।
ताहि नचावत पकरि गोपिका लखि जिय अचरज राचै जू॥
अस्तुति करत अधर सूखत है नेति कहत तउ बेदा जू।
गारी ताहि निसंक देत गोपी जन करत न खेदा जू॥
ध्यान धरत पूजत बहु भांतिन तदपि ध्यान नहिं आवै जू।
ताहि गुलाल लगाइ हंसत सब करत जोई मन भावै जू॥
शिव समाधि श्रम साधि करत नित तऊ झलक नहिं देखै जू।
फेंट पकरि तेहि जान देत नहिं ब्रज जुवती सुख लेखै जू॥
जाको रुख चाहत त्रिभुवन में सुर मुनि नर भय पागे जू।
हाथ जोरि सो अरज करत हैं राधाजू के आगे जू॥
वेद मन्त्र पढ़ि साधि करम बिधि यज्ञ करत जेहि लागीजू।
ताको मुख मांडत केशरि सों ब्रज युवती रस पागी जू॥
यह अवगति गति लखि न परत कछु देव बिमानन भूले जू।
मोहे फिरत सार नहिं जानत तऊ केलि सुख फूले जू॥
रमा पलोटत चरन सरस्वति गुन गन गाइ सुनावै जू।
ताके पद नूपुर दै गोपी निज सुख नाच नचावै जू॥
बरनौ कहा बरनि नहिं आवै का समुझै जो गावै जू।
बल्लभ बल 'हरिचन्द' कछुक सो बल्लभि जन उर आवै जू॥39॥

सिंधुरा धमार

हमैं लखि आवत क्यों कतराये।
साफ कहत किन जिय की चलत जो
छांह सों छांह मिलाये॥
होरी में का बरज़ोरी करोगे क्यों इतने इतराये।
रूप गरब फागुन मदमाते ताहू पै अति रसिकाये॥
जो तुम चाहत सो न इतै कछु चलो रहौ न लगाये।
'हरीचन्द' तुम्हरे व्यवहारन दूरहि से फल पाये॥40॥

होरी के पूजन को पद

आजु हरि खेलत रस भरि संग वृषभान किसोरी।
पूनो निसि डहडह उंजियारी बांह बांह में जोरी॥
चांदनि में गुलाल की चमकनि अरु बुक्कन की झोरी।
जमुना तीर श्वेत बारू मधि अति शोभित भइ होरी॥
इत सब सखा खेल बौराने उत मदमाती गोरी।
अद्‌भुत छबि 'हरिचन्द' देखि कै रह्यो हरषि तृन तोरी॥41॥

रेखता

बचे रहो जरा यह बदनाम फाग है।
आंखों की भी हमसे तुमसे लाग है॥
इस ब्रज का तो सभी चवाई लोग है।
आंख लगाना यहां बड़ा एक भोग है॥
मेरी तुमरी प्रीति बहुत मशहूर है।
तिसमें भी होरी रंग चकनाचूर है॥
लगी आंख भी छुटी आज तक है कभी।
करो लाख तदबीर यहां क्यों नहिं सभी॥
उतरे जी के साथ यह अजब खुमार है।
'हरीचन्द' बचना इससे दुशवार है॥42॥

समधिन मधुमास

होरी में समधिन आई।
अहो फागुन त्योहार मनाई॥
यथा शक्ति कीन्हों सबही ने समधिन को उपचार।
समधिन जू ने बहुत करायो आदर शिष्टाचार॥

समधिन की तो चुपरी चपरी चोटी सोंधो लाय।
समधिन को लखि रपटि परत है समधी को मन धाय॥
समधिन की तो अतिहि चिकनी फिसिल फिसिल सब जात।
देहरिया रंग भीनि रही जहं प्रविसत सबै बरात॥
सबै जुड़ावत समधिन कों लखि बुक्का रंग मुख भींजि।
तब समधिन की चुवन लगत है सारी रंग मुख भींजि॥
छाती मींड़त सब समधिन कर रूप छटा सब देखि।
डारत अतर लगाइ अरगजा रंगिली समधिन तेखि॥
समधिन जू लगवावत डोलत सब सों चोवा रंग।
फटी दरार परी समधिन की चोली उमिर उमंग॥
समधिन जू बिपरीत करत तुम इतो नवन नहि योग।
मानत तुम्हरी नृपहू सों बड़ि थाप सबै ब्रज लोग॥
फैलि रही चहुं दिशि समधिन की कीरति की नव बेलि।
तुमहिं देखि सब करत रंग सों होरी रसिक सिरेलि॥
ठाढ़ो होत तुमहि देखत ही आदर हित दरबार।
गांव भरे की नारि तुमहिं इक आदर देत अपार॥
यहि बिधि समधिन रंग बढ़त ब्रज कौन सकै सो गाय।
नित दूलह नित दुलहिन पै जन 'हरीचन्द' बलि जाय॥43॥

जोबन कैसे छिपाऊं री रसिया परो पाछे।
झलकत तन द्युति सारी सों कढ़ि लगत तमासो गाऊं री॥
भुखससि चमक नील घूंघट में ज्यों त्यों सक चि चुराऊं री।
ये उकसौहैं अंचल बाहर इन कहं कहां कहां दुराऊं री॥
बजमारे बिधि क्यों सिरजे ये कहा करूं कित जाऊं री।
'हरीचन्द' गोकुल में बसिकै पतिब्रत कैसे निभाऊं री॥44॥

यहि बिधि सिरजे नाहिं री तेरे जोबन दोऊ।
रहे दुरे कित ये सिसुता में जो अब प्रगट दिखाहिं री।
उमगे परत हरत मन हरि को कंचुकि में न समाहिं री।
'हरीचन्द' निधि मदन धरी निज इनहिं सम्पुटनि माहिं री॥45॥

राग काफी

गिरिधर लाल रंगीले के संग आजु फाग हौं खेलोंगी।
सास ननद अरु गुरुजन की भय लाजहिं पांयन ठेलोंगी॥
चोवा चन्दन अबिर अरगजा पिचकारिन रंग झेलोंगी।
'हरीचन्द' वृज चन्द पिया के कंठ भुजा गहि मेलोंगी॥46॥

रामकली ठेका धमार

कहत हौं बार करोरन होहु चिरंजी नित नित प्यारे
देखि सिरावै हियो।
एक एक आसिख सों मेरे अरब खरब जुग जियो॥
जब लौं रवि ससि भूमि समुद ध्रुव तारागन थिर कियो।
'हरीचन्द' तब लौं तुम पीतम अमृत पान नित पियो॥47॥

होली डफ की

मैं तो रंगोंगी अबीरी रे पिया की पगिया।
केसर सों सब बागो रंगिहौं लै जैहौं बाबा की बगिया॥
रंग उड़ाइ के गारी गैहौं भागि कहाँ जैहैं ठगिया।
'हरीचन्द' मनमानी करिहौं प्रान पिया के गर लगिया॥48॥

कैसे आऊं मेरी पायल झुनक बजै कैसे आऊं रे।
जागत है सब सास ननदिया ऐसी लाज कहो कौन तजै॥49॥

सोरठा

जीती सब बरसाने वारी।
आंख अंजाइ पहिरि कर चूरी हारे मोहन गिरिधारी॥
फगुआ दै हा हा करि छूटे अरु अनेक खाई गारी।
'हरीचन्द' कोउ बिधि घर आए तन मन धन सरबस हारी॥50॥

ईमन कल्यान

मोहिं मति बरजे री चतुर ननदिया होरी खेलन जाऊं।
फिर ये दिन सपने से ह्वैहैं पाऊं कै ना पाऊं॥
ऐसो सगुन बताउ जो पिय को द्वारहि पै गर लाऊं।
'हरीचन्द' जनमन की प्यासी कछु तौ प्यास बुझाऊं॥51॥

होरी खेलन दै मोहिं पिय सों ननदिया नाहक रोकै री।
सब जग तौ बरजहि तुहू क्यों बरबस टोकै री॥
एक नारि दूजे मरमिन ह्वैं कित दुख मैं कित दुख मैं झोंकै री।
'हरीचन्द' कहवाइ सुघर क्यों बढ़वति सोकै री॥52॥

सिन्दूरा

अब मैं घर न रहूंगी काहू के रोके, मोहिं मति बरजौ कोय।
ऐसो पिय लहि या फागुन को मरै अभागिन रोय॥
जाऊंगी जहं पिय होरी खेलत मिलूंगी जगत भय खोय।
निधरक पिय के अधर पिऊंगी भेंटूंगी भरि भुज दोय॥
मेंटूंगी सब साध उधर कै लोक लाज भय धोय।
'हरीचन्द' पाऊंगी जनम फल होनी होय सो होय॥53॥

लाल गुलाल लाल गालन मैं अति ही मन को मोहै।
सुन्दर मुख भयो औरहु सुन्दर भूलि जात जिय जो है॥
सबहि भले कों भलो लगत है सोहै को सब सोहै।
'हरीचन्द' तजि प्यारी को मुख मलन जोग अरु को है॥54॥

नहिं मानूंगी काहू की बात में पिय संग आजु खेलौंगी फाग।
मोहिं घर के बरजौ जिन कोऊ परी आनि अब लाग॥
मिल्यौ आई मोहि दांव निकालूंगी अन्तर को अनुराग।
'हरीचन्द' बनमालिहि सौंपूंगी निधरक जोबन बाग॥55॥

ठुमरी

झूम झूम के मोरे आए पियरवा।
दौरि दौरि लागे मोरे गरवा॥
'हरीचन्द' लटकीली चाल चलि गर डारे मोतियन को हरवा॥56॥

चूम चूम के मुख भागै संवलिया।
घूम घाम के आवै मेरी ही गलिया॥
'हरीचन्द' मोहिं गरवा लगावें मन भावै मेरे छल बलिया॥57॥

दूर दूर चला जा तू भंवरवा।
आउ छली मत मेरे निअरवा।
'हरीचन्द' नाहक तू डारत प्रेम फांस अबलन के गरवा॥58॥

कूकि कूकि रही कारी कोइरिया।
फूंकि फूंकि हिय बिरह दवरिया।
'हरीचन्द' पिय ऐसी समै मैं दूर बसे हनि बिरह कटरिया॥59॥

झूमि झूमि रहे राते नयनवां।
आओ करो अब प्यारे सयनवां॥
'हरीचन्द' सब रात जगे तुम निकसत नहिं मुख पूरे बयनवां ॥60॥

उड़ि जा पंछी खबर ला पी की।
जाय बिदेस मिलो पीतम से कहो बिथा बिरहिन के जी की ॥
सोने की चोंच मढ़ाऊं में पंछी जो तुम बात करो मेरे ही की।
माधवी लाओ पिय को संदेसवा जरनि बुझाओ बियोगिन ती की ॥61॥

होली

मेरे जिय की आस पुजाउ पियरवा होरी खेलन आओ।
फिर दुरलभ ह्वै हैं फागुन दिन आउ गरे लगि जाओ ॥
गाइ बजाइ रिझाइ रंग करि अबिर गुलाल उड़ाओ।
'हरीचन्द' दुख मेटि काम को घर तेवहा मनाओ ॥62॥

होरी नाहक खेलूं मैं बन में, पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मैं।
सूनो जगत दिखात श्याम बिनु बिरह बिथा बढ़ी तन मैं ॥
पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मैं।
काम कठोर दवारि लगाई जिय दहकत छिन छिन मैं ॥
'हरीचन्द' बिनु बिकल बिरहिनी बिलपति बालेपन मैं ।
पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मैं ॥63॥

बन मैं आगि लगी है फूले देखु पलास।
कैसे बचिहै बाल बियोगिन देखि बसन्त बिलास ॥
चलत पौन लै फूल बास तन होत काम परकास।
'हरीचन्द' बिनु श्याम मनोहर बिरहिन लेय उसास ॥64॥

चहूं दिसि धूम मची है हो हो होरी सुनाय।
जित देखो तित एक यहै धुनि जगत गयो बौराय ॥
उड़त गुलाल चलत पिचकारी बाजत डफ घहराय।
'हरीचन्द' माते नर नारी गावत लाज गंवाय ॥65॥

मोहन गोहन मेरे लग्योई डोलै छोड़ैं छिनहुं न साथ।
घर अंगना करि डार्‌यो मो घर सब छिन जोरें हाथ ॥

झांकत द्वार चलत पाछे लगि गावत मम गुन गाथ।
'हरीचन्द' मैं कैसी करूं मेरे चरन छुआवत माथ ॥66॥

इकताला

पिया प्यारे मैं तेरे पर वारी भई।
सहज सलोनी सुन्दर सूरत निरखत ही बलिहारी भई ॥
अब ना रहौं घर लाख कहो कोऊ सबही भांति तुम्हारी भई।
'हरीचन्द' संग लागी डोलौं सुन्दर रूप भिखारी भई ॥67॥

काफी पीलू

बीती जाती बहार री पिय अबहुं न आए।
कैसे कै मैं दिन बितवौं आली जोबन करत उभार री,
पिय अबहुं न आए ॥
कहा करौं कित जाओं बताओ यह समयो दिन चार री।
अली माधवी पिय बिनु ब्याकुल कोउ न सुनत पुकार री ॥
पिय अबहुं न आए ॥68॥

होली खेमटा

खेलन मैं झुकि झूलै झुलनियां।
अंगिया लाल लाल रंग सारी कारीलट लटकाए नगिनियां ॥
गावैं हंसैं बजाइ रिझावै गाल छुआवैं अपनी छिगुनियां।
'हरीचन्द' रंग मस्त पिया के फिरै प्रेम माती मतलिनियां ॥69॥

होली ढफ की

पीरी परि गई रसिया के बोलन सों।
याद परी सब रस की बातैं बढ़ि गयो बिरह ठठोलन सों ॥
चलि न सकी जकि रही ठौरही डोली नेक न डोलन सों।
'हरीचन्द' सुधि परी फेर पिय प्यारे के घूंघट खोलन सों ॥70॥

पीरी परि गई रसिया के बोलन सों।
आयो जानि छैल होरी को डरी लाज के खेलन सों ॥
एक प्रीति दूजे होरी सिर पर कैसे बचिहौं ठठोलन सों।
'हरीचन्द' सब कोउ जानैंगे मेरी गलियन डोलन सों ॥71॥

डफ की

अरे गुदना रे—गोरी तेरे गोरे मुख पैं बहुत खुल्यौ मुदनारे।
अरे रसिया रे—गोरी वापैं घायल मायल होय रह्यौ ॥
अरे दुपटा रे—गोरी तापैं सुरख अबीरी और फब्यौ।
अरे मोहना रे—गोरी तेरे संग फिरै घर बार तज्यौ ॥72॥

गोरी कौन रसिक संग रात बसी।
भरी खुमारी नैन खुलत नहिं सिर तें सारी जात खसी ॥
बेनी सिथिल खसित तेरे अभरन चलत डगमगी अधि लसी।
'हरीचन्द' पिय संग निसि जागी चोली ढीली भई कसी ॥73॥

तेरी बेसर को मोती थहरै।
या लटकन में मेरो मन लटकै खटकै धीरज नहिं ठहरै।
'हरीचन्द' तेरी सुरुख लहरिया देखत मेरो मन लहरै ॥74॥

तेरे श्याम बिंदुलिया बहुत खुली।
गोरे गोरे मुख पर श्याम बिंदुलिया नैनन में प्यारे की घुली ॥
ताहू पै सांवरो गुदना सोहै भंवर रह्यौ मनो कमल कली।
'हरीचन्द' पिय रीझ्यौ तेरो संग न छाड़ैं गलिय गली ॥75॥

मैं तो चौंक उठी डफ बाजन सों।
सोवत रही अपने आंगन मैं जागी गारी गाजन सों।
देख्यौ तो द्वारे मोहन ठाढ़े सजे छैल सब साजन सों।
'हरीचन्द' मेरो नाम लयो नित गारी दई बिन लाजन सों ॥76॥

बस करु अब ऊधम बहुत भयो।
भींजि गई रंग सों मेरी सारी अबीर गुलालन बसन छयो।
झकझोरन मैं कर मेरो मुरक्यौ कंकन बाजू टूट गयो।
'हरीचन्द' तेरे पांव परत गारी मति दै अपजस बहुत दयो ॥77॥

आजु मैं करूंगी निबेरो जो तू ठाढ़ो रहैगो रंग मैं।
अबहीं निकासूंगी सगरी कसर जो तू रोकत टोकत रह्यौ मग मैं ॥
बांधि भुजन सों निज बस करि कै मुख चूमौंगी प्रेम उमग मैं।
'हरीचन्द' अपनो करि छांडूंगी मीर कहाऊंगी सगरे जग मैं ॥78॥

नित नित होरी ब्रज में रहौ।
बिहरत हरि संग ब्रज जुवतीगन सदा अनन्द लहौ॥
प्रफुलि फलित रहौ वृंदाबन मधुप कृष्ण गुन कहौ।
'हरीचन्द' नित सरस सुधामय प्रेमप्रवाह बहौ॥79॥

[सन् 1879 ई. में हरिप्रकाश यन्त्रालय, काशी से प्रकाशित]

राग संग्रह

सन 1880 ई.

राग संग्रह

जल बिहार, सारंग

आजु हरि बिहरत जमुना तीर॥ध्रुव॥
श्यामा संग रंग भरि सोहत पहिने झीनी चीर॥
प्रथम समागम सकुचत प्यारी जब परसत बलबीर।
उघरत अंग भीनि जल बसनन लाजि भजत तब तीर॥
धीर समीर सोहायो लागत लै सोइ धीर समीर।
'हरीचन्द' संगम गुन गावत छबि लखि धरत न धीर॥1॥

ठुमरी

अठिलात संवरिया, मद ते भरी॥ध्रुव॥
कटि काछनि सिर मुकुट बिराजत
कांधे पर सोहै पटुक लहरिया॥
पहुंची बाजू बनमाला अरु
अंगुरिन अंगुरिन सोहैं मुंदरिया।
'हरीचन्द' मेरे मन बसो सोइ
हरि राधा सोहै जाकी नगरिया॥2॥

गोवर्धन पूजा, बिलावल

आजु बन उमगे फिरत अहीर।
हेरी देन बदत नहिं काहू देखियत जित तित भीर॥
इक गावत इक ताल बजावत एक बनावत चीर।
इक नाचत इक गाइ खिलावत एक उड़ावत छीर॥
हमरो देव गोवर्धन पर्बत सुन्दर श्याम शरीर।
कहा करैगो इन्द्र बापुरो जा बस केवल नीर॥
सात दिवस गिरि कर धरि राख्यो बाम भुजा बलबीर।
'हरीचन्द' जीत्यो मेरे मोहन हार्‌यौ इन्द्र अधीर॥3॥

ग्रीष्म ऋतु, सारंग

एरी फुहारन के दोउ कौतुक में उरझाने।
धरत फूल फल नीर धार पर देखत रहत लुभाने॥
कबहुंक चकई चलत चपल अध ऊरध बहु गति ठाने।
'हरीचन्द' रिझवत सब सखि मिलि नवजल केलि बहाने॥4॥

ये युगल दोउ बैठे हो शीतल छांह।
सखी ठाढ़ी चारों ओर फूलीं मन मांह।
तिन बिच प्यारी पिया दिये गल बांह॥5॥

बिहार, बिहाग

आजु दोउ बिहरत कुंजर कन्त।
श्यामा श्याम सरस रंग बाढ़े सुख को लहत न अन्त॥
ज्यों ज्यों निसि भीनत रंग बाढ़त होत सुरत की कन्त।
हारत कोउ न अभिरे दोऊ मदन समर सामन्त॥
तहां न जाय सकत सखि गनहूं जहां कामिनी।
'हरीचन्द' श्री बल्लभ पद बल ताहि अनुभवत सन्त॥6॥

आजु अपमान अति ही निरखि भक्त को।
बैकुंठ बन सिंह बहुत कोप्यो।
पटकि कर भूमि पै झटकि सिर केश रद
चाभि ओंठन तेज गगन लोप्यो॥

खम्भ को फारि चिक्कारि केहरि नाद
गर्भिनी गर्भ गरजन गिरायो।
सटा फटकारि कै नछत्रगन नभहिं
फेंकि ईत सी उतहि क्रोध छायो॥

कोटि मनु बिज्जु इक साथ ही गिरि परीं
भयो अति घोर भुव सोर भारी।
सिन्धु जल उच्छल्यौ गिरे पर्वत शिखर
वृक्ष जड़ सों सबै दिये उजारी॥

देव दानव मनुज गिरे भय भागि
वस्त्र फटि गये कान सुधि तनक नाहीं।

आजु असमय प्रलय देखि शिव चौंकि कै
शूल धरि भ्रमत इत उत लखाहीं ॥

सृष्टि को क्रम संग जानि बिधि बावरो
मूंड़ पै हाथ धरि बहुत रोयो।
दिशा दहिबो लगी भयो उल्का पात
रुदित मूरति तेज अगिन खोयो ॥

त्रस्त मधुकर नाहिं मधु वृक्ष को
गऊ निज बत्स गन नाहिं चाटैं।
हवि अग्नि नहिं हरत तहं पौन नहिं
गौन करि सकत नभ धूरि पाटैं ॥
चकित माया नटी भूलि निज नट कला
जगत गति जीव जड़ रोकि लीनी ॥
रमा श्रृंगार निज करत ही रहि गई
मनों सब चातुरी हारि दीनी ॥

जगत जाको खेल बनत बिगरत तनिक
भौंह के इत सों उत हलन मांही।
सोई त्रैलोक्यपति आजु कोप्यो जबै
तबै अब सबै कहं सरन नांही ॥

मारि हरिनाच्छ उर फार कर नखन सों
भार हर भूमि अति शोक टार्‌यौ ॥
गोद प्रहलाद अहलाद पूरब लियो
चाटि मुख चूमि जल नयन ढार्‌यौ ॥

राज्य दै अभय पद आप पद्मा सहित ॥
गए बैकुण्ठ जय जगत छायो ॥
प्रेम परधान परिनाम प्रमिन उर
भक्त वत्सल नाम सांच पायो ॥

सदा संकटहरन अकर कारन करन
कृपा कर नाम जिय जौन धारै ॥

सत्रु सन्ताप जय जातना तापहर अचल
बर घाम निज सो बिहारै ॥

सदा प्रभु सर्बदा गर्वहर अभय कर
जनन उर सौख्य कर दुखहारी ॥
पीर 'हरिचन्द' की हरहु करुनायतन
त्रसित कलि काल तव सरनधारी ॥7॥

बिरह, ठुमरी

अकुलात गुजरिया, दुख तें भरी।
तनिकौं सुधि तन को नहिं जब तें
लागी हरि की तिरछी नजरिया ॥
तलफत रहत बिरह दुख भारी
देत कोउ नहिं पिय की खबरिया।
'हरीचन्द' पिय बिन अति ब्याकुल
रोवत सूनी देखि सेजरिया ॥8॥

बिहाग

आजु रस कुंज महल में बतियन रैन सिरानी जात।
जाल रंध्र तें भरित चांदनी चलत मन्द कछु सीतल बात ॥
सनसनात निसि झिलमिल दीपक पात खरक बिच बीच सुनात।
रगमगे दोऊ भुज दिए सिरान्हे आलस-बस मुसकात जंभात ॥
मधुर बिहाग सुनात दूर सों लपटि रहे बिथकित सब गात।
'हरीचन्द' दोउ रूप-लालची सिथिल तऊ जागे न अघात ॥9॥

ग्रीष्म ऋतु, फूल के श्रृंगार को पद

आजु सखी फूले हरि फूल कुंज मांहीं।
प्यारी को संग लिये दीन्हें गल बांहीं ॥
फूलन के अंगन सब अभरन अति सोहैं।
देखि देखि ब्रज जन के मन को अति मोहैं ॥

बिछिया पग राई बेलि चित की गति हरती।
पंकज को पायजेब पायजेब करती ॥
मदनबान फूलन की कटि किंकिनी राजै।
कलियन की चोली मधि यौवन अति भ्राजै ॥

चम्पक की कली बनी चम्पाकली भारी।
फूलन के हार कंठ सोहत रुचिकारी॥
झबिया कर फूलन के बाजूबन्द दोऊ।
फूलन की पहुंची कर राजत अति सोऊ॥

फूलन की चूरी इमि कोऊ कर साजैं।
चन्दन के हार मनहुं लपटि लता राजैं॥
पल्लव बसी अंगुरिन में मुंदरी छबि देहीं।
देखत ही मोहन मन हाथन सों लेहीं॥

करना के करनफूल करन बीच धारे।
झुमका दोऊ झमत लखि मानों मतवारे॥
फूलन को झुलनी नक बेसर बिच धारी।
प्यारे को चित्त मनों पोहि धर्‍यो प्यारी॥

मदनबान फूलन की बन्दी अनुरागै।
देखत ही लालन हिय मदन बान लागै॥
बेना सिर फूलहि को देखत मन भूल्यो।
रूप की लता में मनों एक फूल फूल्यो॥

बेनी सिर फूलन की सोहत छबि छाई।
अपने कर नन्दलाल गूंथि कै बनाई॥
नख सिख तें फूलन के अभरन भव भारी।
फूलन के लहंगा अरु फूलन की सारी॥

फूली छबि देखि देखि नन्दलाल फूल्यो।
भ्रमर होइ मेरो मन 'हरीचन्द' भूल्यो॥10॥

आजु सखी बृजराज लाडिलो नव दूलह बनि आयो।
फूल सेहरो सीस बिराजै फूलन साज सजायो॥
फूलन के आभरन बिराजत फूलन माल बनाई।
फूलन चंवर ढुरत दोऊ दिसि फूल छत्र सुखदाई॥
घोड़ी सजी फूल के गहिने फूल लगाम बनाई।
फूले फूले सकल बराती तन धन देत लुटाई॥

फूले देव बिमानन फूले फूलन की झरि लाई।
'हरीचन्द' ऐसी जोरी पै फूलि फूलि बलि जाई ॥11॥

ग्रीष्म, सारंग

आजु नन्दलाल पिय कुंज ठाढ़े भए
स्रवन शुभ सीस पै कलित कुसुमावली।
मनहुं निज नाथ मुखचन्द सखि देखिकै
खसित आकाश तें तरल तारावली।
बहुत सौरभ मिलत सुभग त्रय विधि पवन
गुजरत महारस मत्त मधुपावली।
दास 'हरीचन्द' बृज चन्द ठाढ़े मध्य
राधिका बाम दक्षिन सुचन्द्रावली ॥12॥

मकर संक्रान्ति

अहो हरि नीको मकर मनाए।
चित्र चमन धरि भले लाडिले पुन्य समय घर आए।
कहा परब कियो दियो दान रस तिल तन प्रगट लखाए।
'हरीचन्द' खिचरी से मिलि क्यों कित तिरबेनी न्हाए ॥13॥

श्री महाप्रभु जी की बधाई, सारंग

आजु भयो सांचो मंगल भुव प्रगटे श्री बल्लभ सुखधाम।
करुना सिंधु सकल रस पोषक पतित उधारन जाको नाम ॥
दैवी जीवन अभयदान है रसिक जनन के पूरै काम।
'हरीचन्द' प्रभु मंगल मूरति गौर श्याम तन एक ललाम ॥14॥

प्रबोधिनी बिहाग

आजु सुहाग की राति रसीली।
गावो नाचो करो बधाई कुंजन मांझ छबीली ॥
गावत घोड़ी देव मनावत रस बरषत भरपूर।
'हरीचन्द' को टेरि टेरि कै देत सखी बस भूर ॥15॥

श्री ठाकुरजी की बधाई, बिहाग

आयो समय महा सुखकारी ॥
सब गुन गन संयुक्त मन रंजित अतिसय परम सुशोभा धारी ॥

रोहिनि नखत सात सुभ ग्रह सब कह कहिए उपमा मतिहारी।
दिसा प्रसन्न हंसत नभ निर्मल तारन की बाढ़ी छबि भारी॥
मंगलमय धरनी सब राजत पुर आकर बृज गांव सुखारी।
नदी प्रसन्न सलिल तालन की कमलन सो भइ शोभा भारी॥
द्विज अलिकुल सन्नाद करन लगे बन राजी फूलनि फुलवारी।
पुन्य गन्ध लै बह्यो महासुभ वायु सबिधि सुचि त्रिविध बयारी॥
द्विज जाचन की सान्ति अगिनि सब प्रगट भई कुंडन तें न्यारी।
असुर द्रोह सब साधू जन के मन सुप्रसन्न भये ता धारी॥
अजन जनम को समय जानि कै वजति लजति सब दुन्दुभि भारी।
गाइ उठे गंधर्बरु किन्नर चारन साध तुष्टि मन धारी॥
नाचन लगीं देवि अप्तरा सह अति प्यारी सब घर की नारी।
मुनि देवता महा आनन्दित बरसत फूल भरि भरि थारी॥
सागर के गरजन के पीछे मन्द मन्द गरजे जल धारी।
आधी राति उदित भयो चन्दा आनन्द करत हरत अंधियारी॥
देवि रूपिनी देवी जू तें प्रगट भए श्री गिरिवरधारी।
निरखि नयन आनन्द सिथिल भे 'हरीचन्द' बलिहारी॥16॥

बाल लीला, असावरी

आजु लख्यौ आंगन में खेलत जसुदा जी को बारो री।
पीतं झंगुलिया तनक चौतनी मन हरि लेत दुलारो री॥
अति सुकुमार चन्द्र से मुख पै तनक डिठौना दीनो री।
मानहुं श्याम कमल पै इक अलि बैठो है रंग भीनो री॥
उर बघनहा बिराजत सखि री उपमा नहिं कहि आवै री।
मनु फूली अगस्त की कलिका सोभा अतिहि बढ़ावै री॥
छोटी छोटी सीस लुटुरिया भ्रमरावलि जनु आई री।
तैसी तनिक कुल्हइया ता पै देखत अति सुखदाई री॥
छुद्र घटिका कटि में सोहत सोभा परम रसाला री।
मनहुं भवन सुन्दरता को लखि बांधी बन्दन माला री॥
पीत झंगा अति तन पै राजत उपमा यह बनि आई री।
मनु घन में दामिनि लपटानी छबि कछु बरनि न जाई री॥
कोटि काम अभिराम रूप लखि अपनो तन मन वारै री।
'हरीचन्द' बृजचन्द चरन रज लेत बलैया हारै री॥17॥

दान लीला, टोड़ी

ऐसी नहिं कीजै लाल, देखत सब बृज की बाल,
काहे हरि गए आज बहुतहिं इतराई।
सूधे क्यों न दान लेव, अंचरा मेरो छांड़ि देव,
जामें मेरी लाज रहै करो सो उपाई॥
जानत बृज प्रीत सबै, औरहू हंसैंगे अबै,
गोकुल के लोग होत बड़ेई चवाई।
'हरीचन्द' गुप्त प्रीत, बरसत प्रति रस की रीति,
नेकहू जो जानै कोउ प्रकटत रस जाई॥18॥

मकर संक्रान्ति, टोड़ी

करत दोउ यहि हित खिचरी दान।
जामें सदा मिले रहैं ऐसेहिं गौर श्याम सुख खान।
चित्र बस्त्र धरि परम नेह सों जोरि पान सों पान।
'हरीचन्द' त्योहार मनावत सखि-जन वारत प्रान॥19॥

ग्रीष्म ऋतु, सारंग

केसर खौर श्याम सुन्दर तन निरखत मन मोहै।
मनु तमाल मैं चम्पक बेली लपटि रही अति सोहै॥
मन घन में दामिनि लपटानी उपमा को कवि को है।
'हरीचन्द' बन तें बनि आवत बृज तिय मुख छबि जोहै॥20॥

प्रबोधिनी, यथा

कुंजन मंगलचार सखी री।
थापे दीने कलस बधाये तोरन बांधी द्वार॥
गावत सबै सोहाग छबीली मिलि सब बृज की बाम।
बन्ना बनि आयो नन्द नन्दन मोहन कोटिक काम॥
रंग रंगीली घोड़ी चढ़ि कै सिहारो सोहत सीस।
देत असीस सासुरे की जब जीवो कोटि बरीस॥
बन्ना बहू पास बैठारी जोरि गांठ इक साथ।
'हरीचन्द' को देत बधाई दुलहिन अपने हाथ॥21॥

दीनता, यथा रुचि

गुन गन बिट्ठलनाथ के कहं लगि कोउ गावै।
अमित महिम लघु बुद्धि सों कछु कहत न आवै॥

दैवी जन अपने किए कलि जीव उबारै।
माया तिमिर मिटाव कै खल कोटि उधारै॥
अंगीकृत जाको कियो ताको नहिं त्याग्यो।
अपराधहि मान्यो नहीं भक्तन अनुराग्यो॥
सरन पर्‍यो त्रय ताप को मेट्यो छन माहीं।
'हरीचन्द' की गहि भुजा यामें सक नाहीं॥22॥

बिहाग

गावत गोपी कोकिल बानी।
श्रीबृषभानुराय से राजा कीरति सी जाकी पटरानी॥
गावत-सारद नारद सुक मुनि सनकादिक ऋषि जानी।
गावत चारिउ बेद शास्त्र षट् कहि कहि अकथ कहानी॥
गावत गुन अज व्यासादिक शिव गीत परम रस सानी।
मन क्रम बचन दास चरनन की गावत 'हरीचन्द' सुखदानी॥23॥

दान लीला, सारंग

ग्वालिन दै किन गोरस दान।
करुन पुन्य यह गोबर्धन गिरि तीरथ सों बढ़ि मान॥
गहन चिकुर मुख पूरन बिधु पै छाया सम लखु आन।
बड़ो परब तुव भाग मिल्यो है करु न बिलम्ब सुजान॥
सिसुता पूरि प्रकट प्रति पद नव जोबन सन्धि समान।
'हरीचन्द' कंचन अंगन दै हरि सुपात्र पहिचान॥24॥

अशीष, यथा रुचि

चिरजीवो यह जोरी जुग जुग चिरजीवो यह जोरी।
श्री जसुदानन्दन मनमोहन श्रीबृषभानु किशोरी॥
नित ब्याह नित्य ही मंगल नित नित सुख अति होई।
श्री बृन्दाबन सुख सागर को पार न पावै कोई॥
एक रूप दोउ एक बयस दोउ दोऊ चन्द्र चकोरि।
'हरीचन्द' जब लौं ससि सूरज तब लौं जीयो जोरि॥25॥

ब्याहुला, यथा रुचि

चलो सखी मिलि देखन जैये दुलहिन राधा गोरी जू।
कोटि रमा मुख छबि पै वारौं, मेरो नवल किशोरी जू॥

घंघरी लाल जरकसी सारी सोंधे भीनी चोली जू।
मरवट मुख में शिर पै भौंरी मेरी दुलहिया भोली जू॥
नकवेसर कनफूल बन्यो है छबि कापै कहि आवै जू।
अनवट बिछिया मुंदरी पहुंची दूलह के मन भावै जू॥
ऐसी बना बनी पै री सखि अपनो तन मन वारी जू।
सब सखियां मिलि मंगल गावत 'हरीचन्द' बलिहारी जू॥26॥

श्रीस्वामिनी जी की बधाई

चलीं बधाई गावन के हित सुन्दर बृज की नारी।
अंचल उड़त हंस गति चंचल कर लै मंगल थारी॥
पीत बसन कटि कसन रसन छबि रसनि कहौं किमि गाई।
दामिनि पै सन्ध्या घन तापै फिरि दामिनि लपटाई॥
नूपुर रुनित झुनित कंकन कर हार चुरी मिलि बाजै।
मनु अनन्द भरि सब तन भूषन गाजत साजत राजै॥
चौमुख चारु दीप थालन पर मंगल साज सजाई।
मनहुं सनाल कमल पर कमला कनकलता चढ़ि धाई॥
धावत खसत सुमन बेनी तें उपमा कह कवि हारैं।
मनु कोमल पग गौनि चुकरगन फूल पांवड़े डारैं॥
ऊंचे सुर गावत छबि छावत बरसावत रस भाईं।
इक सों इक बढ़ि अतिहि उतायल कीरतिमन्दिर आईं॥
निरखत मुख सुख अति हिय बाढ़्यो वारि सुनत मन दीनों।
आज सखी नन्द के घर को सुख सांच बिधाता कीनों॥
नाचत मुदित करत कौतूहल गावत दै करतारी।
'हरीचन्द' आनन्दमय आनन्द जुगल इकत्र निहारी॥27॥

बिहार, केदार

चले दोउ हिलि मिलि दै गल बाहीं।
फैली घटा चहूं दिसि सुन्दर कुंजन की परछाहीं॥
अपने कर पिय श्रम जल पोंछत प्यारी कह नहिं नाहीं।
'हरीचन्द' बिजन डोलावत श्रम लखि बिधि हरि आदि सिहाहीं॥28॥

रथ यात्रा, सारंग

चारु चल चक्र चित्रित बिचित्रित परम
जगत विजयी जयति कृष्ण को जैत्र रथ।

अति तरलतर बलाहक शैब्य सुग्रीव मनिपुष्प
तुरंग योजित चलत पथ सुपथ॥
फहरत ध्वज उड़त नव पताका परम कलस
कल इन्द्र सम सकल चमकत अकथ।
चक्र ता पर रह्यो तासु तल वायु सुत बिनत
बिनता सुअन गरजि अरि करत हथ॥
खम्भ कूबर छत्र चारु डांड़ी चारु बिबिध
मनि जटित उघरित बेद शब्द कथ।
झांझ झनकत करत घोर घंटा घहटि घने
घुंघरू थिरत फिरत मिलि एक जथ॥
झुखी सूरज मुखी सुखी लखि जन दुखी
दैत्य दल झलमलत झालरन मुक्त तथ।
बैठि दारुक तदारुक करत अश्व को चलत
मन बेग सम वेगति शब्द नथ॥
देव ऋषि करत जय शब्द मुरछल ढुरत
सूत बंदी बिरद कहत बहु भांति गथ।
थकित 'हरीचन्द' दृग सरस सोभा निरख
हरषि सुमनन बरषि लह्यो चारों अरथ॥29॥

बाल लीला, यथा रुचि

छोटो सो मोहन लाल छोटे छोटे ग्वाल बाल
छोटी छोटी चौतनी सिरन पर सोहैं।
छोटे छोटे भंवरा चकई छोटी छोटी लिये
छोटे छोटे हाथन सों खेलैं मन मोहैं॥
छोटे छोटे चरन सों चलत घुटुरुवन
चढ़ीं ब्रज बाल छोटी छोटी छबि जोहैं।
'हरीचन्द' छोटे छोटे कर पै माखन लिये
उपमा बरनि सकै ऐसे कवि को हैं॥30॥

आशिष, बिहाग

जुग जुग जीवो मेरी प्रान प्यारी राधा।
जब लौं जमुन जल रबि ससि नभ थल
तब लौं सुहाग लहौ सुजस अगाधा॥
नित नित रूप बाढ़ो परम्पर प्रेम गाढ़ो
नवल बिहार करि हरौ जन बाधा।

'हरीचन्द' दै असीस कहत जीओ लख बरीस
तुम्हरे प्रगट भए पूरी सब साधा ॥31॥

गणेश चतुर्थी को पद, राग यथा रुचि

जय जय गोपी गणेश वृन्दाबन चिन्तामनि
ऋद्धि सिद्धि दायक ब्रजनाथ प्रान प्यारे।
बनिता कुच मोदक गहि बार बार केलि करन
प्रिया बेनिका भुजंग हस्त कंज धारे॥
मान समय पद परसत अंकुसादि चिन्ह लसत
हंसत अभय बरद परम प्रान के रखवारे।
शुंड दंड बाहु मेलि करनि संग सुगज केलि
करत हैं 'हरीचन्द' निरखि हरषि प्रानप्यारे ॥32॥

नित्य, विहाग

जय श्री मोहन प्रान प्रिये ॥ध्रुव॥
श्री वृष भानु नन्दिनी राधे ब्रज कुल तिलक त्रिये॥
पद जा पद रज सिव अज बन्दत नित ललचत रहत हिये।
तिनहरि संग बिहरत निसंक निसि दिन गलबांह दिये।
जा मुख चन्द मरीच देखि सब ब्रज नर नारि जिये।
तिनकी जीवन मूरि होइकै सहजहि स्वबस किये॥
इन्द्रायिक दिगपति जाके डर बरतत रुखहि लिये।
'हरीचन्द' सो मान जासु लखि सहजहि बहुत भिये ॥33॥

स्फुट, यथा रुचि

जूरे हैं झूठे ही सब लोग।
जैसे स्वामी परिकर तैसे तैसो ही संयोग ॥ध्रुव॥
वे तो दीनानाथ कहाये करि इत उत कछु काज।
एक एक की लाख इन्होंने गाई तजि कै लाज॥
जुरे सिद्ध साधक ठगिया से बड़ो जाल फैलायो।
मूड्यो जिन्हैं मिटायो तिनको जग सों नाम धरायो॥
आजु नाहिं तो कल या आसा ही में दीनहिं राख्यो।
'हरीचन्द' मन लै निरमोहित श्वेत कृष्ण नहिं भाष्यो ॥34॥

दीनता, देवगन्धार

जो पै श्री बल्लभ सुत नहिं जान्यो।
कहा भयो साधन अनेक मैं करिकै वृथा भुलान्यो॥
बादि रसिकता अरु चतुराई जो यह जीवन जान्यो।
मर्‍यो बृथा विषयारस लम्पट कठिन कर्म में सान्यो॥
सोइ पुनीत प्रीति जेहि इनसों बृथा बेद मथि छान्यो।
'हरीचन्द' श्रीबिट्ठल बिन सब जगत झूठ करि मान्यो॥35॥

तथा, आसावरी

जे जन अन्य आसरो तजि श्री बिट्ठलनाथहि गावैं।
ते बिन श्रम थोरेहि साधन में भव-सागर तरि जावैं॥
जिनके मात पिता गुरु बिट्ठ और कहूं कोउ नाहीं।
ते जन यह संसार समुद्रहिं बत्स खुरन करि जाहीं॥
जिनके श्रवन कीरतन सुमिरन बिट्ठल ही को भावै।
ते जन जीवन मुक्त कहावहिं मुख देखे अघ जावै॥
जिनके इष्ट सखा श्रीबिट्ठल और बात नहिं प्यारी।
तिनके बस में सदा सर्वदा रहत गोबर्द्धन धारी॥
जिन मन काय करम बच सब बिधि श्रीबिट्ठल पद पूजो।
ते कृत कृत्य धन्य ते कलि में तिन सम और न दूजो॥
जो निसि दिन श्री बिट्ठल बिट्ठल बिट्ठल ही मुख भाखैं।
'हरीचन्द' तिनके पद की रज हम अपने सिर राखैं॥36॥

बधाई, राग कान्हरा

जो पै श्री राधा रूप न धरती।
प्रेम पन्थ जग प्रगट न होतो ब्रज बनिता कहा करती॥
पुष्टिमार्ग थापित को करतो ब्रज रहतो सब सूनो।
हरि लीला काके संग करते मंडल होतो ऊनो॥
रास मध्य को रमतो हरि सग रसिक सुकबि कह गाते।
'हरीचन्द' भाव के भय सों भजि किहिके सरनहिं जाते॥37॥

जय जय जय जय जय श्री राधा।
जब तें प्रगट भईं बरसाने नासी जन के तन की बाधा॥
सब सखि आनन्दित मन में अति चरन कमल अवराधा।
'हरीचन्द' वृजचन्द पिया को प्रेम पन्थ जिन साधा॥38॥

श्री रामनौमी व दशहरा का कीर्तन, सारंग

जयति राम अभिराम छबि धाम
पूरन काम श्याम बपुबाम सीता विहारी।
चंड कोदंड बल खंड कृत दनुज बल
अनुज सह सहज सुभ रूपधारी॥
रक्ष कुल अनल बल प्रबल पर्जन्य सम
धन्य निज जन पक्ष रक्षकारी।
अवध भूषन समर बिजित दूषन
दुष्ट बिगत दूषन चतुर धर्मचारी॥
खर प्रखर अगिन लंक दृढ़ दुर्ग
दल दलमलन वाहु मारीच मारी।
वैश्रवन अनुज घट श्रवन रावन शमन
शमन भय दमन 'हरिचन्द' वारी॥39॥

जगाने के पद

जागो मेरे प्रान पियारे।
बलि बलि गई दिखावो ससि मुख उठो जगत उंजियारे॥
मेटहू बिरह ताप दरसन दै बोलहु मधुरे बैन।
आलस भरे रैनि रंगराते खोलहु पंकज नैन॥
मेरे सरबस जीवन माधव प्रात भयो बलि जागो।
कछु अलसाय जंभाइ मन्द हंसि 'हरीचन्द' गर लागो॥40॥

प्रबोधनी के पद, यथा रुचि

जागो मंगल मरति गोविन्द बिनय करत सब देव।
तुव सोये सबही जन सोयो लखहु न अपनो भेव॥
बदी वेद खरे जस गावत अस्तुति करत जुहारी।
नारद सारद बीन बजावत जय जय बचन उचारी॥
किन्नर अरु गन्धर्व अप्सरा तुम्हारो ही जस गावैं।
बाजन बिबिध बजाइ तुम्हें सब करि मनुहारि जगावैं॥
जग के मंगल काज होत नहिं बिनु तुव उठे कृपाल।
तुव जागे सबही जग जागत तसों उठहु दयाल॥
निद्रा तजहु रमापति केशव चहुं दिसि मंगल माचै।
पंकज नयन बिलोकि बिमल जस 'हरीचन्दहू' बांचै॥41॥

ग्रीष्म ऋतु

झीनो पिछौरा सोहै आजु अति झीनो पिछौरा सोहै।
चन्दन लेप नन्दनन्दन तन देखत ही मन मोहै॥
पारिजात मन्दार रही लसि फूल छरी कर लीन्हे।
सांझ समय वन तें बनि आवत गोधन आगे कीन्हें॥
गोरज छुरित अलक सब सुन्दर ब्रज बालन दरसायो।
'हरीचन्द' मुख चन्द देखिकै बासर ताप नसायो॥42॥

दीनता, यथारुचि

तुम सम नाथ और को करिहै।
हमसे हीन दीन जनहू पै कौन कृपा बिसतरिहै॥
को निज बिरद संभारन कारन दौरि दीन दुख हरि है।
जानि क्षुधित 'हरिचन्द' असन को भेजि क्षुधा परिहरिहै॥43॥

अशीष, कान्हरा

तिहारो घर सुबस बसो महरानी।
कीरति जू तुम्हरे घर प्रगटीं घृत जननी ठकुरानी॥
जाके भये सकल सुख बरसै जिमि सावन को पानी।
अति आनन्द भयो गोधन में हम यह आगम जानी॥
कोउ गावै कोउ देत बधाई वेद पढ़त मुनि ज्ञानी।
'हरीचन्द' प्रगटी श्री राधा मोहन के मन मानी॥44॥

दीनता, यथा रुचि

तेई धनि या कलयुग में जिन जाने श्री बिट्ठलनाथ।
जीवन जगत सुफल तिनहीं को जौन बिकाने इनके हाथ॥
धरम मूल इक इनकी पद रज इनके दासहि सदा सनाथ।
भक्ति सार इनको आराधन इनहीं को गावत श्रुति गाथ॥
इनके बिनु जे जीवत जग में ते सब श्वास लेत जिमि भाथ।
'हरीचन्द' चलु सरन इनहि के धरि कै चरनन पर निज माथ॥45॥

सेहरा यथा रुचि

दूलह श्री बृजराज फूलि बैठे कुंजन आज।
फूलन को सेहरो फूलन के अभरन फूलन के सब साज॥

फूलि सखी गीत गावैं देव फूल बरसावैं फूल्यो सकल समाज।
फूली श्री राधाप्यारी देखि फूली बृजनारी 'हरीचन्द' फूल्यो अतिआज ॥47॥

दान एकादशी और बावन द्वादशी

दान लेन द्वै ही जन जान्यो।
कै तुम नन्दराय के ढोटा कै बावन बलि छल ठान्यो ॥
तीन पैर कहि छोटे पग सों उन छल करि कै देह बढ़ाई।
तुम गोरस के मिस कछु औरे रस लीनो छलिकै बृजराई ॥
वे छोटे कपटी तुम खोटे एकहि से विधि रचे संवारी।
'हरीचन्द' वे तो बावन रहे तुम छप्पन निकसे गिरधारी ॥47॥

दान एकादशी

देखे आजु अनोखे दानी।
जाचक पन में इती ढिठाई लाल कौन यह बानी ॥
रार करत कै गोरस मांगत सो कछु बात न जानी।
'हरीचन्द' कुल दीपक ढोटा कौन रीति यह ठानी ॥48॥

नित्य टोड़ी

देखौ जू नागर नट, ठाढ़ो जमुना के तट,
पर मग कोउ चलन न पावै।
काहू को हरत चीर, काहू को गिरावै नीर,
काहू की ईंडुरी दुरावै॥
श्याम बरन तन सीस टिपारो
सोभा कहि नहिं आवै।
'हरीचन्द' हंसि हंसि नयनन आवत
तन मन सबहि चोरावै॥49॥

मकर संक्रान्ति का और संक्रान्ति के दिन गायबे को पद

राग यथा रुचि

दुतिय नृप भानु छठी तजु मान।
करन चतुर्थ सदा सौतिन हिय कटि पंचमी सुजान ॥
तो सम माती नाय और कोउ नव मन दम तू बाल।
तुव बिन आठ बेदना पावत ब्याकुल पिय नन्दलाल ॥
दसम केतु पीड़त पिय की अति निज दुख अगिनि बढ़ाय।
करु अभिषेक अमृत एकादस कुच पिय के हिय लाय ॥

द्वादश बिनु जल तिमि हरि तुव बिन लग तनि प्रथम न नेक।
'हरीचन्द' है तृतिय पिया संग करु संक्रमन विवेक ॥50॥

नित्य, यथा रुचि

दोउ मिलि पौढ़े सुख सों सेज।
करत भावती रस की बतियां बाढ़े मदन मजेज ॥
बतियन ही कछु अनरस ह्वै गयो पिया रही करि मान।
बोलन नहिं कछु मौन ह्वै रही भौंह जुगल धनु तान ॥51॥

व्याहुला, यथा रुचि

दोउ जन गांठि जोरि बैठारे।
बिहंसत दोउ मुख देखि परस्पर चितवत होत सुखारे ॥
दूल्हा दुलहिन को आनन्द लखि बढ़्यो अनन्द अपार।
'हरीचन्द' को पकरि नचावत गारि देत ब्रज नार ॥52॥

ग्रीष्म ऋतु, यथा रुचि

दोउ मिलि बिहरत जमुना तीर मैं।
करि कर के जलयन्त्र चलावत भींजि रही लट नीर मैं ॥
इत उत तरत सखी जन सोहत मनहुं कमल जल भीर की।
छींट उड़ावत हंसत हंसावत बोलनि मनु पिक कीर की ॥
सांवरे अंग गौर तन सोहत लपटनि भींजे चीर की।
'हरीचन्द' लखि तन मन वारत छबि राधा बलबीर की ॥53॥

बिरह

न जानी ऐसी हरि करिहैं।
हमरे है द्विजन के, है हैं दया न जिय धरिहैं ॥
होत सामनो जिनि हंसि चितवत भाव अनेक कियो।
तिन अब मिलतहि सकुचि इतै सों मुखहू फेरि लियो ॥
मान्यो तिन्हैं काम नहिं हमसों तासों निठुर भये।
'हरीचन्द' ब्रजनाथ नाम की लाजहि ज्यों मिटये ॥54॥

नित्य, यथा रुचि

नागरी रूप लता सी सोहै।
कमल सो बदन पल्लव से कर पद देखत ही मन मोहै ॥

अतसी कुसुम सी बनी नासिका जलज पत्र से नयन।
बिम्ब से अधर कुन्द दन्तावलि मदन बान सी सयन॥
गाल गुलाब कान झुमका मनु करनफूल के फूल।
बेनी मानों फूल की माला लखि कै मन रह्यो भूल॥
बाहु सुढार मृनाल नाल सम फूल सरिस सब अंग।
फूलन ओट लगे हैं द्वै फल बाढ़त देखि अनंग॥
जानु बनी रम्भा की खम्भा की खम्भा सोभा होत अपार।
गूलरि फूल सरिस कटि राजत कविजन लेहु बिचार॥
नारंगी सी एंड़ी राजत पद तन मनहुं प्रवाल।
और आभरन बिबिध फूल बहु कर पहुंची उर माल॥
चम्पै सी देह दमक दवना सी चमक चमेली रंग।
मालति महल लपट अति आवत कोमल सब अंग अंग॥
रसिक सिरोमनि नन्दलाल सोइ भंवर भए हैं आइ।
देखि देखि छबि राधा जू की 'हरीचन्द' बलि जाइ॥55॥

जल बिहार

नाव चढ़ि दोऊ इत उत डोलै।
छिरकत कर सों जल जन्त्रित करि गावत हंसत कलोलै॥
करनधार ललिता अति सुन्दर सखि सब खेवत नावै।
नाव हलनि मैं पिया बाहु मैं प्यारी डरि लपटावै॥
जेहि दिसि करि परिहास झुकावहिं सबही मिलि जल यानै।
तेहि दिसि जुगुल सिमिटि झुकि परहीं सो छबि कौन बखानै॥
ललिता कहत दांव अब मेरी तू मों हाथन प्यारी।
मान करन की सौंह खाइ तौ हम पहुंचावैं पारी॥
हंसत हंसावत छींट उड़ावत बिहरत दोऊ सोहैं।
'हरीचन्द' जमुना जल फूले जलज सरिस मन मोहैं॥56॥

बधाई, यथा रुचि

प्रगटे रसिक जनन के सरबस।
जसुमति उदर अलौकिक वारिधि श्याम कला निधि निधि रस॥
परसति चन्द्रकला सो पूरब उज्ज्वल बिमल बिसद जस।
'हरीचन्द' ब्रज बधू चकोरी सहजहि कीन्ही निज बस॥57॥

प्रगटे प्राननहूं तें प्यारे।
नन्द भवन आनन्द कलानिधि जसुमति मात दुलारे॥

आजु भयो सांचो आनन्द भुव फले मनोरथ सारे।
'हरीचन्द' गोपिन के सरबस सब ब्रज के रखवारे ॥58॥

वियोग

पिया बिनु बीत गए बहु मास।
दिन दिन मदन सतावत अति ही बाढ़त बिरह हरास ॥
छन छन छीजत छकत छबीली छांड़ि अवास।
वेगि कृपा करि आवहु माधव 'हरीचन्द' गुन रास ॥59॥

दूती, यथा रुचि

प्यारी मो सों कौन दुराव।
कहि किन अरी अनमनी सी क्यों काहे को जिय चाव ॥
काहे को अंसुवन सों मुख धोवत बारी नेक बताव।
'हरीचन्द' क्यों कहत न मोसों प्यारी लाइ मिलाव ॥60॥

नित्य बिहार, बिहाग चौताला

प्यारी के कुंज पिय प्यारो आंवत
हरिहि धाय भुजन भरि लीनो।
उमंगि मिले छतियन सों लपटे दोऊ
चलत न मारग रुक्यो रंग भीनों ॥
जित की तित रहि खरी सखियां
सब छूटत भुजन अलिंगन दीनो।
'हरीचन्द' जब बहुत संभराए तब
क्योंहूं गमन महलन में कीनो ॥61॥

विहाग तथा

प्यारी लाजन सकुची जात।
ज्यों ज्यों रति प्रतिबिम्ब सामुहे आरसि मांह लखात ॥
कहत लाख यहि दूर राखिये बल करि कर्षत गात।
'हरीचन्द' रस बढ़त अधिक अति ज्यों ज्यों तीय लजात ॥62॥

संक्रान्ति, यथा रुचि

प्यारे इतही मकर मनावहु।
ताती खिचरी सुखद अरोगौ हम कहं मुख उपजावहु ॥
बड़ो परब है आजु श्याम घन कहूं न चित्त चलावहु।
'हरीचन्द' मिलि देहु महा सुख मेरी लगन पुजावहु ॥63॥

प्यारे जान दैहौं आज।
कोटिन मकर करो नहिं छांड़ौ प्राणनाथ ब्रजराज ॥
मीन मेख बिनु बात करत तुम कहूं मिथुन ललचाने।
धनि धनि पिय तुम तुल नहिं दूजो सबके घटन समाने ॥
करकत हिय बीछी सी बातैं सौतिन संग जो कीनी।
तासो राखौं लाय हिये अब करि करि अधिक अधीनी ॥
तौ वृषभानु राय की कन्या जौ अस तुमहिं न छांड़ौ।
बड़ो परब यह पुन्य उदय मोहिं मिलि तुमसों रंग मांड़ौं ॥
दच्छिन होन देउं नहिं कबहूं करौ लाख चतुराई।
'हरीचन्द' मेरे अयन बिराजौ सदा अबै बृजराई ॥64॥

पिया सों खिचरी क्यों तू राखत।
कहा मान करि बैठि रही है कछुक बचन नहिं भाखत ॥
यह संक्रम खिचरी को आली मानहिं दूरि न राखत।
'हरीचन्द' पिय सों खिचरी सी मिलि क्यों रस नहिं चाखत ॥65॥

प्यारी जू के तिल पर हौं बलिहारी।
सब सखियन की डीठि डिठौना रति रतिपति मद हारी ॥
श्याम सरूप बसत बनि सूछम सोई दरसावत प्यारी ॥
'हरीचन्द' हरि पीर मिटावन एक यहै गुनकारी ॥66॥

परम्परा छप्पै

नौमि गोपी पति पद पंकज अरुनारे।
पुनि शिव नारद ब्यास बहुरि सुक मुनि मतवारे ॥
विष्णु स्वामि पुनि वंदि बिल्वमंगल पद बन्दत।
श्री वल्लभ चरनारबिन्द जुग नौमि अनन्दत ॥
श्री विट्ठल तिनकी दोऊ बिधि संतति जो अबलौं प्रगटै।
तेहि बन्दत नित 'हरीचन्द' यह परम्परा मत की उघटै ॥67॥

जाड़े में सैन समय गाइबे के पद

प्यारी को खोजत है पिय प्यारो।
मिलि रहि दीपावलि मैं झिलिमिलि फैलो बदन उजारो ॥
नूपुर धुनि सुनि जानि नवेली गहि ल्यायो पिय न्यारो।
'हरीचन्द' गर लाइ मनायो दीप दान स्योहारो ॥68॥

बधाई

प्रगटी सुन्दरता की खान।
श्री बृषभानु राय के मन्दिर राधा परम सुजान॥
गावत गोपी गीत बधाई बधाई बाजत तूर निसान।
अम्बर देव फूल बरसावत चढ़ि चढ़ि दिव्य बिमान॥
सनमान जाचक भएअजाचक सिगरे पाइ सबिधि सनमान।
'हरीचन्द' ब्रजचन्द पिया की जोरी अति सुखदान॥

ग्रीष्म ऋतु में, राग वृन्दावनी सारंग

प्यारी मति डोलै ऐसी धूप में।
तेरे मैं तो वारी गई री।
जाके हेतु फिरत तू बन बन सो तोंहि आपुहि बोलै॥
तेरे मैं तो वारी गई री।
चलि किन कुंज उसीर महल तू करु पिय संग कलोलै॥
तेरे मैं तो वारी गई री।
'हरीचन्द' मिलि ठीक दुपहरी सुरति अमृत रस घोलै॥
तेरे मैं तो वारी गई री॥70॥

पिय मेरे अंकन सुरथ बिराजौ।
सुरंग चूनरि झालरि झूमत मोती लर बहु साजौ॥
किंकिनि कलहु घंटिका बाजनि चंवर चिकुर चल सोहै।
अंचर ब्यजन चलनि मनमोहन सबही बिधि जिय मोहै॥
कोक कला कल चक्र चपलबर तुरंग उछाह लगाये।
नेह डोर बल सेज भूमि पै करि मनुहार चलाये॥
अधर सुधा भेंट करौंगी स्वेद कुसुम बरसाई।
'हरीचन्द' बल बेगि पधारौ जानि सिरोमनि राई॥71॥

नित्य, राग षट

प्रात समय उठतहिं श्रीवल्लभ यह मंगलमय लीजै नाम।
कोटि बिघन वारन पंचानन सब बिधि समरथ पूरन काम॥
अघ नासन करुनानिधि दीनानाथ पतितपावन सुखधाम।
सुमिरन मात्र हरन जन आरति मोहन कोटि रति काम॥
रहिये इनकी सरन सदा चलि बिकि जैये इन कर बिनुदास।
'हरीचन्द' निरभय इन चरननि छत्र छांह कीजै विश्राम॥72॥

गरमी में सेहरे को पद, राग यथा रुचि

फूल्यो सो दूलह आजु फूल ही को साजै साज
फूल सी दुलही पाइ फूल्यो फूल्यो डोलै।
केसरी बन्यो है बागो मोतिन की कोर लगो
फूल झरै जब वह मुख बोलै॥
फूल को सिहरो सीस फूलन की मालकंठ
फूले फूले नयन दोऊ लगे अनमोलै।
'हरीचन्द' बलिहारी निज कर गिरिधारी
कली सी दुलहिया को घूंघट खोलैं॥73॥

फलहु को कंगना नहीं छूटत कैसेहो बलबीर जू।
जसपि वार सब आजु तुम्हारी नामहिं के रनधीर जू॥
दूध पिवाओ जसुदा मैया जादिन को सो आयो।
चोरि चोरिके माखन खायो सो बल कहां गंवायो॥
तारी दै दै हंसीं सखी सब आजु परी मोहि जानी।
सुनि कै तिनकी बात दुलहिया घूंघट में मुसक्यानी॥
कोटि जतन कोऊ करि हारौ लगी लगन नहिं टूटै।
'हरीचन्द' यह प्रेमडोरना को कैसे करि छूटै॥74॥

फूल को सिंगार करत अपने हाथ प्यारो।
फूलन की कलियन को आभरन संवारो॥
पाटी पारि अपने हाथ बेनी गुथि बनावै।
सीसफूल करनफूल लै लै पहिरावै॥
कंचुकि पहिरावत मैं चपलई कछु कीनी।
प्यारी मुसकाय आंखि नीची करि लीनी॥
किंकिन पहिराय झबा लहंगा पहिरायो।
देखि देखि मुदित होत प्यारो मन भायो॥
पायल पहिरावन को चित्त जबै कीनो।
प्रान प्यारी सोचि चरन तब छिपाय लीनो॥
प्यारी को संकोच जानि प्यारे इमि भाख्यो।
मान समय कोटि बार इनकहिं सीस राख्यो॥
पायल मग बांधि फूल माला पहिराई।
अपने कर नन्दलाल आरसी दिखाई॥
प्यारी तब धाइ पिया कंठहि लपटाई।
'हरीचन्द' बार बार लखिकै बलि जाई॥75॥

रास के पद

फिरि लीजै वह तान अहो पिय फिर लीजै वह तान।
नि नि ध ध प प म म ग ग रि रि सा सा मोहन चतुर सुजान॥
उदित चन्द्र निर्मल नभ मंडल थकि गये देव विमान।
कुनित किंकिनी नूपुर बाजत झनझन शब्द महान॥
मोहे शिव ब्रह्मादिक वहि निसि नाचत लखि भगवान।
'हरीचन्द' राधा मुख निरखत छूट्यो सुर तिय मान॥76॥

विहार, बिहाग

बैठे दोउ अपने सुख मिलि।
ऊंचे महलन के चौबारे,
सरद चांदनी चहुं दिसि रही खिलि॥
प्रिया करत कछु बिनय लाल सुनि
सहि न सकत जिय बिबस जात हिलि।
कहि बस बल 'हरीचन्द' अंश पर
ढुरत अधर में अमर रहत रिलि॥77॥

अगहन में राजभोग समय, सारंग

बारो असि मेरो लाल सोइ उठत प्रातकाल
कहा तीर कैसो चीर झूठही अंगराती।
.चोरी लाइ छिनारो लावत
तुम ग्वालिन मद माती॥
इहि मिस नित उठि देखन आवत
अपनो मन क्यों नहिं समुझावति।
यौवन के रस चूर फिरत
तुम घर घर में इतराती॥
'हरीचन्द' धरन जाहु, लालहिं मति दोष लाहु,
कहत बात क्यों बनाइ कांपै इठलाती॥78॥

विहार, केदारा

बैठे लाल जमुना जू के तट पर।
ग्रीष्म ऋतु जान अति सुख माना
मान संग सब गोपी चतुरतर॥

व्यजन चंवर ढुरत चहुं दिसि तें
सोभित सुभग नवल बर।
'हरीचन्द' चन्द बदन हरि की छबि लखि
कोटि काम वारि गयो एक एक पद नख पर॥79॥

तथा, कलिंगड़ा

बीती निसि तिय सोवन दीजै यह ललिता लै बीन बजायो।
चौंकि परे दोउ भोर जानि तब रसमसे नैननि आलस आयो॥
सीरे जानि हार उर के पिय करि मनुहार तियाहि सुनायो।
'हरीचन्द' संगम सुख शोभा सो कैसे कहि जात सुनायो॥80॥

रास को पद, भैरव

बृन्दावन उज्ज्वल बर जमुना तट नन्दलाल
गोपिन संग रहस रच्यो सरद जामिनी।
निरतत गोपाललाल संग में ब्रज बाल बनी
अद्भुत गति लेत कोक कलित कामिनी॥
लाग डांट सुर बंधान गावत अचूक तान
ततथेइ ततथेइ थेई गति अभिरामिनी
गोपिन संग श्याम सुन्दर मंडल मधि सोभित अति
बिहरत बहु रूप मानों मेघ दामिनी
थाक्यो नभ चन्द देखि रैनि सिथिल भई
लखि हरि गजपति संग गज गामिनी।
'हरीचन्द' सोभा लखि देव मुनि नभ बिथकित
मानी हरि साथ सबै ब्रज भामिनी॥81॥

वामन द्वादशी की बधाई, सारंग

बलि कीनो सो कौन करै।
सरबस हरिहि समर्पि प्रेम सों जगत सीख हित को निदरै॥
द्विज सनमान दान बच पालन दृढ़ व्रत को हठि नाहिं टरै।
आत्म समर्पन दास्य भाव निज करि आग्रह को जीय धरै॥
हरि जस स्वामि प्रगटि दिखरायो जामें संका सकल जरै।
प्रभु प्रतिकूल गुरुहि निज छांड़्यौ यह अनन्य मत को बिचरै॥

राजहु गये साप गुरु दीनों आपु बंधे पै कौन डरै।
'हरीचन्द' दृढ़ता की दुन्दुभि जग बजाइ इमि कौन तरै ॥82॥

बेदन में निज महिमा थापन गए त्रिबिक्रम आजु सुरारी।
सब जग व्यापकता दिखराई सबन प्रत्यक्ष दीन हितकारी ॥
औरहु एक भेद है यामें जो प्रगट्यो या भेष खरारी।
बामन हूं बपु सब सों ऊंचे त्रिभुवन दायक जदपि भिखारी ॥
जगदाता विराट बपु की फिरि कहौ महिम को कहै बिचारी।
'हरीचन्द' छोटे-पनहूं में जब सब ही सों बढ़ि बनवारी ॥83॥

बलिहि छलन गए आपु छलाये।
मांगत दान दियो अपुने को बांधि एक छन जनम बंधाये ॥
प्रनतारतिहर भगत बछल प्रभु सांच नाम निज करि दिखराये।
'हरीचन्द' सुर काज करन गए असुरराज थिर करि हरि आये ॥84॥

बलि की मति पर बलि बलिहारी।
सिखयो जगहि समर्पन जिन निज गुरु की आयसु टारी ॥
हरि सो बढ़ि सुपात्र जग नाहीं बलि सों बढ़ि कै दाता।
भूमि दान सम दान नहीं यह थापी तीनहुं बाता ॥
दृढ़ विश्वास अचल निज मत हठ कबहुं न डिगत डिगाये।
याही तें पहरू करि हरि को रहत द्वार बैठाये ॥
सेवक स्वामि अनन्य भए मिलि गति नहिं परत लखाई।
इनमें को बढ़ि को घटि यह किमि 'हरीचन्द' कहि गाई ॥85॥

भोजन के पद, राग यथा रुचि

भोजन करत किशोर किशोरी।
कुंज महल में परि गै परदा सखि ठाढ़ी चहुं ओरी ॥
ललिता लै आई भरि थारी ताती खिचरी कोरी।
तामें घृत डार्‌यो बहुतै करि रुचि बाढ़ी नहिं थोरी ॥
हंसत परस्पर खात खवावत बंधे प्रेम की डोरी।
'हरीचन्द' बलि बलि जोरी पर बरनि सकै सो कोरी ॥86॥

संक्रान्ति के पद, राग यथा रुचि

भागन पाइये जू लालन बैस सन्धि संक्रौन।
तिय तिथि पाइ व्यापि गई तन में चलौ किन राधा रौन॥
बाल तरुनई मिलन पुन्य छन अति थोड़े ही बेर।
ललिता बनि ज्योतिषी बतावत समय न पैहौ फेर॥
कुंज कुटी तीरथ में चलि कै करहु स्वेद अस्नान।
'हरीचन्द' अलि याचक को मिलि देहु दोऊ सुखदान॥87॥

मकर संक्रोन सखी सुखदाई।
मकर कुंडल सों मकर बिलोचनि क्यों न मिलत तू धाई॥
मकरकेतु को भय नहिं मानत घर में रही छिपाई।
वे तुव बिनु भे मकर बिना जल ब्याकुल मुकरन पाई॥
मान मान तजु मान धरम कर कर धरि लै गर लाई।
'हरीचन्द' तजु मकर राधिके रहु त्यौहार मनाई॥88॥

स्फुट, यथा रुचि

मन तुहिं कौन जतन बस कीजै।
काहू सों जिय भरत न तेरो कहां कहां चित दीजै॥
ज्ञान कर्म कुल नेम धर्म सों होत न तोहिं संतोष।
घर घर भटकत डोलत धायो किए अनेक भरोस॥
कामादिक नित काम तिहारे सो नहिं क्याहूं मानै।
सहस सहस नित करत मनोरथ ताहि कौन बिधि जानै॥
कछु पूरो नहि परत पतन नित तौहू चाह बढ़ावैं।
'हरीचन्द' क्यों छांड़ि न सब को पिय पद में चित लावैं॥89॥

बाल लीला, बिलावल

मनिमय आंगन प्यारो खेलै।
किलकि किलकि हुलसत मनहीं मन गहि अंगुरी मुख मेलै॥
बड़भागिनि कीरति सी मैया मोहन लागी डोलै।
कबहुक लै झुनझुना बजावति मीठी बतियन बोलै॥
अष्ठ सिद्ध नव निधि जेहि दासी सो ब्रज सिसु बपुधारी।
जोरी अबिचल सदा विराजी 'हरीचन्द' बलिहारी॥90॥

तथा, आसावरी

मेरो लाड़िलो गोपाल भाई सांवरो सलोना।
जाके हित लाई मैं सुरंग खिलौना॥
छांड़ो हठ बारने हों बार बार जाऊं।
मुख देखि लालन को नैनन सिराऊं॥
बृज को उंजियारो मेरो छोटो सो लाला।
मानै मेरोई कह्यो ऐसो सुभ चाला॥
तुम्हरे हित खोजूं लाल दुलही इक छोटी।
मिलि खेलै लालन के रहै संग जोटी॥
माखन मिसरी हौं दैहौं चाखो मेरे प्यारे।
छांड़ो मचलाई लाल नन्द के दुलारे॥
हौं तो संग लागी फिरौ पलकहू न त्यागों।
पालने झुलाऊं गीत गाऊं अनुरागों॥
हौं तो माता हूं तेरी मेरी बात मानो।
'हरीचन्द' बलिहारी आर नाहिं ठानो॥91॥

रथ यात्रा, सारंग

मेरे मन रथ चढ़ि पिय तुम आवो।
चारु चक्र बुधि बल छल साहस लगन की डोर लगावो॥
चपल तुरंग मनोरथ बहु बिधि निर्भय छत्र छवायो।
'हरीचन्द' गद लागि हमारे प्रेम ध्वजा फहरावो॥92॥

बधाई, यथा रुचि

मंगलमय सब ब्रज बासी लोग।
मंगलमय हरि जिन घर प्रकटे मिले अमंगल भव के सोग॥
मंगल ब्रज बृंदाबन गोकुल मंगल माखन दधि घृत भोग।
'हरीचन्द' बल्लभ पद मंगल गोपी कृष्ण संयोग॥93॥

मान को पद, बिहाग

मेरी री मत कोउ होउ बसीठि।
मैं उनकी वे मेरे रहिहैं सदा दिए मैं पीठि॥
मैं मानि वे मनावहारे मेरी उनकी मिलि दीठि।
'हरीचन्द' मिलिहौं मैं उनसों लै मनुहार न नीठि॥94॥

नित्य, यथा रुचि

मेरेई पौरि रहत ठाढ़ो टरत न टारे नन्दराय जू को ढोटा।
पाग रही भुव ढरकि छबीली यामें बांधो है मंजुल चोटा॥
चितवत हंसि फिरि मों तन हेरत कर लै बेनु बजावत।
धरि अधरन वह ललन छबीलो नाम हमारोइ गावत॥
कर लै कमल फिरावत चहुं दिसि मों तन दृष्टि न टारै।
'हरीचन्द' मन हरि लै हमरो हंसि हंसि पाग संवारे॥95॥

मारग रोकि भयो ठाढ़ो जान
न देत मोहिं पूछत है तू को री।
कौन गांव कह नाम तिहारो
ठाढ़ी रह नेक गोरी॥
कित चलि जात तू बदन दुराए
एरी मति की भोरी।
सांझ भई अब कहां जाएगी
नीकी है यह सांकरी खोरी॥
बहुत जतन करि हारि खालिनी
जान दियो नहिं तेहि घर ओरी।
'हरीचन्द' मिलि बिहरत दोऊ
रैननि नन्दकुंवर श्री वृषभानु किसोरी॥96॥

ग्रीष्म को पद, यथा रुचि

भोज भरे दोउ हौज किनारे
बैठे करत प्रेम की बतियां।
ग्रीष्म ऋतु लखि सखिन बनायो
मंजु कुंज रचि पुहपन पतियां॥
शीतल पवन परसि जल कन मिलि
सीतल भईं सरससी रतियां।
'हरीचन्द' अलसाने दोऊ मुरि मुरि
बिहंसि रहत लगि छतियां॥97॥

राग, यथा रुचि

मोहन लाल के रस सानी।
तन की सुधि न भवन की बुधि कछु डोलत फिरत दिवानी॥

उघरि कहत पिय गुन सब ही से गावत कोकिल बानी।
बिथुरी अलक सरकि रह्यो अंचल चंचल चखन लखानी॥
पिय रस मत्त छकी आसव सी पिय के रूप लुभानी।
पिय के ध्यान मूंदि रही लोचन अन्तरगति प्रकटानी॥
उझकि ललकि चौंकति भुज भरि भरि इमि सुख रहत भुलानी।
निज मन हंसत मौन ह्वै बैठति रोवति कहत कहानी॥
'हरीचन्द' इक रस हरि के रंग दिन निसि जात न जानी।
प्रेम समुद तन नाव डुबोयेहु प्रेम ध्वजा फहरानी॥98॥

विजय दशमी, मारू

मान गढ़ लंक पर बिजय को मानिनी
आज ब्रजराज रघुराज बनि कै चढ़े।
भृकुटि धनु नयन शर बिकट संधानि कै
मुकुट की ढाल करबाल अलकन कढ़े॥
कोकिला कड़कि उघरत कड़खैत ही
बदत बन्दी बिरद भंवर आगे बढ़े।
कोक की कारिका बानरी सैन लै
दास 'हरिचन्द' रति विजय आनन्द मढ़े॥99॥

आशीष, कान्हरा

माई तेरो चिरजीवो गोविन्द।
दिन दिन बढ़ो तेज बल धन जन ज्यों दूइज को चन्द॥
पालो गोकुल गोपी गो सुत गाय गोप सानन्द।
हरो सकल भय निज भक्तन को नासौ सब दुख दुन्द॥
हर्षित देखि गोद में अनुदिन रोहिनि जसुदानन्द।
लगौं बलाय प्रान प्यारे की मम बैननि 'हरीचन्द' ॥100॥

जाड़े में पौढ़िबे को पद, बिहाग

रजाई करत रजाई मांहीं।
राजा कृष्ण राधिका रानी दिए बांह में बांहीं॥
सुखद सेज सोइ राजसिंहासन छत्र ओढ़ना सोहै।
चंवर चिकुर डोलत चहुं दिसिते को वह जो नहिं मोहै॥
बजत निसान जीति जग कंकन किंकिन को बहु भांती।
झरत बादला मोती दीनी सोइ दीनन मनि पांती॥

बंधुआं मदनहिं बांधि मंगायो लै पाइन तर पेल्यो।
कियो खिराज सकल सुख सम्पति आनन्द सिंधु सकेल्यो ॥
तब बन्दीजन बेद श्वास कढ़ि पढ़्यो बिरद अकुलाई।
कियो स्वेद अभिषेक रीझि कच खसित कुसुम झर लाई ॥
राजतिलक सिर दियो महावर अधर सुधा नजरानो।
तिहि लहि सर्वस दियो सरोपा साथ नील पट बानो ॥
नाची बेसर बारिमुखी तहं परमानन्द रह्यो छाई।
'हरीचन्द' अवसर तब लखि कै प्रेम जगीर दिखाई ॥101॥

रास, यथा रुचि

राधिकानाथ के साथ ब्रज बाल सब
नवल जमुना पुलिन रास राच्यो आज।
लोक संगीत गत शब्द उघटत बिबिध
एक गावत राग सुरन सांच्यो आज ॥
तत्तथेई तत्तथेई प्रकट धुनि होत तहं
बजत किंकिनि चुरी आनन्द माच्यो आज।
थकित सुर गगन 'हरीचन्द' निज तियन सह
देखि जब मुदित नन्दनन्दन नाच्यो आज ॥102॥

नित्य, बधाई

राधिका मंगल को नव बेलि।
जा दिन प्रकटी बरसाने में सब सुख धरेउ सकेलि ॥
नित नव आनन्द नित नव मंगल नित नव नौतन केलि।
'हरीचन्द' बिहरति प्रीतम सों कंठ भुजा उर मेलि ॥103॥

बिहार, बिहाग

रसिक गिरिधर संग सेज सोई भली।
रीझि पिय देत सुखदान कीरति लली ॥
उझकि झुक चूमि मुख लूटि रस अधर सुख
मेटि जिय दुसह दुःख करत नव रंग रली।
भुजन सों भुज बंधे अंग प्रति अंग सधे
कसमसक कुम्हिलात सेज कुसुमन काली ॥
अंग उमगे रंग पिया प्यारी संग प्रेम रति
जंग पद मदन मद दलमली।

सखी 'हरीचन्द' रही रीझि तन मन वारि
करत गुन गान रसमत्त चहुं दिसि अली ॥104॥

रसबस में निसि जात न जानी।
कहत सुनत कछु हंसत हंसावत दृग जोरत छन सरिस बिहानी ॥
आलस बिबस जम्हात परस्पर कहि बलिहार मधुर सुर बानी।
रूह लालची दृग नहिं झपकत जागत ही निसि सकल सिरानी ॥
अरुझे प्रेम फंद नहिं सुरझत मुख चूमत हरि राधा रानी।
'हरीचन्द' सखि गन सोइ गावत जुगल प्रेम की अकथ कहानी ॥105॥

नित्य

लालन पौढ़े हौं बलि जाऊं।
चापैं चरन कहानी भाषौं करि मनुहार सोवाऊं ॥
सीत भीत परदा बहु डारौं नवल अंगीठी लाऊं।
सरस रंग परिमल कोमल अति चारु रजाई उढ़ाऊं ॥
मधुरे गुन गाऊं प्यारे को करि मनुहार मनाऊं।
'हरीचन्द' पौढ़ो प्रिय लालन हौ तेरे बलि जाऊं ॥106॥

स्फुट

लाल यह तौ तुरकन की चाल।
दुःख देनो गल रेति रेति कै करनो ताहि हलाल ॥
जो बध करना जो होइ बधो तौ क्यों खेलत यह ख्याल।
एक हाथ में काम बनेगो छूटैंगे भव जाल ॥
कै मारो कै तारो मोहन कै मोहि करौ निहाल।
'हरीचन्द' मति यों तरसावो बहुत भई नन्दलाल ॥107॥

रथ सारंग

लाल नहिं नेकौ रथहि चलावैं।
गली सांकरी अटकि रह्यौ रथ नहिं कहुं इत उत जावै ॥
उत वृषभानु कुमारि अटा पै ठाढ़ी दृष्टि न टारै।
नन्दलाल रसिकबर सुन्दर इकटक उतहि निहारै ॥
ये हंसि हंसि के कमल फिरावत वै दोउ नैन नचावैं।
ये पीताम्बर लै जु उड़ावै वे मधुरे सुर गावैं ॥

रीझे रसिक परस्पर दोऊ 'हरीचन्द' मन माहीं।
ये इत अपनो रथ न चलावत वे न अटा सों जाहीं ॥108॥

स्फुट, यथा रुचि

लाल लाल कर पद लाल अधर रस
लाल लाल नयन तासों सांचे लाल भए हो।
लाल माल बिनु गुन लाल पीक छाप तन
लाल लाल ही महावर सिर पैदए हो॥
पीरो पट छोरि लाल पट भलो ओढ़ि आये
अनुराग प्रगट दिखावत नए हो।
'हरीचन्द' अरुन सिखा धुनि सुनि चौंकि
अरुन उदय से आज अरुन भेष लये हो ॥109॥

राग, यथा रुचि

लखि सखि आजु राधिका रास।
जमुना पुलिन सरल कोमल कल जहं मल्लिका विकास ॥
उदित चन्द्र पूरन नभ मंडल पूरन ब्रज तिय आस।
मन्द सुरन पिय पास बने सजि निकर चिकुर भल पास ॥
प्रचलित पवन रवन हित महकत मह मह दवन सुबास।
दवन मदन मद मन्द गवन सुख भवन जहां हरि बास ॥
बजत मृदंग उपंग चंग मिलि भजनन जति तति जास।
बढ़्यो रंग रति रंग दंग लखि अंग उमंग प्रकास ॥
मुरली रली भली बाजत मिलि बीन लीन सुर खास।
ताल देत उत्ताल बजावत ताल ताल करि हास ॥
उघटत श्री राधे राधे मधुर धुनि बन सब आस।
हरि राधा की बचन रचन लखि बलिहारी हरि दास ॥110॥

स्फुट, देश

बेग आओ प्यारे बनवारी हमारी ओर।
दीन बचन सुनतै उठि धावो नेकु न करहु अबारी ॥
कृपा सिन्धु छांड़ौ निठुराई अपनो बिरद संभारी।
थानै जग दीनदयाल कहै क्यों हमरी सुरत बिसारी ॥
प्रान दान दीजै मोहिं प्यारा हौं छू दासी प्यारी।
क्यौं नहि दीन बचन सुनो लालन कौन चूक छे म्हारी ॥

तलफै प्रान रहैं नहिं तन भा बिरह व्यथा बढ़ी भारी।
'हरीचन्द' गहि बांह उबारौ तुम तो चतुर बिहारी ॥111॥

बिहार

वे देखो पौढ़े ऊंचे महल दोऊ
झलकत रूप झरोखन आई।
हंसनि मुरनि बतरानि परस्पर
कछुक दूर तें परत लखाई॥
फैली अंग प्रभा दीपक में जाल
रंध्र सों घिरि घिरि आई।
'हरीचन्द' कंकन किंकिनि रव निसि के
उछीर भरो मधुर कछु सुनाई ॥112॥

रथ यात्रा

देखो सखि सेन ध्वजा फहरात।
ज्यों ज्यों रथ नियरे आवत है त्यों त्यों मन अकुलात।
खंजन भे भये नैन सखी के चक्रित इत उत डोलैं।
आवत प्राननाथ रथ चढ़ि के सजनी यह मुख बोलैं॥
जहं लगि दृष्टि जात प्यारी की यह छवि होत रसालैं।
मानहुं आदर सों पिय के हित कमल पांवड़े डालैं॥
अति अनुराग संग बैठन को प्यारी मन की जानी।
'हरीचन्द' लै रथ बैठाये तिया अतिहि सुख मानी ॥113॥

पालन

वारी वारी हौं तेरे मुख पै वारी मैं तेरे लटकन पै वारी।
पालना झूलो हो दठ छांड़ो बलि बलि गइ महतारी॥
छोटी सी दुलहिनि तोहिं व्याहौं अपने बाबा की दुलारी।
तुम झूलो हौं हरखि झुलावों 'हरीचन्द' बलिहारी ॥114॥

वारी मेरे लालन झूलो पलना।
हौं बलि जाउं बदन की मोहन मानहुं बात हमारी॥
माखन लेहु ललन वृज जीवन वारनने गै महतारी।
अंचरा छोरहु तुमहिं झुलाऊं 'हरीचन्द' बलिहारी ॥115॥

स्फुट, यथा रुचि

सखी मेरे नयना भये चकोर।
अनुदिन निरखत श्याम चन्द्रमा सुन्दर नन्द किशोर॥
तनिक बियोग भये उर बाढ़त बहु बिधि नयन मरोर।
होत न पल की ओट छिनकहूं रहत सदा दृग जोर॥
कोउ न इन्हैं जुड़ावनहारो अरुझे रूप झकोर।
'हरीचन्द' नित छके प्रेम रस जानत सांझ न भोर॥116॥

गरमी को पद

सखी मोहिं ग्रीषम अति सुखदाई।
जामें शोभा श्याम अंग की प्रति छन परत लखाई॥
बिनु अन्तरपट मिलत पियारी अंग अंग सो लाई।
'हरीचन्द' लखि कै सुख पावत गावत केलि बधाई॥117॥

फूल सिंगार

सखियन आज नवल दुलहिन को फूल सिंगार बनायो हो।
फूलन के आभरन मनोहर रचि रचि कै पहिरायो हो॥
फूलन बेनी गुही मनोहर फूलन मौर सुहायो हो।
फूलन के कंगना कर बांधे फूलनि मंडप छायो हो॥
फूलनि चोली फूलनि सारी फूलनि लहंगा भायो हो।
दुलहिन दुलहा गांठि जोरि कै एक पास बैठायो हो॥
फूली फूली सब सखियन मिलि फूल्यो मंगल गायो हो।
फूली जोरि देखि नयन सों 'हरीचन्द' सुख पायो हो॥118॥

मकर संक्रान्ति टोड़ी

सुखद अति खिचरी को त्योहार।
मिलि बैठे दोड कुंज सखी री नीके नयन निहार॥
पहिरि छींट बागो अति सुन्दर ओढ़े सुखद रजाई।
सिसिर प्रवेश दिखावत गावत तान गान सुखदाई॥
सखी सबै मिलि नेम पुजावत करत जुगल की सेवा।
ताती खिचरी भोग लगावत भेंट करत बहू मेवा॥
करत दान तिल गौर श्याम दोउ हंसि हंसि पीतम प्यारी।
'हरीचन्द' निज रीझि प्रान धन डारत छिन छिन वारी॥119॥

श्री गिरिधरजी की बधाई

सदा तुम मायावाद निवारेउ।
जब जब प्रवल भयो मिथ्या मत तब तब प्रकटि बिदारेउ ॥
प्रथमहि होय विष्णु स्वामी प्रभु यह मारग बिस्तारेउ।
फिरि श्री बल्लभ ह्वै अगिनि काठ कटु माया मत छिन जारेउ ॥
अब के कासी लखि असुरासी उघरन बिचारेउ।
कृष्णावति ते श्री गोपाल गृह जदु कुल द्विज अवतारेउ ॥
नाम जगत गुरु सुनत श्रवन पुट पावन अमृत पारेउ।
कियो ग्रन्थ बहु घर थिर थाप्यो माया-वाद बिदारेउ ॥
श्री गिरिधर गिरिधर ह्वै प्रकटे पुष्प पन्थ गिरि धारेउ।
प्रबल प्रवाह इन्द्र धारा सों निज ब्रज लोग उबारेउ ॥
काशी में गोकुल करि दीन्हो श्रुति रहस्य उच्चारेउ।
'हरीचन्द' को जानि आपनो करुना करि निसतारेउ ॥120॥

अशिष, यथा रुचि

सदा ब्रज सुबस बसो बरसानो।
जहं प्रगटी रस की निधि राधे बाजत प्रगट निसानो ॥
जुग जुग अबिचल राज रजो दोउ रावलि अरु महरानो।
'हरीचन्द' के सीस रहौ नित नील पीत को बानो ॥121॥

विहार बिहाग

सुन्दर सेजन बैठे प्रीमत प्यारी।
झिलमिलात दीप ज्योति रंग भरे
संग दोऊ सोवत ऊंची अटारी ॥
रिझवत हिलि मिलि करि रस बतियां
फैली बदन उंजियारी।
दीप सों परस्पर मुख अवलोकत
'हरीचन्द' बलिहारी ॥122॥

दीनता

श्री वल्लभ की सरि करै कौन।
प्रगटे प्रभु गुविंद मन बाहक भक्त कारनै जौन ॥
परम पतित तारन करुनामय रसनिधि बुधता भौन।
'हरीचन्द' जो हमहिं भजत नहिं महा अभागे तौन ॥123॥

श्री बल्लभ प्रभु मेरे सरबस।
पचौ बृथा करि जोग जज्ञ कोउ
हम को तो इक इहै परम रस॥
हमरे मात पिता पति बन्धू
हरि गुरु मित्र धरम धन कुल जस।
'हरीचन्द' एकहि श्री बल्लभ
तजि सब ध्यान भए इनके बस॥124॥

श्री बड़े गिरिधर जी को पद

श्री बिट्ठल सुत गुननिधान श्री रुक्मिनि जीवन प्रान
बन्दे श्री गिरधर प्रभु पटगुन सम्पन्न धीर।
अति ही रिझवार रसिक सकल कलागुन प्रवीन
बन्धुन सिर छत्रछांह मेटत जन पीर॥
सेवा रस परस पात्र पंडित जन मंडित कर
खंडित कृत मायामति छंडित भव पीर।
श्री रानी प्राननाथ गावत श्रुति बिसद गाथ
'हरीचन्द' हाथ माथ धरत बलवीर॥125॥

श्रीरघुनाथजी को पद

श्री बिट्ठल नन्दन जग बन्दन जय जय श्री रघुनाथ।
जानकि रमन समन जन अध सन पितु पद रजगुन गाथ॥
सेवा रोचक मोचक भव रुज कृ बल्लभी सनाथ।
'हरीचन्द' अनुभव बियोग कृत सदा सहायक साथ॥126॥

श्रीगोपीनाथजी को पद

श्री बल्लभ सुत प्रथम प्रगट नीला रसभाव
गुप्त जय जय श्री गोपीनाथ भक्तन सुखदाई।
गावत गुन बेद चार तऊ नहीं पावैं पार
महिमा कोउ कहि न सकत गोप वंश राई॥
पुष्टि पथ करन काज प्रगटे हैं भूमि आज
गावत सब ब्रज जन मिलि आनन्द बधाई।
'हरीचन्द' जस गावै बहुत बधाई पावै
देखत त्रैलोक सब बलि बलि जाई॥127॥

श्रीबल्लभ गृह महामंगल भयो प्रकट भए श्री गोपीनाथ।
मर्यादा श्रुति रूप रमन हित संकर्षन जन कियो सनाथ॥
अक्षर ब्रह्म रूप सुभ सोहत अनुज धाम जगधाम स्वरूप।
जोग ज्ञान कर्म्मादिक मारग थापन हित प्रगटे द्विज भूप॥
संवत पन्द्रह सौ सुभ सरसठि आश्विन कृष्ण द्वादशी जानि।
श्री महालक्ष्मी जी के उदर तें प्रगटे हैं सब सुख की खानि॥
पुष्टि प्रवेस हेतु अधिकारी करन कियो लीला बिस्तार।
कहि जय जय बल्लभ सुत दोऊ 'हरीचन्द' जन भयो बलिहार॥128॥

श्री घनश्यामजी को पद

श्री बिट्ठल घर अतिही उछाह।
रानी पद्मावति सुत जायो
पूरी अपने जन की चाह।
आश्विन बदी तेरसि रविबासर
बाढ़्यो गोकुल प्रेम प्रवाह।
'हरीचन्द' बैराग प्रकट गुन
जय जय जय श्री कृष्णावति नाह॥129॥

श्री गोविन्द राय जी को पद

श्री गुबिन्द राय जयति सुन्दर सुखधाम।
देवि देव मेटि सकल कृष्ण-रूप थापन नित
सुन्दर बरन निज भक्तन अभिराम॥
सुन्दर मर्याद रूप लोक रीति स्त्रवस भूप
श्रीभागवत थापन सुखमय सुआद जाम।
'हरीचन्द' बिट्ठलसुत भक्तिभाव भूरि संयुत
राज भाव बिनसे हरि सुजन पूरन काम॥130॥

श्री बालकृष्ण जी को पद

श्री रुक्मिनि नन्दन, जय जग बन्दन,
बाल कृष्ण सुख धाम।
सुन्दर रूप नयन रतनारे
भक्तन पूरन काम॥
रस बात्सल्य करन अनुभव नित
बिरह बिधूनन हरि मुख नाम।

'हरीचन्द' बिट्ठल सुखदायक प्रिय
उनहारि रूप अभिराम॥131॥

श्री गोकुलनाथ जी को पद

श्री बल्लभ निज मत राखि लियो।
जीति सभाबादी कठोर बहु माला तिलक दियो॥
अद्भुत अचरज बहुत दिखाये खल नृप निरखि भियो।
'हरीचन्द' मर्याद राखि निज जग जस प्रगट कियो॥132॥

श्री यदुनाथ जी को पद

श्री जदुपति जय जय महराज।
बिरह गुप्त अनुभवत प्रगटि जग महं बिराग को साज॥
निवसत रह लघु कहत सुनत लहु छांड़ि जगत के काज।
'हरीचन्द' परमारथ पूरन गोविन्द भक्ति जहाज॥133॥

सांझी को पद

आजु दोउ खेलत सांझी सांझ।
नन्दकिशोर राधा गोरी जोरी सखियन मांझ॥
कुसुम चुनन में रुनझुन बाजत कर चूरी पग झांझ।
'हरीचन्द' बिधि गरब गरूरी भई रूप लखि बांझ॥134॥

महारानी तिहारो घर सुफल फलो।
सुरी कीरति तैं कन्या जनि सब ब्रज जन को कियो भलो॥
कोउ गावत कोउ हंसत मोद भरि कोउ अति आनन्द रलो।
देखि चन्द्र मुख कुंवरि लली को वारि फेरि तन मन सकलो॥
आनन्द मगन सबै ब्रज बासी सब जिय को दुःख पगनि दलो।
'हरीचन्द' जुग जुग चिरजीवो जुगल कहानी जुगुल चलो॥35॥

दीनता, यथा रुचि

हमरे निर्धन की धन राधा।
साधन कोटि छोड़ि इनहीं को चरन कमल अवराधा॥
इनके बल हम गिनत न काहू करत न जिय कोउ साधा।
'हरीचन्द' इन नख सिख मेरी हरी तिमिर भव बाधा॥136॥

श्री महाप्रभु जी की बधाई

आजु ब्रज सांची बजत बधाई।
रति पथ प्रगट करन को द्विज बपु वल्लभ प्रगटे आई ॥
दैवीजन हित कारन भूतल लीला फेरि दिखाई।
'हरीचन्द' भूले लखि तिज जन लियो बांह गहि धाई ॥137॥

आजु प्रेम पथ प्रगट भयो भुव जनमे श्रीवल्लभ पूरन काम।
कठिन काल कलि देखि दया करि आपुहि चलि आयो द्विजधा ॥
बहे जात अपने जन लखि कै धर्‍यो बांह गहि कहि हरि नाम।
'हरीचन्द' रसमय बपु सुन्दर एकै राधा सुन्दर श्याम ॥138॥

निज पथप्रगट करनकों द्विज ह्वै आपुहि प्रगटभये हरि आज।
माधवकृष्ण एकादशि गुरु दिन लक्ष्मण भट गृह पूरन काज ॥
दैवीजन मन अति हुलसाने फूल्यो ब्रज कोसकल समाज।
'हरीचन्द' मिलि नाचत गावत मिलेभक्त जन तजिजग लाज ॥139॥

आजु ब्रज घर घर बजत बधाई।
द्विजवपु लै नन्दनन्दन प्रगटे लक्ष्मण भट घर आई ॥
फेर वहै लीला सोई रस निज जन हेत दिखाई।
'हरीचन्द' से अधम जानि निज तारे भुज गहि धाई ॥140॥

मान को पद, यथा रुचि

नेक निहारु नागरी हौं बलि।
इती रुखाई प्रान पिया पै मान न करु सिख मान री उठि चलि ॥
फूलत लय बिरचत उत प्यारो बिरह हुतासन जात चलो गलि।
तू इत बैठी भौंह तनेनत नहिं सोहात मोहिं यह रूखो कलि ॥
खसित निसानायक पश्चिम दिसि आधी सों बढ़ि रैन चली ढलि।
अरुनसिखा धुनि सुनियत कहुं कहुं सीरी पवन चली सुगन्ध रलि ॥
चलि किन कुंज भवन कुजभामिनि अपनी सौतिन को छलबल छलि।
प्रथम मान पुनि सहजहि मिलिबो सुनि बैरिनि रहि जैहैं जलि जलि ॥
कसि कंचुकि नयनन दै काजर नूपुर छोड़ि अतर अंगन मलि।
बिन बिलम्ब उठि मिलु प्यारे सों बिरह-दवागि मिले श्रम जल दलि ॥

भाग भरी अनुराग भरी सखि पीतम सरस सोहाग फलन फलि।
'हरीचन्द' सखि साथ गमन छबि नयनन तें नहिं जाइ कबहुं टलि ॥141॥

[सन 1880 ई. में हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, मोहन चन्द्रिका में कुछ अंश प्रकाशित]

वर्षा विनोद

सन 1880 ई.

वर्षा विनोद

कजली

प्यारी झलन पधारो झुकि आए बदरा।
ओढ़ौ सुरुख चूनरि तापै श्याम चदरा॥
देखो बिजुरी चमक्के बरसै अदरा।
'हरीचन्द' तुम विन पिय अति कदरा॥1॥

अगगग अगगग अगगग घन गरजै
सुनि सुनि मोरा जिय लरजै।
जुगनूं चमकै बादल रमकै
बिजुरी दमकै झमकै तरजै॥
ऐसी समय चले परदेसवां
पिय नहिं मानत मोरी अरजै।
ऐसन नहिं कोइ पटुका गहि कै
पिय 'हरिचन्दहि' जो बरजै॥2॥

घिर घिर आए बादर छाए रिमझिम जल बरसै।
चम चम चपला चमकै घन झमकै झुकि झुकि बिरछन परसै॥
सूनी सेज परी मैं ब्याकुल पिय की सूरत नहिं दरसै।
बिनु 'हरिचन्द' पियरवा सावन में हाय मोरा जियरा तरसै॥3॥

मन मोहना हो झूलैं झमकि हिंडोर।
एक तो सावन ए दूजे घन उनए
तीजे फूल नए छए फूले चहुं ओर॥
चलु लाज तजु री देखु चमकै बिजुरी
बग पांति जुरी मोरा करि रहे सोर।

सोभा कहौ कस री मैं तो देलतहारी
भइ बलिहारी 'हरीचन्द' तृन तोर ॥4॥

दोउ मिलि झूलै फूलै हो कुंज हिंडोरे री सखी।
बृन्दाबन चहुं ओर सों हो फूल्यौ शोभा देत हो।
जमुना नीर तीर पर सुन्दर झलमल लहरा लेत हो ॥

दोहा

बिजुरी चमकै जोर से नभ छाए घनघोर हो।
मोर सोर चहुं ओर करैं दादुर बन कीनो रोर हो॥
सखी झुलावैं प्रेम सों हो पहिरे रंग रंग चीर हो।
झूलैं प्यारी राधिका संग पीतम श्याम सरीर हो॥
सोभा नहिं कहि जात हो तहं बढ़्यो सखी आनन्द हो।
लखि गलबाहीं दोऊ को दीने बलिहारी 'हरीचन्द' हो॥
दोउ मिलि झूलैं फूलैं हो कुंज हिंडोरे री सखी ॥5॥

लावनी

बीत चली सब रात न आए अब तक दिल जानी।
खड़ी अकेली राह देखती बरस रहा पानी॥
अंधेरी छाय रही भारी।
सूझत कहूं न पन्थ सोच करै मन मन में नारी॥
न कोई समझावनवारी।
चौंकि चौंकि के उझकि झरोखा झांक रही प्यारी॥
बिरह से व्याकुल अकुलानी।
खड़ी अकेली राह देखती बरस रहा पानी॥

सूझै पन्थ न कहीं हाथ से हाथ न दिखलाता।
एक रंग धरती अकास का कहा नहीं जाता॥
किसी का बोल नहीं सुनाता।
बूंद बजै टपटप मारग कोई नहिं जाता आता।
सोए घर घर सब पट तानी॥ खड़ी अकेली. ॥

सन सन करके रात खनकती झींगुर झनकारैं।
कभी कभी दादुर रट कर जिय व्याकुल कर डारैं॥
सांप खंडहर पर ठनकारैं।
गिरैं करारे टूट टूट के नदी छलक मारैं॥

पिया बिन सब ही दुखदानी॥ खड़ी अकेली. ॥
ठंडी पवन झकोरे आंचल उड़ उड़ फहरावै।
बिरहिन इत सों उत डोलै कोइ नाहीं जो समुझावै।
पिय बिन को जो गर लावै।
'हरीचन्द' बिनु बरसा में को कसक मिटा जावै ॥
कहां बिलमैं, को मनमानी ॥खड़ी अकेली. ॥6॥

ग़ज़ल

न आया वो दिलवर औ आई घटा।
तो हसरत की बस दिल पै छाई घटा ॥
चढ़ा शाम को बाम पर गर वो माह।
शफ़क का नया रंग लाई घटा ॥
तहे जुल्फ तेरी ये बिजली नहीं।
चमकती है बिजली है छाई घटा ॥
बहाने से बिजली के छेड़ा मुझे।
नया राग परदे में लाई घटा ॥
मुझे तेरी जुल्फों का ध्यान आ गया।
जो देखी सियह सिर पै छाई घटा ॥
जमीं है 'हरीचन्द' गजलें पढ़ो।
'रसा' देखो कैसी है छाई घटा ॥7॥

मलार

हरि बिनु बरसत आयो पानी।
चपला चमकि चमकि डरवावत मोहिं अकेली जानी ॥
रात अंधेरी हाथ न सूझे मैं बिरहिनी बिलखानी।
'हरीचन्द' पिय बिनु बरसा मैं हाथ मींजि पछतानी ॥8॥

ऊधो हरि जू सों कहियो जाइ हो जाइ।
बिनु तुव प्रान परे संकट मैं घट सों निकसत आइ हो आइ ॥
बढ़त बिरह दुख छिन छिन मोहन रोअत पछरा खाइ हो खाइ।
'हरीचन्द' व्याकुल ब्रज देखत बेगहि आओ धाइ हो धाइ ॥9॥

पिय बिनु सूनी सेजिया सांपिन ससी मोरा जियरा डसि डसि लेत।
रैन डरारी कारी भारी व्याकुल पिय बिनु चेत ॥

तड़पन करवट लेत अकेली धीर कोऊ नहिं देत।
पिय 'हरीचन्द' बिना को गरवां लगि कै हाय निबाहै हेत ॥10॥

ठुमरी हिंडोले की

लचकि मचकि दोउ झूलि रहे जमुना तट सुरंग हिंडोरे में।
ब्रजनारी सब आईं मिलि झूलन कों पहिरे चुनरी रंग बोरे में॥
बरसत घन बूंद परैं छतियां बहै सीतल पवन झकोरे में।
'हरीचन्द' कहा छबि बरनि सकै सुख बाढ्यौ प्रेम हलोरे में ॥11॥

खेमटा

कहनवा मानो हो दिल जानी।
निसि अंधियारी कारी बिजुरी चमकै रुम झुम बरसत पानी॥
हाथ जोर ठाढ़ी अरज करत हौं सुनत नहीं मेरी बानी।
तुम ही अनोखे बिदेस जवैया 'हरीचन्द' सैलानी ॥12॥

न जाय मो सों ऐसो झोंका सहीलो न जाय।
झुलाओ धीरे डर लागै भारी बलिहारी हो
बिहारी मो सों ऐसो झोंका सहीलो न जाय।
देखो कर धर मेरी छाती धर धर करै
पग दोउ रहे थहराय हाय।
'हरीचन्द' निपट मैं तो डरि गई प्यारे
मोहिं लेहु झट गरवां लगाया ॥न जाय. ॥13॥

सोरठ

मेरे नैनों का तारा है, मेरा गोबिन्द प्यारा है।
वो सूरत उसकी भोली सी वो सिर पगिया सठोली सी,
वो बोली मैं उठोली सी बोलि दृग बान मारा है॥
वो घूंघरवालियां अलकै व झोंकेवालियां पलकैं,
मेरे दिल बीच हलकैं छुटा घर बार सारा है।
दरस सुख रैन दिन लूटै न छिन भर तार यह टूटै,
लगी अब तो नहीं छूटै प्रान 'हरीचन्द' वारा है।
मेरे नैनों का तारा है, मेरा गोबिन्द प्यारा है ॥14॥

मेरी हरि जी सों कहियो बात हो बात।
तुम बिन ब्रज सूनो मेरे प्यारे अब देख्यौ नहिं जात हो जात॥
सूखी लता पेड़ मुरझाने गउ भई दुबरे गात हो गात।
जमुना जरित बृन्दाबन उजरयौ पीरे भए सब पात हो पात॥
जसुदा नन्द बिकल रोअत है कहि कहि के हा तात हो तात।
सो दुख देख्यौ जात न नैनन देखि दुखी तुव मात हो मात॥
ब्रज नारिन की दसा कहा कहौं रोअत बातत रात हो रात।
'हरीचन्द' मिलि जाओ पियारे करौ न हम सो घात हो घात॥15॥

एतो हरि जी सों कहियो रोय हो रोय।
तुम बिन रहत सदा ब्रज सुन्दरि
अंसुअन सों पट घोय हो धोय॥
निस-दिन बिरह सतावत ब्याकुल
रही हैं सब सुख खोय हो खोय।
'हरीचन्द' अब सहि न सकत दुख
होनी होय सो होय हो होय॥16॥

संस्कृत की कजली

हरि हरि हरिरिह विहरत कुंजे मन्मथ मोहन बनमाली।
श्री राधाय समेतो शिखिशेखर शोभाशाली॥
गोपीजन बिधुबदन बनज बन मोहन मत्ताली।
गायति निज दासे 'हरीचन्द' गल जालक माया जाली॥17॥

हरि हरि धीर समीरे बिहरति राधा कालिन्दी तीरे।
कूजति कल कलरव केकावलि कारंडव कीरे॥
वर्षति चपला चारु चमत्कृत सघन सुघन नीरे।
गायति निज पद पद्मरेणु रत कविवर 'हरीचन्द' धीरे॥18॥

मलार

मेरे गल सों लग जाओ प्यारे घिरि आई बदरिया घोर।
बड़ी बड़ी बूंदन बरसन लागीं बोलत दादुर मोर॥
बिजुरी चमक देखि जिय डरपै पवन चलत झकझोर।
'हरीचन्द' पिय कंठ लगाओ राखो अपनी कोर॥19॥

आज घन अगगग गरजै हो सुनि सुनि कै जिय लरजै।
बड़ी बड़ी बूंद घिरि घिरि बरसै बिजुरी तरजै॥
ऐसी समय पिय कंठ न लागत मानत नहिं मेरी अरजै।
'हरीचन्द' पिय जात बिदेसवां कोइ नहीं बरजै॥20॥

सावन आयो मन भावन पिय बिनु रह्यो न जाय।
घन की गरज सुन लरजौं मिलन को जिय ललचाय॥
खबर न आई पिय प्यारे की करौ मैं कौन उपाय।
'हरीचन्द' पिया को जो पाऊं लेहुं मैं गरवां लाय॥21॥

ऊधो जी मिलाओ पियारे को हमहिं सुनाओ न जोग।
हम नारी जोग का जानैं हो हमरे लेखे सो रोग॥
बरसा आई बन हरे भए घर फिरे पन्थी लोग।
'हरीचन्द' लाओ मेरे श्यामहि मिटै बिरह दुख सोग॥22॥

ऐसे सावन में सांवलिया मोरा जोबन लूटे जाय।
नैन बान घायल करि दीनों जुलुफन बीच फंसाय॥
मुख मोरा चूमि करै मन मानी गरवा लेत लगाय।
सरबस रस लेके 'हरीचन्द' बेदरदी खड़ा खड़ा मुसकाय॥23॥

मलार की ठुमरी

कुंजन में मोहिं पकरी री।
ए माई री ढीठ मोहन पिया गरे लागे
जो जो जिय आई सोइ करी री॥
मैं निकसी दधि बेंचन कारन
औचकि आइ गही गिरधारन बरजि रही री।
मेरो बरज्यो न मान्यो
बरजोरी कर बहियां धरो री॥
'हरीचन्द' अति लंगर कन्हाई,
करत फिरत ब्रज में मन भाई,
ना जानो कैसे ऐसे ढीठ लंगर के धोखे फन्द परी री॥24॥

तरजीह बन्द

चमक से बर्क के उस बर्क वश की याद आई है।
घुटा है दम घटी है जां घटा जब से ये छाई है॥

कौन सुने कासों कहों सुरति बिसारी नाह।
बदाबदी जिय लेत हैं ए बदरा बदराह॥
बहुत इन जालिमों ने आह अब आफत उठाई है।
अहो पथिक कहियो इती गिरधारी सों टेर।
दृग झर लाई राधिका अब बूड़त ब्रज फेर॥
बचाओ जल्द इस सैलाब से प्यारे दुहाई है॥
बिहरत बीतत स्याम संग जो पावस की रात।
सो अब बीतत दुःख करत रोअत पछरा खात॥
कहां तो वह करम था अब कहां इतनी रुखाई है।
बिरह जरी लखि जोगनिनि कहै न उहि कइ बार।
अरी आव भजि भीतरैं बरसत आजु अंगार॥
नहीं जुगनूं हैं यह बस आग पानी ने लगाई है॥
लाल तिहारे बिरह की लागी अगिन अपार।
सरसैं बरसैं नीरहूं मिटै न झर झंझार॥
बुझाने से है बढ़ती आग यह कैसी लगाई है।
बन बागन पिक बटपरा तकि बिरहिन मन मैन।
कुहौ कुहो कहि कहि उठैं करि करि राते नैन॥
गजब आवाज ने इन जालिमों के जान खाई है॥
पावस घन अंधियार मैं रह्यौ भेद नहिं आन।
राति द्योस जान्यो परै लखि चकई चकवान॥
नहीं बरसात है यह इक क़यामत सिर पर आई है।
पावक झर तें मेंह झर दावक दुसह बिसेखि;
दहै देह वाके परस याहि दृगनहीं देखि॥
लगी है जिनकी लौ तुमसे बस उनकी मौत आई है॥
धुरवा होहिं न अलि यहै धुआं धरनि चहुं कोद।
जारत आवत जगत कों पावस प्रथम पयोद॥
नहीं बिजली है यह इक आग बादल ने लगाई है।
वेई चिरजीवी अमर निधरक फिरौ कहाइ।
छिन बिछुरे जिन के न इहि पावस आयु सिराइ॥
यहां तो जां-बलव हैं जबसे सावन की चढ़ाई है।
बामा भामा कामिनी कहि बोलौ प्रानेस।
प्यारी कहत लजात नहिं पावस चलत बिदेस॥
भला शरमाओ कुछ तो जी में यह कैसी ढिठाई है।
रटत रटत रसना लटी तृषा सूखिगे अंग।
तुलसी चाकत प्रेम को नित नूतन रुचि रंग॥

दिलों पर खाक उड़ती है मगर मुंह पर सफाई है ॥
बरखि परुख पाहन पयद पंख करो टुक टूक।
तुलसी परो न चाहिए चतुर चातकहिं चूक ॥
जबां पर तेरे आशिक के भला कब आह आई है।
दुखित धरनि लखि बरसि जल घनउ पसीजे आय।
द्रवत न तुम घनस्याम क्यों नाम दयानिधि पाय ॥
खुदा ने बुत तेरी पत्थर की बस छाती बनाई है ॥
जौ घन बरसै समय सिर जो भरि जनम उदास।
तुलसी जाचक चातकहि तऊ तिहारी आस ॥
सिवा खंजर यहां कब प्यास पानी से बुझाई है।
चातक तुलसी के मते स्वातिहु पियै न पानि।
प्रेम तृषा बाढ़त भली घटे घटैगी कानि ॥
शहीदों ने तेरे बस जान प्यासे ही गंवाई है ॥
ऐसो पावस पाइहू दूर बसे ब्रजराइ।
आइ धाइ हरीचन्द' क्यौ लेहु न कण्ठ लगाइ ॥
'रसा' मंजूर मुझको तेरे कदमों तक रसाई है ॥25॥

राग मलार

वृन्दाबन करो दोउ सुख राज।
फिरौ निसंक दिए गल बहियां लीने सखी समाज ॥
बिहरो कुंज कुंज तरु तरु तर पुलिन पुलिन तजि लाज।
प्रति छन नए सिंगार बनाओ सजौ सकल सुख साज ॥
छिन छिन बढ़ौ प्रेम प्रेमिन को पुरवहु सगरो काज।
'हरीचन्द' की रानी (श्री) राधे गोपराज महराज ॥26॥

भीजते सांवरे संग गोरी।
अरस परस बातन रस भूली बांह बांह मैं जोरी ॥
कदम तरे ठाढ़े दोउ ओढ़े एकहि अरुन पिछोरी।
चुअत रंग अंग बसन लपटि रहे भींजि भींजि दुहुं ओरी ॥
जल कन स्रवत सगबगी अलकन करत जुगुल चित चोरी।
गावत हंसत रिझावत हिलि मिलि पुनि पुनि भरत अंकोरी ॥
बरसत घेरि घन उमंगे चपला चमक मचोरी।
बोलत मोर कोकिला तरु पर पवन चलत झकझोरी ॥
अति रस रहस बढ़्यो बृन्दाबन हरित भूमि तरु खोरी।
'हरीचन्द' छवि टरत न दृग तें निरखि भींजती जोरी ॥27॥

वरषा में कोउ मान करत है
तू कित होत सखी री अयानी।
यह रितु पीतम गर लागन की
तू रूसत कित होइ सयानी॥
देखु न कैसी छइ अंधियारी
बरसि रह्यो रिमझिम लखु पानी।
'हरीचन्द' चलि मिलु पीतम सों
लूट न रति-सुख पिय मन मानी॥28॥

डरपावत मोरवा कूकि कूकि।
पावस रितु बरसत कछु बादर पवन चलत है झूकि झूकि॥
पिय बिनु जानि अकेली मो कहं देत मदन तन फूंकि फूंकि।
'हरीचन्द' बिनु हरि कामिनि के उठत बिरह की हूकि हूकि॥29॥

पछितात गुजरिया, घर में खरी।
अब लगि श्याम सुन्दर नहिं आए दुखदाइनि भइ रात अंधरिया॥
बैठत उठत सेज पर भामिनि पिय बिन मोरी सूनी अटरिया।
'हरीचन्द' हरि के आवतही बसि गई मोरी उजरी नगरिया॥30॥

दियो पिय प्यारी को चौंकाय।
सुख सोये मिलि जुगल अटारिन अंग अंग लपटाय॥
इन घन गरजि बरसि बूंदन दिए कांची नींद जगाय।
अलसाने नहिं उठत सेज तें भींजि रहे अरुझाय।
'हरीचन्द' छतना लै कीनों क्योंहूं बचन उपाय॥31॥

डरत नहिं घन सों रति रस माते।
हार्‌यौ बरसि गरजि बहु भांतिन टरै न बीर तहां ते॥
गिरवर अटा सुहावनि लागत बन दरसात जहां ते।
तहंई जुगल लपटि रस सोए नींद भरे अलसाते॥
रस भीने आलस सों भीने भीने जल बरसाते।
औरहु गाढ़ अलिंगन करि कै सोए सुखद सुहाते॥
भोर भयो नहिं गिनत सखी-गन लखि कै कछु सकुचाते।
'हरीचन्द' घन दामिनि हारी जीति जुगल इतराते॥32॥

प्रीत तुव प्रीतम कौं प्रगटैयैं।
कैसे कै नाम प्रगट तुव लीजे कैसे कै बिथा सुनैयै॥
को जानै समुझै जग जिन सों खुलि कै भरम गवैयै।
प्रगट हाय करि नैनन जल भरि कैसे जगहि दिखैयै॥
कबहुं न जानै प्रेम रीति कोउ सुख सों बुरं कहैयै।
'हरीचन्द' पैं भेद न कहियै भले ही मौन मरि जैयै॥33॥

आजु झलक प्यारे की लखि कै मो घर महा मंगल भयो आली।
जद्यपि हौं गुरुजन के भय सों नीके नहिं चितए बनमाली॥
उठे कुंज सों मरगजे बागे जागे आवत रति रन साली।
हौं भय सों सखियन के चितई लोचन भरि नहिं रोचन लाली॥
उनहूं नैन कोर हंसि चितई मन लै गए ठगौरी घाली।
'हरीचन्द' भयो भोरहि मंगल कारज ह्वै है सिद्ध सुखाली॥34॥

हमारी श्री राधा महारानी।
तीन लोक को ठाकुर जो है ताहू की ठकुरानी॥
सब ब्रज की सिरताज लाडिली सखियन की सुखदानी।
'हरीचन्द' स्वामिनि पिय कामिनि परम कृपा की खानी॥35॥

मलार खेमटा

पथिक की प्रीति को का परमान।
दैन बसे इत भोर चले उठि मारि नैन को बान॥
ये काहू के भये न होयंगे स्वारथ लोभी जान।
'हरीचन्द' इनकै फन्दन परि वृथा गवैये प्रान॥36॥

हिंडोरना आजु झकोरवा लेत।
झूलत श्यामा श्याम रग भरे लपटि बढ़ावत हेत॥
बरसत घन तन काम जगावत गावत तारी देत।
'हरीचन्द' अरुझे पिय प्यारी बीर सुरत रन खेत॥37॥

परज

घेरि घेरि घन आए कुंज कुंज छाइ धाए
ऐसी या समय कोउ मान करै बाउरी।
देखि तो कुंज की शोभा बोलि रहे मोर
कीर हरी भूमि भई संग चलि आउ री॥

पावस रितु सबै नारी मिलैं पीतम सों
तू ही अनोखी एती करत चवाउ री।
'हरीचन्द' बलिहारी मग देखै गिरधारी
उठु चलु प्यारी मति बात बहराउ री ॥38॥

दोउ मिलि आजु हिडोले झूलैं।
कंचन खम्भ फूल सों बांधे सोभित सुभग कलिन्दी कूलैं॥
झुलवत चहुं दिसि नवल नागरी सोभा को रतिहूं नहिं तूलैं।
गावत हंसत हंसाइ रिझावत पिय छबि लखि मन की मन फूलैं॥
चलत चपल दृग कोर परसपर मेटत कठिन मदन की सूलैं।
'हरीचन्द' छबि रासि पिया पिय दरसत ही जिय दुख उनमूलैं ॥39॥

राग देश

हिंडोरे कौन झूलै थारे लार।
तुम अटपटे थारी झूलन अटपटी हूं तो घणी सुकुमार।
तुम झूलौ थाने हूं जू झुलाऊं थारो चरित अपार।
'हरीचन्द' ऐसी कहै छे राधिका मोहन प्रान अधार ॥40॥

कजली

दोउ झूलै आजु ललित हिंडोरे सखियां।
लखि सोभा मेरी सुनो री सिरानी अखियां॥
फूले फूल बहु कुंज झुकि रहीं डलियां।
वहां बोलै मोर कोकिला गावत अलियां॥
परै मन्द मद फुही दीने गल बहियां।
श्याम भींजत बचावै प्यारी कीर छहियां॥
छबि बाढ़ो अनूप तहां तौन घरियां।
तन मन 'हरीचन्द' बलिहारी करियां ॥41॥

भारत में एहि समय भई है सब कुछ
बिनहिं प्रमान हो दुइ रंगी।
आधे पुराने पुरानहिं मानें
आधे भए किरिस्तान हो दुइ रंगी॥
क्या तो गदहा को चना चढ़ावैं
कि होइ दयानन्द जायं हो दुइ रंगी।

क्या तो पढ़ै कैथी कोठिवलियै
कि होइ बरिस्टर धाय हो दुइ रंगी ॥
एही से भारत नास भया सब
जहां तहां यही हाल हो दुइ रंगी।
होउ एक मत भाई सबै अब
छोड़हु चाल कुचाल हो दुइ रंगी ॥42॥

सखी चला री कदम्ब तरे छोड़ि काम धाम।
झूलै रमकि हिडोरे जहां राधा घनश्याम ॥
सोभा देखिकै सिराने नयन पूरे मन काम।
'हरीचन्द' देखो उरझी गरे बन दाम ॥43॥

एरी सखी झूलत हिंडोरे श्यामा श्याम बिलोको वा कदम के तरे।
एसी सोभा देखत ही बनि आवे बिरिछ सोहैं हरे हरे ॥
एरी तहां रमकत प्यारी झलैं दिए बांह पिय के गरे।
एरी छबि देखत ही 'हरीचन्द' नैन मेरे आवत भरे ॥44॥
देखो भारत ऊपर कैसी छाई कजरी।
मिटि धूर में सपेदी सब आई कजरी ॥
दुज बेद की रिचन छोड़ि गाई कजरी।
नृप गन लाज छोड़ि मुंह लाई कजरी ॥45॥

तोरे पर भए मतवार रे नयनवां।
लोक लाज जस अजस न मानै सरस रूप रिझवार रे नयनवां ॥
मदिरा प्रेम पिये मतवारे सब से करत बिगार रे नयनवां।

'हरीचन्द' पिय रूप दिवाने करत न तनिक विचार रे नयनवां ॥46॥
बिनु सांवरे पियरवा जिय की जरनि न जाय।
जिय नहिं बहलत प्रान प्रिया बिनु कीने लाख उपाय ॥
काले बादर देखि बिरह की हूक उठत जिय आय।
'हरीचन्द' स्याम बिनु बादर उलटी आग देत दहकाय ॥47॥

बिजुरी चमकि चमकि डरवावे मोहिं अकेली पिय बिनु जानि।
बादर गरजि गरजि अति तरजै पंच रंग धनुहीं तानि ॥
मोरवा बैरी कड़खा गावै मनमथ बिरद बखानि।
पिय 'हरीचन्द' गरे लगि मरत जियाओ अरज लेहु यह मानि ॥48॥

काहे तू चौका लगाय जयचन्दवा।
अपने स्वारथ भूलि लुभाए
काहे चोटी कटवा बुलाए जयचन्दवा।
अपने हाथ से अपने कुल कै
काहे तैं जड़वा कटाए जयचन्दवा॥
फूट कै फल सब भारत बोए
बैरी कै राह खुलाए जयचन्दवा।
और नासि तैं आपो बिलाने
निज मुंह कजरी पुताय जयचन्दवा॥49॥

टूटै सोमनाथ कै मन्दिर केहु लागै न गोहार।
दौरो दौरो हिन्दू हो सब गौरा करें पुकार॥
की केहू हिन्दू कै जनमल नाहीं की जरि भैलैं छार।
की सब आज धरम तजि दिहलै भैलैं तुरुक सब इक बार॥
केहू लगल गोहार न गौरा रोवैं जार बिजार।
अब जग हिन्दू केहू नाहीं झूठै नामैं कै बेवहार॥50॥

धन धन भारत के सब क्षत्री जिनकी सुजस धुजा फहराय।
मारि मारि कै सत्रु दिए हैं लाखन बेर भगाय॥
महानन्द की फौज सुनत ही डरे सिकंदर राय।
राजा चन्द्रगुप्त ले आए बेटी सिल्यूकस की जाय॥
मारि बलूचिन बिक्रम रहे शकारी पदवी पाय।
वापा कासिम तनय मुहम्मद जीत्यौ सिन्धु दियो उतराय॥
आयो मामूं चढ़ि हिन्दुन पै चौबिस बेरा सैन सजाय।
खुम्मानराय तेहिं बाप सार लखि सब बिध दियो हराय॥
लाहौर राज जयपाल गयो चढ़ि खुरासान पर धाय।
दीनो प्रान अनन्दपाल पर छांड्यौ देस धरम नहिं जाय॥51॥

ध्रुवपद मलार

आयो पावस प्रचंड सब जग मैं मचाई धूम
कारे घन घेरि चारों ओर छाय।
गरजि गरजि तरजि तरजि बीजु चमक चहुं दिसि
सों बरखत जल धार लेत धरनि छिपाय॥

मोर रोर दादुर रव कोकिल कल झींगुर झनकारन
मिलि चारहु दिसि तुम कलह घोर सी मचाय।
'हरीचन्द' गिरिधारी राधा प्यारी साथ लगाय।
ऐसी समै रहे मिलि कंठ लपटाय ॥52॥

तेरेई पयान हित पावस प्रबल आयो।
उठि चलि प्यारी देखि छाई अंधियारी भारी।
पथ दिखाइ दामिनी रही चमकि तेरे गवन हेत
रवन संग मिलै क्यों न निसि अति कारी कारी ॥
गोप सबै गेह गए ह्वै गयो इकंत कुंज
सीरी पौन चलि रही देखि प्यारी प्यारी।
'हरीचन्द' मान छोड़ि उठि चलु साथ मेरे
बैठे बाट हेरि रहे पिय गिरधारी वारी ॥53॥

ख्याल मलार तिताला

ए घिरि घिरि कै मेघवा बरसै,
पिय बिनु मोरा जियरा तरसै।
बड़ी बड़ी बूंदन बरसत धायो घेरि घेरि
चहुं दिसि तें छायो चपला चमकि मेरे प्रान परसै ॥
झोंकत पवन जोर पुरवाई अति अंधियारी कहूं
पन्थ न लखाइ इत उत जुगनूं चमकत दरसै।
'हरीचन्द' पिय गरवां लगाओ मेरे तन की तपन
बुझाओ तोहि मिलि मेरो तन मन हरसै ॥54॥

दूसरी चाल की

देखो बूंदन बरसै दामिनि चमकै घिरि
आए बदरा गरें से लग जाओ।
घन की गरज सुन उमगत मेरो जिय
ऐसी समै मोहिं मत तरसाओ ॥
भरि गई नदी भूमि भई हरी हरी
मग भए अगम दूर मत जाओ।
'हरीचन्द' बलिहारी मिल प्यारे गिरधारी
पूरो मनोरथ तपत बुझाओ ॥ देखो.॥55॥

ख्याल मलार ताल झपक

पिया बिनु बिरह बरसा आई।
सघन घन दामिनि दमकि संग चमकि जुगुनूं
रमकि बदरन झमकि बरसत बूंद अति झर लाई।
रैन कारी डरारी भारी छाई अंधारी बिनु
पिय बिहारी गिरधारी के प्यारी घबराई।
'हरीचन्द' न धीर धरै पीर भई
भारी बनवारी बिना मुरझाई ॥56॥

सूरदासी मलार आढ़ा वा तिताला

यह रितु रूसन की नहिं प्यारी।
देखू न छाय रहे घन झुकि झुकि भूमि छई हरियारी॥
सीरी पवन चलत गरुई ह्वै काम बढ़ावन हारी।
बन उपवन सब भए सुहावन ओरहि छवि कछु धारी॥
फूली जुही मालती महंकी मुनि कोकिल किलकारी।
लहकि लहकि लपटी सब बेली पीतम गल भुज डारी॥
मगन भए जड़ जीव सबै जब तब तूं रहति क्यों न्यारी।
'हरीचन्द' गर लगु पीतम के गाड़े भुज भरि नारी ॥57॥

सावनी

पिय बिनु सखी नींद न आवै सांपिन सी भई रैन।
व्याकुल तड़पूं अकेली पीतम बिनु नहिं चैन॥
कैसे मैं जीऊं बिनु प्यारे ही बरसत टप टप नैन।
'हरीचन्द' कटत न सावन मारत मोहन मैन ॥58॥

धुरपत टोड़ी वा गौड़ मलार चौताला

ताथेई ताथेई ताथेई नाचै री मदन मोहन रास रंग
बधुन संग लाग डांट लेत उरप तिरप महामोद बढ़्यो
ब्रज जुवतिन मध्य आनन्द रांचै री।
ततधा ततधा ततधा बाजै मृदंग सरस तकिटधा
तकिटधा तकिटधा छबि लखि महा मोद मांचै री॥
अलाग लाग लेत गावत गुनिजन बंधान
तान मान बंध्यौ थिरक्यौ लय बिच बिच

बाजै मुरलि सुख सांचै री।
छबि लखि शिव मोहे आय नाचत डमरू बजाय
डिमि डिमि डिमि डिमिर डिमिर जस तहां
'हरीचन्द' बिमल बांचै री ॥ताथेई. ॥59॥

लावनी

बरसा रितु सखि सिर पर आई पिय बिदेस छाए।
हमैं अकेली छोड़ आप कुबरी सों बिलमाए॥
संदेसे भी नहिं भेजवाए।
वादे पर वादा झूठा कर अब तक नहिं आए।
बिथा सो कही नहीं जाती।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती॥
रात अंधेरी पथ न सूझै घोर घटा छाई।
रिमझिम रिमझिम बूंदैं बरसैं झोंकै पुरवाई॥
पपीहन पी पी रट लाई।
सुधि कर पीतम प्यारे की मेरी अंखियां भरि आई।
बिरह से दरकी सखि छाती।
पिया बिन मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती।
बाग बगीचे हरे भरे सब फूली फुलवारी।
भरे तलाब नदी नद नारे मिटी राह सारी॥
बिपति यह पड़ी सखी भारी।
कैसे आवैं मोहन उन बिन व्याकुल मैं नारी।
याद कर तबियत घबराती।
पिया बिन मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती।
जुगनूं चमकैं चार दिसा में भई बड़ी सोभा।
हरी भूमि पर बीर बहूटी देखत मन लोभा॥
नए नए बिरछन के गोभा।
देख देख के कामदेव मेरे जिय मारै चोभा॥
हुई जोबन मद से माती।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती॥
बरसा रितु में पीतम के संग फिरै सभी नारी।
झूलैं बागों जाय हिंडोरा गावैं दै तारी॥
पहिन के रंग रंग की सारी।
मैं किसके संग सोऊं सखी री बिपति बड़ी भारी॥

करूं क्या तबियत लहराती।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती॥
दादुर बोलैं नाचैं मोरा बरसा रितु जानी।
बिजुली चमकै बादल गरजै बरस रहा पानी॥
सेज सूनी लखि पछितानी।
हाथ पटक पाटी पर रो रो पिय बिन बिलखानी।
कोई नहिं आकर समझाती।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती॥
कहां जाऊं क्या करूं कोई ततबीर न दिखलाती।
खड़ी द्वार पर राह देखती मींजत पछताती॥
न भेजी अब तक भी पाती।
'हरीचन्द' को जाके कोई इतना तो समझाती।
कटै कैसे दुःख की राती।
पिया बिना मैं व्याकुल तड़पूं नींद नहीं आती॥60॥

बारह मासा

पिय गए बिदेस नहिं पाय सखी मन भावनी।
लाग्यो असाढ़ बियोग बरसा भई अरम्भ सुहावनी॥
अदरा लगी बदरा घुमड़ि रहे बिपति यह उनई नई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

सावन सुहावन दुःख बढ़ावन गरजि घन बन घेरहीं।
दामिनि दमकि जुगुनूं चमकि मोहिं दुखी जान तरेरहीं॥
पपिहा पिया को नाम रटि रटि काम अगिन जगावई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

भादों अंधेरी रात टपकै पात पर पानी बजै।
डरि काम के भय सुन्दरी मिलि नाह सों सेजिया सजै॥
मैं भीजि मारग देखि पिय को रोय तजि आसा दई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

सखि क्वार मास लग्यौ सुहावन सबै सांझी खेलहीं।
निसि चन्द पूरन चांदनी मैं नाह गह भुज मेलहीं॥
मोहि चांदनी भई धूप रोअत रात बीति सबै गई।
बिनु श्याम सुन्दरन सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

कार्तिक पुनीत नहाइ सब दै दीप उंजियारी करैं।
हम प्रान पिय बिनु बिकल बिरहागिनि दिवारी सौ जरैं॥
अंधियार पिय बिनु हिए चौपड़ कौन हंसि हंसि खेलई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

अगहन लग्यौ पाला पड़्यौ सब लपटि पिय सों सोचहीं।
बिनु प्रान प्रियतम मिले हम करि हाय बहु बिधि रोवहीं॥
दो भए बिन इक रैन आली लाख जुग सी लागई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

सखि पूस लाग्यौ रूस बैठे प्रानप्रिय औरे कहीं।
यह रात जाड़े की बिना पिय साथ के बीतत नहीं॥
उन निठुर सब सुख छीनि हमरो राह मधुबन की लई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥
सखि माघ में कोयल कुहूकी काम को आगम भयो।
फूली बसन्त सुखेत सरसों आम बन बौर्‍यौ नयो॥
यह पंचमी तिहवार की भई हाय दुखदाइनि दई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

फागुन महीना मस्त सब मिलि निलज गारी गावहीं।
डारैं अबीर गुलाल चोवा रंग संग उड़ावहीं॥
बिनु प्रान पिय मैं आप बिरहिनि होय होरी जरि गई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

सखि चैत चांदनि लगी सुखद बसन्त ऋतु बन आइयो।
चटके गुलाब सुहावने जग काम को बल छाइयो॥
बिनु प्रान पिय दुख दुगुन भयो मनो आज भइ बिरहिन नई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

बैसाख मास अरम्भ ग्रीष्म औरहू दुख बाढ़ही।
इत तो बियोगिन आप दूजे दुसह ग्रीषम डाढ़ही॥
बन नयो पल्लव काम बान समान उर बेधा दई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

सखि जेठ में दिन भयो दूनो कटत कोऊ बिधि नहीं।
बन पात पातन ढूंढ़ि हारी नहिं मिले प्यारे कहीं॥
पाती न पाई श्याम की सखि बयस सब योंही गई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥

इमि खोज बारह मास पिय को हारि भाभिनि भौनही।
धरि रूप जोगिन को रही औलम्ब करि इक मौनही॥
'हरीचन्द' देख्यौ जगत को सब एक पिय मोहन भई।
बिनु श्याम सुन्दर सेज सूनी देख के व्याकुल भई॥61॥

कजली

मोहि नन्द के कंधाई बेलमाई रे हरी।
बहे पुरवाई औ बदरिया झुकि आई रामा,
कुंज में बुलाई बृजराई रे हरी।
बंसिया बजाई सुनि सखि उठि आई रामा,
सब जुरि आई रस बरसाई रे हरी।
माधवी भी जाई जिय अति हुलसाई रामा,
कजरी सुनाई मन भाई रे हरी।
मिलु उर लाई प्यारी पिय को लुभाई रामा,
नाहिं 'हरीचन्द' पछताई रे हरी॥62॥

मलार

हरि बिनु काली बदरिया छाई।
बरसत घेरि घेरि चहुं दिसि तें दामिनि चमक जनाई॥
कोइलि कुहुकि हिय मेरे बिरहा अगिन बढ़ाई।
दादुर बोलत ताल तलैयन मानहुं काम बधाई॥
कौन देस छाये नन्द नन्दन पातीहू न पठाई।
'हरीचन्द' बिनु बिकल बिरहिनी परी सेज मुरझाई॥63॥

सखि फिरि पावस ऋतु आई।
पिया बिना फिर पी पी करि कै इन पापिन रट लाई॥
फिर बदरी झुकि झुकि कै आई बिपति फौज उठि धाई।
देखि अकेली कुटिल काम फिर खींचि कमान चढ़ाई॥
फिर बरसत वैसी ही बूंदें चहुं दिसि सों झरि लाई।
फिर दुख नंदी उमड़ि हियरा सौं नैनन के मग आई॥

फिर चमकी चपला चहुंघा तें बिरहिन फेरि उराई।
फिर इन मोरन बोलि बोलि कै मोहन सुधि जु दिवाई॥
फिर ये कुंज हरे भए देखियत जहं हरि केलि कराई।
'हरीचन्द' फिर बिकल बिरहिनी परी सेज मुरझाई॥64॥

फिरि आई बदरी कारी, फिर तलफैंगे पापी प्रान।
बिनु पिय पची फेर याही दुःख देखन के हित नारी॥
अति व्याकुल तलफत कोउ नाहिंन कछु समुझावन हारी।
देखि दसा रोवत द्रुम बेली धीर सकत नहिं धारी॥
कोकिल कूक सुनत हिय फाटत क्यौं जीवै सुकुमारी।
'हरीचन्द' बिनु को समुझावै कहि कहि प्रान पियारी॥65॥

मो मन स्याम घटा सी छाई।
बरसत है इन नैनन के मग पिय बिनु बरसा आई॥
मन मोहन बिछुरे सों सब जग सूनो परत लखाई।
'हरीचन्द' बिनु प्रान बचन को नाहि लखात उपाई॥66॥

राग मलार, चौताला

श्याम घटा छाई श्याम श्याम कुंज भयो
श्यामा श्याम ठाढ़े तामैं भींजत सोहैं।
तैसिय श्याम सारी प्यारी तन सोहैं भारी
छबि देखि काम-बाम चंचलाहू मोहैं॥
तैसोई मुकुट मानों घन दामिनि पर
बग पंगति तापै मोर नचो है।
'हरीचन्द' बलिहारी राधा अरु गिरधारी
सो छबि कहि सकै ऐसो कबि को है॥67॥

राग मलार

अनोखी तुही नई एक नारि।
पावस रितु मैं मान करै कोउ लखि तो हृदै बिचारि।
जोगीहू घन घटा देखिकै धावत ध्यान बिसारि॥
बड़े बड़े ज्ञानी बैरागी करत भोग तप हारि।
तू कामिनि क्यौं धीर धरत है यह अचरज मोहिं भारि॥
कर जोरे गिरधर पिअ ठाढ़े करत बहुत मनुहारि।
'हरीचन्द' हठ छोड़ि दया करि भुज भरि कोप बिसारि॥68॥

खंडिता

आजु तौ जंभात प्रात दोऊ दृग अलसात
भींजत भींजत लाल आए मेरे अंगना।
लटपटी पाग तें कुसुंभी रंग बरसि रह्यौ
अकेले कहां ते आए सखा कोऊ संग ना॥
निसि के उनींदे जागे कौन तिया रस पागे
देखो तौ कपोलन पै रह्यो कहुं रंग ना।
'हरीचन्द' बलिहारी देखियै जू गिरधारी
नील पट अरुझ्यो है काहू को कंगना॥69॥

सारंग

आजु ब्रज बाजत महा बधाई।
परम प्रेमनिधि श्री चन्द्रावलि चन्द्रभानु नृप जाई॥
प्रफुलित भई कुंज द्रुम वेली कीरादिक सुख पाई।
परम रसिक वर नन्दलाल हित प्रगट भूमि पै आई॥
चन्द्रभानु नृप दान देत बहु हय गय सकल लुटाई।
चन्द्रकला रानी सुखदानी ताकी कूख सिराई॥
आये नन्दादिक सब मिलिकै महीभान घर धाई।
प्रगटी सखी स्वामिनी की ब्रज सब मिलि नाचत गाई॥
चम्पक लता बहुरि चन्द्रावलि तनया जुगुल सुहाई।
प्रगटे ब्रज सुतहू तें दूनो करत उछाव बनाई॥
गुप्त रूप कोउ लखत नहीं कछु भेद न जान्यौ जाई।
'हरीचन्द' श्री विट्ठल पद लखि लख्यो भेद सुखदाई॥70॥

आजु ब्रज दूनो बढ़्यो अनन्द।
भादौं सुदी पंचमी स्वाती बुध प्रगटे जदुचन्द॥
अग्रज श्री गिरिधारन जू के लीला ललित अमन्द।
रोहिनि माता उदर प्रगट भए हरन भक्त के दन्द॥
दान देत हरषे नन्द-जसुमति हय गय रतनन कन्द।
'हरीचन्द' अलि आनन्द फूले गावत देव सुछन्द॥71॥

असावरी

आनन्द सागर आजु उमड़ि चल्यो ब्रज में प्रगटे आइ कन्हाई।
नाचत ग्वाल करत कौतूहल हेरी देत कहि नन्द दुहाई॥

छिरकत गोपी गोप सबै मिलि गावत गंगलचार बधाई।
आनन्द भरे देत कर तारी लखि सुरगन कुसुमन झर लाई॥
देत दान सन्मान नन्द जू अति हुलास कछु बरनि न जाई।
'हरीचन्द' जन जानि आपुनो टेरि देत सब बहुत बधाई॥72॥

यथा रुचि

आजु ब्रज होत कुलाहल भारी।
बरसाने बृषभानु गोप के श्री राधा अवतारी॥
गावत गोपी रस मैं ओपी गोप बजावत तारी।
आनन्द मगन गिनत नहिं काहू देत दिवावत गारी॥
देत दान सम्मान भान जू कनक माल मनि सारी।
जो जांचत तासों बढ़ि पावत 'हरीचन्द' बलिहारी॥73॥

आजु बन ग्वाल कोऊ नहिं जाई।
कहत पुकारि सुनौ री भैया कीरति कन्या जाई॥
लावहु गाय सिगरि बच्छ सह सुबरन सींग मढ़ाई।
मोर पंख मखतूल झूल धरि अंग अंग चित्र कराई॥
आजु उदय सांचो सब गावहु मिलिकै गीत बधाई।
'हरीचन्द' वृषभानु बबा सों बहुत निछावरि पाई॥74॥

आनन्दे सुख हेरि हेरि।
ब्रज जन गावत देत बधाये नचत पिछौरी फेरि फेरि॥
उनमत गिनत न ग्वाल कछू ब्रज सुन्दरि राखी घेरि घेरि।
हेरी दै दै बोलत सबही ऊंचे सुर सों टेरि टेरि॥
छिरकत हंसत हंसावत धावत राखत दधि घृत झेरि झेरि।
'हरीचन्द' ऐसो मुख निरखत तन मन वारत बेरि बेरि॥75॥

आनन्द आजु भयो बरसाने जनमी राधा प्यारी जू।
त्रिभुवन सुखदानी ठकुरानी जननी जनक दुलारी जू॥
सुर नर मुनि जेहि ध्यान धरत हैं गावत बेद पुकारी जू।
सो 'हरीचन्द' बसत बरसाने मोहन प्रान अधारी जू॥76॥

राग बिलावल

आजु भौन बृषभानु के प्रगटीं श्रीराधा।
दूरि भई है री सखी त्रिभुवन की बाधा॥
को कबि जो छबि कहि सकै कछु कहि नहिं आवै।
आनन्द अति परगट भयो दुःख दूरि बहावै॥
डारहिं सब ब्रज गोपिका तन मन धन वारी।
'हरीचन्द' श्री राधिका पद पै बलिहारी॥77॥

भैरव

आजु तौ आनन्द भयो का पै कहि जावै।
झूलें सब गोपि ग्वाल इत उत बहु डोलैं॥
बाढ़्यो अति हिय हुलास जय जय मुख बोलैं।
पहिरि पहिरि सुरंग सारी आईं ब्रज नारी॥
गावैं हिय मोद भरी दै दै कर तारी।
दान देत भानु राय जाको जो भावै॥
'हरीचन्द' आनन्द भरि राधा गुन गावै॥78॥

कान्हरा

आई भादौं की उंजियारी।
आनन्द भयो सकल ब्रज मंडल प्रगटी श्री वृषभानु दुलारी॥
कीरति जू की कोख सिरानी जाके घर प्यारी अवतारी।
'हरीचन्द' मोहन जू की जोरी बिधना कुंवरि संवारी॥79॥

आजु बरसाने नौबत बाजैं।
बीन मृदंग ढोल सहनाई गह गह दुन्दुभि गाजैं॥
सब ब्रज मंडल शोभा बाढ़ी घर घर सब सुख साजैं।
'हरीचन्द' राधा के प्रगटे देव बधू सब लाजैं॥80॥

आजु ब्रज आनन्द बरसि रह्यो।
प्रगट भई त्रिभुवन की शोभा सुख नहिं जात कह्यो॥
आनन्द मगन नहीं सुधि तन की सब दुख दूरि बह्यो।
'हरीचन्द' आनन्दित तेहि छन चरन की सरन गह्यो॥81॥

आजु कहा नभ भीर भई?
सजनी कौन फूल बरसावैं सुख की बेलि बई?
बालक से चारहु को आए तीन नयन को को है?
ओढ़ि बघम्बर सरप लपेटे जटा धरे सिर सोहै?
तीन चार अरु पंच सप्त षटमुख के मिलि क्यों नाचैं?
बड़ी जटा मुख तेज अनूपम को यह बेदहि बांचैं?
बीन बजावति कौन लुगाई हंस चढ़ी क्यों डोलै?
को यह यन्त्र बजाय रही है जै जै जै जै बोलै?
को यह लिये तमूरा ठाढ़ी को नाचै को गावै?
इत आवै कोउ बात न पूछत पुनि नभ लौं चलि जावै?
अति आचरज भरी सब तन में बात करैं ब्रज नारी?
प्रगट भई वृषभानु राय घर मोहन प्रान पियारी।
आनन्द बढ्यो कहत नहिं आवै कवि की मति सकुचाई॥
राधा श्याम चरन पंकज रज 'हरीचन्द' बलि जाई॥82॥

आजु प्रकट भईं श्री राधा आजु प्रकट भईं।
गोपिका मिलि घर घरन सों भानु नगर गईं॥
आइ नन्द जसोमति मिलि होत अधिक अनन्द।
भानु बरसाने उदय भो प्रगट पूरन चन्द॥
होत जय जयकार वहि पुर देव बरषै फूल।
'हरीचन्द' सब गोपिका के मिटे उर के शूल॥83॥

सारंग

आजु दधि कांदौ है बरसाने।
छिरकति गोपी गोप सबै मिल काहू को नहिं माने॥
आनन्दित घर की सुधि भूली हमको हैं नहिं जाने।
दधि घृत दूध उड़ैलै सिर सों फिरहि अतिहि सरसाने॥
वह आनन्द कापै कहि आवै भयो जौन महराने।
श्री बल्लभ पद पद्म कृपा सों 'हरीचन्द' कछु जाने॥84॥

फजली

श्याम बिरह में सूझत सब जग
हम कों श्यामहि श्याम हो इक रंगी।

जमुना श्याम गोबरधन श्यामहि
श्याम कुंज बन धाम हो इक रंगी ॥
श्याम घटा पिक मोर श्याम सब
श्यामहि को है काम हो ढक रंगी।
'हरीचन्द' याही तें भयो है
श्यामा मेरो नाम हो इक रंगी ॥85॥

मलार

अनत जाइ बरसत इत गरजत बे काज।
तुम रस लोभी मीत स्वारथ के सुनहु प्रिया ब्रजराज ॥
दामिनि सी कामिनि अनेक लिए करत फिरत हौ राज।
'हरीचन्द' निज प्रेम पपीहन तरसावत महराज ॥86॥

पिय संग चलि री हिंडोरे झूल।
या सावन के सरस महीने मेटि अरी जिय सूल ॥
देखि हरी भई भूमि रही सब बन द्रुम बेली फूल।
यह रितु मानिनि मान पतिव्रत देत सबै उन्मूल ॥
होन संजोगिनि सुख बिरहिन के हिए उठत है हूल।
'हरीचन्द' चल ऐसा समय तू मिलु गहि पिय भुज मूल ॥87॥

राग भैरव

प्रात काल ब्रज बाल पनियां भरन चलीं
गोरे गोरे तन सोहै कुसुंभी को चदरा।
ताही समै घन आए घेरि घेरि नभ छाए
दामिनि दमक देखि होत जिय कदरा ॥
बोलत चातक मोर सीतल चलैं झकोर
जमुना उमड़ि चली बरसत अदरा।
'हरीचन्द' बलिहारी उठि बैठो गिरिधारी
सोभा तौ निहारौ चलि कैसो छाए बदरा ॥88॥

खंडिता

प्रात क्यौं उमड़ि आए कहा मेरे घर छाए
ए जू घनश्याम कित रात तुम बरसे।
गरजत कहा कोऊ डर नहिं जैहैं भागि
झुकि झुकि कहा रहे चलौ अटा पर से॥

सजल लखात मानौ नील पट ओढ़ि आए
कहौ दौरे दौरे तुम आए काके घर से।
'हरीचन्द' कौन सी दामिनि संग रात रहे
हम तौ तुम्हारे बिना सारी रैन तरसे ॥89॥

सारंग

आये ब्रज जन धाय धाय।
नाचत करत कोलाहल सब मिलि तारी दै दै गाय गाय ॥
जुरे आइ सिगरे ब्रज बासी टीको बहु बिधि लाय लाय।
'हरीचन्द' आनन्द अति बाढ़्यो कहत नन्द सों जाय जाय ॥90॥

आजु भयो अति आनन्द भारी।
प्रगटी श्री वृषभानु दुलारी ॥
गोपी सब टीकौ लै आवैं।
मिलि मिलि रहसि बधाई गावैं ॥
नाचत गोप देत सब तारी।
तन मन की कछु सुधि न सम्हारी ॥
दान देति हैं मनि गन हीरा।
हेम पटम्बर पीअर चीरा ॥
सुख बाढ़्यो तेहि छन अति भारी।
'हरीचन्द' छबि लखि बलिहारी ॥91॥

आजु श्री बल्लभ के आनन्द।
प्रगट भए ब्रज जन सुखदायी पूरन परमानन्द ॥
गावत गीत सबै ब्रज बनिता सोहत हैं मुख चन्द।
वेद पढ़त द्विजवर बहु ठाढ़े देत असीस सुछन्द ॥
गुप्त रूप कोउ प्रकट न जानत हलधर सब सुखकन्द।
गोपीनाथ अनाथ नाथ लखि मन वारत 'हरीचन्द' ॥92॥

आजु ब्रज होत कोलाहल भारी।
नन्दराय घर मोहन प्रकटे भक्तन के सुखकारी ॥
जित तित ते धाई टीको लै अति आकुल ब्रज नारी।
निरखन कारन श्याम नवल ससि उमंगी सजि सजि सारी ॥

गावत गोप चोप भरि नाचत दै दै कै कर तारी।
बाजे बजत उड़त दधि माखन छीर मनहुं धन वारी॥
दान देत नन्दराय उमंगि रस रतन धेनु बिस्तारी।
'हरीचन्द' सो निरखि परम सुख देत अपनपौ वारी॥93॥

परज

एरी आज बाजै छे रंग बधावना।
कीरति उदर उदयगिरि प्रगट्यो अद्भुत चन्द्र सोहावना॥
आजु सुफल भयो नन्द महोत्सव नर नारी मिलि गावना।
'हरीचन्द' वृषभानु बबा सों प्रेम बधायो पावना॥94॥

सारंग

कुंज कुंज रथ डोलै मदन मोहन जू को
श्वेत ध्वजा तामें उड़ि उड़ि सोहै।
तैसोई सघन घन छाय रहेउ नभ
बीच देखत ही मनमथ मन मोहै॥
दौरत में फरहरत पीताम्बर
मनु दामिनि घन नाचै।
श्वेत ध्वजा बग पांति छबि कछु कहि न
जात निरखत अति मन आनन्द राचै॥
द्रुम द्रुम कुंज कुंज बन बन
तीर तीर घूमत रथ फिरि आवै।
'हरीचन्द' बलि जाय छबि देखि मुख
पाय तन मन धन सब वारिकै लुटावै॥95॥

विहाग

गावत रंग बधाई सब मिलि गावत रंग बधाई।
कीरति के प्रकटी श्री राधा मोहन के मन भाई॥
नर नारी सब मिलि के आई गावत गीत सुहाई।
'हरिचन्द' कछु जस बरनन करि बहुत निछावरि पाई॥96॥

राइसो

गावो सखि मंगलचार बधायो बृषभानु की।
सुनि चलीं गृह गृह तें साजनि सबै सजाय।
बरनि छबि कछु कहि न आवै चन्द उदय भयो आय॥

भयो अति आनन्द तेहि छन कह्यो कापै जाय।
ग्वाल नाचैं तारि दै दै देत बहुत बनाय॥
एक गावत एक नाचत एक परसत पाय।
गारि देत दिवाय सब को सुख कह्यो नहि जाय॥
देत सब कोऊ बधाई रतन बसन लुटाय।
रंक भए कुबेर मानहु दान पाई अघाय॥
भयो जौन अनन्द तेहि छन कौन पै कहि जाय।
'हरीचन्द' बहुत दीनों दान तहां बुलाय॥97॥

सारंग

ग्वाल सब हेरि हेरि बोलैं।
कीरति के कन्या जायी यह सुख सों कहि डोलैं॥
आनन्द मगन गनत नहिं काहू माठ दही के रोलैं।
'हरीचन्द' को देत बधाई भक्ति मन मोलैं॥98॥

गावै सबै बधाय धाय।
आनन्द भरे करत कौतूहल बहुधा यन्त्र बजाय जाय॥
गोपी आईं मंगल कर लै कुमकुम मुखन लगाय गाय।
श्री मुख लखि आनन्दत सबही नयनन नहीं बलाय लाय॥
रावल गली सुगन्धिन छिरकी बहु बिधि बसन बिछाय छाय।
'हरीचन्द' सोभा लखि सुर नभ तिय सब रहीं लुभाय भाय॥99॥

यथा रुचि

गोकुल प्रकटे गोकुलनाथ।
प्रमुदित लता गोवर्द्धन जमुना सब ब्रजवासी किए सनाथ॥
इक गावत इक ताल बजावत इक नाचत गहि गहि कै हाथ।
एक बसन पट देत बधाई इक लावत घसि चन्दन माथ॥
आनन्द उमगे गनत न काहू बाल वृद्ध सब एकहि साथ।
'हरीचन्द' सुर फूलन बरषत सुक नारद गावत गुन गाथ॥100॥

परज

घर घर आजु बधाई बाजै।
टीको लै आवति ब्रज बनिता कीरति को घर राजै॥

इक गावत इक करत कोलाहल मनु पायो है राजै।
'हरीचन्द' छबि कहि नहिं आवै कबि मति या थल लाजै ॥101॥

यथा रुचि

चन्द्रभानु घर बजत बधाई।
श्री चन्द्रावलि ब्रज प्रकटाई ॥
हरित भए तरु पल्लव गोभा।
कुंज भवन बाढ़ी अति शोभा ॥
बोलि उठे कल कोकिल कीरा।
डोली तिहि छन त्रिबिध समीरा ॥
उनये घन मनु आनन्द छायो।
गरजि मन्द दुन्दुभी बजायो ॥
भादौं सित पंचमी सुहाई।
स्वाती सोम पहर निसि आई ॥
चन्द्रकला की कोख सिरानी।
चन्द्रावलि प्रकटी सुखदानी ॥
गुप्त भेद नहिं कछु प्रगटायो।
सो श्री बिट्ठल प्रकट लखायो ॥
रूप प्रकट छबि नयन निहारी।
'हरीचन्द' सर्बस बलिहारी ॥102॥

ढाढ़ी

चलो आज घर नन्द महर के प्रेम बधाई गावैं।
भादों कृष्ण अष्टमी दिन श्री कृष्णचन्द्र जस गावैं ॥
तोरन तनी पताका द्वारन भवन भीर भइ भारी।
री ढाढ़िन कर पगन समेटे चलियो भवन मंझारी ॥
जहां इन्द्र चन्द्रादि देवता कर बांधे हैं ठाढ़े।
कौन सुनैगो आज हमारी प्यारी कर हित गाढ़े ॥
प्रेम पन्थ को पग है न्यारो ताते मन यह आवै।
'हरीचन्द' लखि लाल लड़इतो नव निधि रिधि सिधि पावै ॥103॥

जसोदा माई लेहु हमारी बधाई।
धन्य भाग तेरे सुनु प्यारी जनम्यो कुंवर कन्हाई ॥

चिरजीवो जब लौं जमुना जल गंगा जल सब देवा।
जब लौं धरा अकास और है जब लौं हरि की सेवा॥
तब लौं चिरजीवो जग भीतर 'हरीचन्द' तव लाला।
मंगल गीत विनोद मोद मति मंगल होइ रसाला॥104॥

डिंडोला रायसा

झूलत राधा रंग भरी कुंज हिंडोरे आज।
संग सब सखी सुहावनी साजे सुन्दर साज॥
झूलन आये मोहन सुन्दर मदन मुरारी।
गावत ऊंचे सुर भरि संग मिलि ब्रज की नारी॥
ताल मुरज डफ आवज साथ पखावज चंग।
बाजत लय सुर साजत बीना और उपंग॥
बिच बिच बंसी गूंजत मधुर मधुर घन घोर।
धुनि सुनि जासु कोइलियन तरुन मचाई रोर॥
इक उतरत इक झूलत एक चढ़त तहं धाय।
एक रहत गहि डोरी दूजी देत झुलाई॥
इक नाचत इक गावत एक बजावत तार।
एक जुगल छबि लखि कै तन मन डारत वार॥
रमकनि मैं रंग बाढ़्यौ छबि कछु कही न जाइ।
झोंटा लगि रहे डरन बिबिध वसन फहराइ॥
सोभा को कहि भापै झूलत बाढ़ी जौन।
'हरीचन्द' लखि लखि कै कवि मति रसना मौन॥105॥

बिहाग

नाचति बरसाने की नारी।
जिनके घर प्रकटी श्री राधा मोहन प्रान पियारी॥
नाचत शिव सनकादि मुनीश्वर नारदादि ब्रतधारी।
नाचत वेद पुरान रूप धरि डारत तन मन वारी॥
अति आनन्द बढ़्यो बरसाने प्रकटी श्रीवृषभान कुमारी।
'हरीचन्द' आनन्दित अति मन होत निरखि बलिहारी॥106॥

नन्द बधाई बांटत ठाढ़े।
भई सुता बाबा भानुराय के प्रेम पुलक तन बाढ़े॥
काहू को सोना काहू को रूपा काहू के मनि गन दीनो।
जिनको मांग्यो तिन सो पायो कह्यो सबनि को कीनो॥

काहु को धेनु बसन काहू की दियो सबनि मन भायो।
आनन्द भयो कहत नहिं आवै 'हरीचन्द' जस गायो ॥107॥

नागरी मंगल रूप निधान।
जब तें प्रकट भई बरसाने छायो आनन्द महान॥
दिन दिन सुख उमड़त घर घर में छन छन होत कल्यान।
'हरीचन्द' मोहन की प्यारी राधा परम सुजान ॥108॥

मलार

पिय बिन बरसत आयो पानी।
चपला चमकि चमकि डरपावत मोहिं अकेली जानी॥
कोयल कूक सुनत जिय फाटत यह बरपा दुखदानी।
'हरीचन्द' पिय श्याम सुन्दर बिनु बिरहिनि भई है दिवानी ॥109॥

सारंग

ब्रज जन कांवर जोरि जोरि।
आये मन भाये लै दधि घृत निज निज गृह तें दौरि दौरि॥
गोपी आई गीतन गावत पाइं परत मुर लोरि लोरि।
करत निछावरि देखि प्रिया मुख तन के भूषन छोरि छोरि॥
दधि कांदो माच्यो आंगन में देत माठ सब फोरि फोरि।
खात मिठाई वारत छिन में कोरि कोरि॥
गिनत न कोऊ काहू को कछु पट भूषन दै तोरि तोरि।
'हरीचन्द' सुख कहत न आवै आनन्द बाढ़्यो खोरि खोरि ॥110॥

राग मलार हिंडोला

गिरधरलाल हिंडोरे झूलैं।
पचरंग फूल हिंडोरे बनायो निरखि निरखि जिय फूलैं॥
को कहि सकै भई जो सोभा कालिन्दी के कूलैं।
'हरीचन्द' यह कौतुक लखिकै देव विमानन भूलैं ॥111॥

राग परज

एजी आज झूलै छे श्याम हिंडोरें।
वृन्दावन री सघन कुंज में जमुना जी लेतां हलोरें॥
संग थारे वृषभानु नन्दिनी सोहै छै रंग गोरे।
'हरीचन्द' जीवन धन वारी मुख लखतां चित चोरे ॥112॥

ईमन

कमल नैन प्यारी झूलै झुलावै पिय प्यारी।
कबहुंक झींटा देत कबहुं लगावै कंठ
कबहुं संवारत सारी, करत मनुहारी॥
कबहुं संग झूलै सोभा देखि देखि फूलै कबहुं
उतरि झोंटा देत भारी भारी डरत सुकुमारी।
'हरीचन्द' बलिहारी झुकि आई घटा कारी।
बरसत घोर बारी मुकुट, छावत गिरिधारी॥113॥

राग अड़ानो

सावन आवत ही सब द्रुम नए फूले
ता मधि झूलत नवल हिंडोरे।
तैसिय हरित भूमि तामै बीरबधू सोहै
तैसीयै लता झुकि रही चहुं कोरे॥
तैसोई हिडोरो पच रंग बन्यो सोहत
तैसी ही ब्रज बधू घेरे सब ओरे।
'हरीचन्द' बलिहारी तापै झूलै राधाप्यारी
मोहन झुलावैं झोंटा देत थोरे थोरे॥114॥

बारह मासा

मास असाढ़ उमड़ि आए बदरा ऋतु बरसा आई।
बोले मोर सोर चहुं दिसि घन घोर घटा छाई॥
पपीहन पी पी रट लाई।
भयो अरम्भ वियोग फिरी जब काम की दुहाई॥
देखि मेरी तबियत घबराती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
सावन मास सुहावन लागै मन भावन नाहीं।
झूलैं काकै संग हिंडोरा देकर गल बाहीं॥
बरसि घन कुंजन के माहीं।
कौन बचावै आप भींजि मोहि रखि अपनी छांही॥
याद करि दरकत सखि छाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
भादों मास अंधेरो लखि कै रही धीर खोई।
व्याकुल सूने घर में तड़पूं पास नहीं कोई॥

अकेली मैं सेजों सोई।
बूंद झमक दामिनी चमक लखि कै करवट रोई॥
बिथा सो नहीं सही जाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
क्वार मास सब सांझी खेलैं सरद बिमल पानी।
मैं व्याकुल बिनु प्रान पिया के कहत न मुख बानी॥
उंजेरी रात न मन मानी।
चन्दा उलटी अगिनि लगावे मोहिं बिरहिनी जानी॥
कोई करवट नहिं कल पाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
कातिक मास पुनीत जानि सब न्हातीं बृज नारी।
मानि दिवाली दीप दान दे करती उंजियारी॥
पिया बिन मेरे अंधियारी।
भई बियोगिन व्याकुल मैं सब रैन चैन हारी॥
बिपति यह सही नहीं जाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
अगहन आया सब मन भाया पड़ा जोर पाला।
लपटि लपटि पीतम से सोई घर घर में बाला॥
ओढ़ कर शाल और दुशाला।
मैं घर बीच अकेली तड़पूं बिना नन्दलाला॥
भई सौ जुग की इक राती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
पूस मास में सीत जोर है दुगुन रात होती।
बिना पियारे प्राणनाथ मैं किससे लपट सोती॥
सेज सूनी लखि कै रोती।
तड़प तड़प कर बिरह बोझ मैं किसी भांति ढोती॥
भई मेरी पत्थर की छाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
माघ मास में मदन जोर भयो रितु बसन्त आई।
बौरे बौर फूल बन फूले मोरन रट लाई॥
फिरी जग काम की दुहाई।
कोकिल कूक सुनत जिय दरकत मुरछित घबराई॥
न पाई मोहन की पाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥

फागुन खेलैं फाग रंग गावैं मीठी बोली।
चलै रंग की पिचकारी उड़ै अबिर झोली॥
देखि मेरे हिय लागी होली।
भयो काम को जोर दरकि गई जोबन से चोली॥
जाय यह कोई समझाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
चैत चांदनी देख भया दुःख सखी मेरा दूना।
कामदेव ने अंग अंग मेरा जला जला भूना॥
पिया बिन मैं अब जीऊं ना।
कहां जाऊं क्या करूं दिखाता सारा जग सूना॥
धरनि में मैं समाय जाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
लगा मास बैसाख सखी दिन गर्मी के आए।
सब संजोगियों ने खसखाने घर में लगवाए॥
फूल के बंगले बनवाए।
चन्दन लेप फुहारे छूटे गुलाब छिरकाए॥
करूं मैं क्या बियोग माती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
जेठ मास गरमी सखि पड़ती बढ़ी पीर भारी।
दिन नहिं कटता किसी भांति घबराती मैं नारी॥
भई मेरे जोबन की ख्वारी।
बारी बैस छोड़ के मुझको बिछुड़े बनवारी॥
हाय करि रोती पछिताती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥
बारह मास पिया बिन खोए रोइ रोइ हारे।
वन वन पात पात करि ढूंढा मिले नहीं प्यारे॥
मेरे प्रानों के रखवारे।
'हरीचन्द' मुखड़ा दिखलाओ आंखों के तारे॥
पीर अब सही नहीं जाती।
कैसे रैन कटै बिनु पिय के नींद नहीं आती॥115॥

मलार

ऐ मैं कैसे आऊं ए दिलजानी हो देखो रिमझिम बरसत पानी।
जो मेरी भींजे सुरुख चूंदरी तो घर सास रिसानी।
'हरीचन्द' पिय मोहिं बचाओ पीत पिछोरी तानी॥116॥

सारंग

ब्रज जनमत ही आनन्द भयो।
श्री बृषभानु भवन के भीतर सब सुख आन नयो॥
गांव गांव तें टीको आयो भीतर भवन लयो।
'हरीचन्द' आनन्द भयो अति दुःख बहि दूरि भयो॥117॥

ब्रज में रस निधि प्रगट भई।
चन्द्रभानु नृप भाग फले ब्रज प्रगटी सुता नई॥
हरि राधा को प्रेम परम जो सोइ मूरति चितई।
कहि 'हरीचन्द' मान लीला रस करि हित भूमि गई॥118॥

यथा रुचि

भटू इक बात नई सुनि आई।
आजु भई कीरति के कन्या बाजत रंग बधाई॥
नर नारी सब हैं मिलि आई कीरति घर छबि छाई।
अति आनन्द कहन नहिं आवै 'हरीचन्द' बलि जाई॥119॥

मलार

मनोरथ करत द्वार पर ठाढ़ी।
करि करि ध्यान श्याम सुन्दर को पुलकावलि तन बाढ़ी॥
ऐहैं री या मारग सों हरि कमल नयन घनश्याम।
बेनु बजावत कमल फिरावत हंसत गरे बन दाम॥
करि करि बहु पकवान मिठाई भरि भरि राखत थार।
अपने हाथ गूंथि बनावत रचि फूलन के हार॥
द्वारे मेरे रथ ठाढ़ो करि मोकों अति सुख दैहैं।
जो हम रचि रचि कै राखे हैं सो प्रभु रुचि सो खैहैं॥
दै बीरा आरती करौंगी व्यजनैं हाथ डुलैहैं।
तन मन धन न्योछावर करिहैं देखि देखि सुख पैहैं॥
औ जो कहुं घन बरसन लागे ताहि निवारन काज।
भींजत उतरि मेरे घर ऐहैं जहं सुख को सब साज॥
सुफल काम सब मेरो ह्वैहैं जो कछु चित्त बिचारेउ।
ऐसे ग्वालिनि करति मनोरथ रथ को दूरि निहारेउ॥
हरि आये बादरहू आये बरषन लाग्यो पानी।
ताके घर प्रभु उतरि पधारे भींजत आपुहि जानी॥

अति आनन्द भयो ताके चित मिलि प्रभु अति सुख दीनो।
'हरीचन्द' प्रभु अन्तरजामी सुफल मनोरथ कीनो ॥120॥

कान्हरा

यह निधि धर्महि तें पाई।
कीरति भैया तू बड़ भागिनि जो तेरे घर आई॥
जाको ध्यान धरत सनकादिक सम्भु समाधि बड़ाई।
सो निधि तजि बैकुंठ धाम को बरसाने में आई॥
जाते ब्रज बिहरत आनन्द भरि श्री गोकुल के राई।
सो निधि बार बार उर धरि कै 'हरीचन्द' बलि जाई ॥121॥

सारंग

रथ चढ़ि नन्दलाल पिय करत हैं बन फेरा।
आजु सखी लालन संग बिहरिबे की बेरा॥
रतन खचित सुन्दर रथ दिव्य बरन सोहै।
छतरी ध्वज कलस चक्र सुर नर गन मोहै॥
छाई घन घटा चारु आनन्द बरसावैं।
प्रमुदित घनश्याम तहां राग मलार गावैं॥
और कोऊ संग नाहिं हरि अरु ब्रज नारी।
हांकत रथ अपने हाथ राधा सुकुमारी॥
कुंज कुंज केलि करत डोलत हरि राई।
'हरीचन्द' जुगुल रूप लखि कै बलि जाई ॥122॥

यथा रुचि

रास रस ब्रज में प्रगट भयो।
फूली फिरत सबै ब्रज बनिता तन को ताप गयो॥
लीला रूप शील गुन सागर ब्रज आनन्द भयो।
'हरीचन्द' ब्रजचन्द पिया को आनन्द अतिहि दयो ॥123॥

श्याम संग श्यामा रंग भरी राजत।
अरध ओट घूंघट पट कीन्हे लखि रति मन्मथ लाजत ॥ध्रुव॥
नील निचोल मध्य मुख ससि की फैली घटा सुहाई।
झिलमिल ज्योति एक मिलि दीखति महलन अलि छबि छाई॥
श्यामहु बने श्याम रंग बागे अनुरागे पिय प्यारी।
'हरीचन्द' लखि जुगुल माधुरी सरबस ठान्यो बारी ॥124॥

असावरी

सुनत जनम वृषभानु लली को उठि धाई ब्रज नारी।
मंगल साज लिये कर कंजन पहिरे रंग रंग सारी॥
जो जैसे तैसे उठि धाईं सुनतहि स्वामिनि नामा।
भादों नदी सरिस उमगाईं चहुं दिसि ब्रज की बामा॥
बेनी सिथिल खसित कच झुमरन लुलित पीठ पर सोहै।
काजर नयन श्रवन तल तरवन देखत ही मन मोहै॥
झुम झुम मंडित मुख ससि सोभित वेंदी हीर जगाई।
अधर तमोल रंग सो भीने गावत सरस बधाई॥
आनन्द उमगे गात गात सब हिय अति अधिक उछाह।
सब घर पुत्र भयो धन बाढ़्यो सब ही के मनु ब्याह॥
लोचन तृपित दरस बिनु व्याकुल पगहू सों बढ़ि धावै।
चौंकि चौंकि चितवत चारहु दिसि मग मनु कंज बिछावै॥
आइ जुरीं वृषभानु भवन में मुख निरखत सुख पायो।
पद परि तरवा चूमि निरखि दृग जन्म सुफल करवायो॥
धनि दिन धनि निसि धनि छिन धनि पल धनि यह घरी सोहाई।
जामें तीन लोक की स्वामिनि भानु भवन प्रगटाई॥
नाचत गावत करत कुलाहल प्रेम उमगि अकुलानी।
हंसत प्रमोद करत मन फूलत बोलत कोकिल बानी॥
अति रस मत्त बदत नहिं काहू उछलित रस आवेसा।
अंचल खुलत नाहिं सुधि तन की भई एक ही भेसा॥
सब व्रज को श्रृंगार रूप रस भाग सुहाग सुहायो।
मोहन की सरबस सम्पति संग मिलि बरसाने आयो॥
को कहि सकै कहा कहि भापैं कवि पै नहिं कहि जाई।
जो सुख सोभा ता छन बाढ़ी अनुभव नयन लखाई॥
नन्द भवन तें बढ़ि सुख तेहि छन क्योहूं करि प्रगटायो।
'हरीचन्द' बल्लभ पद बल से केवल यह लखि पायो॥125॥

हमारे तन पावस बास कर्‌यो॥ध्रुव॥
बरसत नैन वारि सब ही छन दुख घन उमड़ि पर्‌यो॥
जुगनूं चमकि अंगार बिरह की श्वासा बान भर्‌यो।
'हरीचन्द' हिय करो मिलि सीतल ना तरु गात जर्‌यो॥126॥

हमारे भाई श्याम जू की जीति।
आरो सदा जहां पिय प्यारो यहै प्रीति की रीति॥
प्रेम होड़ से बहु नायक बनि खोई श्याम प्रतीति।
जदपि निरन्तर लखत रहत रुख तऊ नाम की भीति॥
होत अधीन भौंह फेरन में यहै यहां की गीति।
'हरीचन्द' याही सों सब सों सरस जुगल की भीति॥127॥

हम जो मनावत सो दिन आयो।
कीरति सुता प्रगट बरसाने गायो गीत बधायो॥
करि सिंगार चलीं घर घर तें मंगल साज सजायो।
हाथन कंचन थार बिराजै चौमुख दीप जगायो॥
आईं मिलि वृषभानु गोप के अति आनन्द उर भायो।
थापे दीने कलस धराये टीको सबन लगायो॥
गावत गोपी तन मन ओपी द्वार निसान बजायो।
'हरीचन्द' तेहि समय जाइ के बहुत बधाई पायो॥128॥

राव जू आजु बधाई दीजै।
तुम्हरे प्रकट भई श्री राधा कह्यौ हमारो कीजै॥
गोपिन को मनि गन आभूषन दै दै आशिष लीजै।
ग्वालन पाग पिछौरी दीजै यातें सब दुख छीजै॥
तुम्हरी सुता जगत ठकुरानी जायो मुख लखि लीजै।
'हरीचन्द' वृषभानु सुता के चरन कमल रस पीजै॥129॥

हमारी प्यारी सखियन की सिरताज।
भोरी गोरी पिय रस बोरी लाज सुहाग जहाज॥
ब्रज रानी कीरति सुख-दानी पूरनि जसुमति काज।
नन्द बबा की नयन पूतरी मोहन की सुख साज॥
भानु राय के घर की दीपक पालनि भक्त समाज।
'हरीचन्द' पिय सहित करौ नित अबिचल ब्रज में राज॥130॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका और मोहन चन्द्रिका में सन 1880 ई. में प्रकाशित]

प्रेम माधुरी

सन 1880 ई.

प्रेम माधुरी

दोहा

बार बार पिय आरसी मत देखहु चित लाय।
सुन्दर कोमल रूप में दीठ न कहुं लगि जाय॥
देखन देहुं न आरसी सुन्दर नन्दकुमार।
कहुं मोहित ह्वै रूप निज, मति मोहिं देहु बिसार॥

सवैया

राखत नैनन मैं हिय मैं भरि दूर भए छिन होत अचेत है।
सौतिन की कहै कौन कथा तसवीर हू सों सतराति सहेत है॥
लाग भरी अनुराग भरी 'हरीचन्द' सबै रस आपुहिं लेत है।
रूप सुधा इकली ही पियै पियहू को न आरसी देखन देत है॥1॥

कूकै लगीं कोइलैं कदम्बन पै बैठि फेरि
धोए धोए पात हिलि हिलि सरसै लगे।
बोलै लगे दादुर मयूर लगे नाचै फेरि
देखि कै संजोगी जन हिय हरसै लगे।
हरी भई भूमि सीरी पवन चलन लागी
लखि 'हरिचन्द' फेर प्रान तरसै लगे।
फेरि झूमि झूमि बरषा कि रितु आई फेरि
बादर निगोरे झुकि झुकि बरसै लगे॥2॥

पहिले ही जाय मिले गुन में श्रवन फेरि
रूप सुधा मधि कीनो नैनहू पयान है।
हंसनि नटनि चितवनि मुसुकानि सुघराई
रसिकाई मिलि मति पय पान है।

मोहि मोहि मोहन मई री मन मेरो भयो
'हरीचन्द' भेद ना परत कछु जान है।
कान्ह भए प्रानमय प्रान भए कान्हमय
हिय में न जानी परै कान्ह है कि प्रान है ॥3॥

करि कै अकेली मोहिं जात प्राननाथ अबै
कौन जानै आय कब फेर दुख हरिहौ।
औध को न काम कछू प्यारे घनश्याम बिना
आप कैं न जीहैं हम जो पै इतै धरिहौ।
'हरीचन्द' साथ नाथ लेन मैं न मोहिं कहा
लाभ निज जीअ मैं बताओं तो बिचरिहौ।
देह संग लेते तो टहलहू करत जातो
एहो प्रान प्यारे प्रान लाइ कहा करिहौ ॥4॥

गुरु जन बरजि रहे री बहु भांति मोहिं
संक तिनहूं की प्रेम रंग रांची मैं।
त्योंही बदनामी लई कुलटा कहाई हौं
कलंकिनिहु बनी ऐसी प्रेम लीक खांची मैं।

कहै 'हरिचन्द' सबै छोड़्यो प्रान प्यारे काज
यातैं जग झूठ्यौ रह्यो एक भई सांची मैं।
नेह के बजाय बाज छोड़ि सब लाज आज
घूंघट उघारि व्रजराज हेतु नाची मैं ॥5॥

बाढ़्यौ करै दिन ही छिन ही छिन कोटि उपाय करौ न बुझाई।
दाहत लाज समाज सुखै गुरु की भय नींद सबै संग लाई ॥
छीजत देह साथ में प्रानहु हा 'हरिचन्द' करौं का उपाई।
क्यों हू बुझे नहिं आंसू के नीरन लालन कैसी दवारि लगाई ॥6॥

छांड़ि कै मोहिं गए मथुरा कुबरी तहं जाय भई पटरानी।
जो सुधि लीनी तो जोग सिखायो भए 'हरीचन्द' अनूपम ज्ञानी ॥
गोप सों जो पै भए रजपूत लड़ौ किन जोड़ को आपुने जानी।
मारत हौ अबलागन को तुम याही मैं बीरता आय खुटानी ॥7॥

बाजी करै बंसी धुनि बाजि बाजि श्रवनन,
जोरा जोरी मुख छबि चितहि चुराए लेत।
हंसनि हंसावति जगत सो तिहारी मुरि,
मुरनि पियारी मन सब सों मुराए लेत।
'हरीचन्द' बोलनि चलनि बतरानि पीत,
पट फहरानि मिलि धीरज मिटाए लेत।
जुलफैं तिहारी लाज कुलफन तोरैं प्रान,
प्यारे नैन सैन प्रान संग ही लगाए लेत ॥8॥

हौं तौ तिहारे दिखाइवे के हित जागत ही रही नैन उजार सी।
आए न रात पिया 'हरीचन्द' लिए कर भोर लौं हौं रही भार सी ॥
है यह हीरन सों जड़ी रंगन तापै करी कछु चित्र चितार सी।
देखो जू लालन! कैसी बनी है नई यह सुन्दर कंचन आरसी ॥9॥

सोई तिया अरसाय कै सेज पै सो छबि लाल बिचारत ही रहे।
पोंछि रुमालन सों श्रम सीकर भौंरन कौं निरुवारत ही रहे ॥
त्यौं छबि देखिबे कौं मुख तैं अलकैं 'हरीचन्द जू' टारत ही रहे।
द्वैक घरी लौं जके से खरे वृषभानु कुमार निहारत ही रहे ॥10॥

बोल्यौ करै नूपुर श्रवन के निकट सदा,
पद तल लाल मन मेरे बिहरयो करै।
बाजी करै बंसी धुनि पूरि रोम रोम मुख,
मन मुसुकानि मन्द मनहि हंम्यो करै।
'हरीचन्द' चलनि मुरनि बतरानि चित,
छाई रहै छबि जुग दृगन भर्‍यौ करै।
प्रानहू ते प्यारौ रहै प्यारो तू सदाई तेरो,
पीरो पट सदा जिय बीच फहरयो करै ॥11॥

बृजवासी बियोगिन के घर मैं जग छांड़ि कै क्यौं जनमाई हमैं।
मिलिबो बड़ी दूर रह्यो 'हरीचन्द' दई इक नाम धराई हमैं ॥
जग के सगरे सुख सों ठगि कै सहिबे को यही है जिवाई हमैं।
केहि बैर सों हाय दई बिधिना दुख देखिबेही को बनाई हमैं ॥12॥

कहा कहौं प्यारे जू बियोग मैं तिहारे चित,
बिरह अनल लूक भरकि भरकि उठै।
कैसे कै बिताऊं दिन जोवन के हा हा काम,
कर लै कमान मोपै तरकि तरकि उठै।
भूलै नाहिं हंसनि तिहारी 'हरीचन्द' तैसी,
बांकी चितवनि हिय फरकि फरकि उठै।
बेधि बेधि उठत बिसीले नैन बान मेरे,
हिय मैं कंटीली भौंह करकि करकि उठै ॥13॥

कुबजा जग के कहा बाहर है नन्दलाल ने जा उर हाथ धर्‌यौ।
मथुरा कहा भूमि की भूमि नहीं जहं जाय कै प्यारे निवास कर्‌यौ।
'हरीचन्द न काहू को दोष कछू मिलिहैं सोई भाग मैं जो उतर्‌यो।
सबको जहां भोग मिल्यौ वहां हाय बियोग हमारे ही बांटे पर्‌यौ ॥14॥

रोकहिं जो तो अमंगल होय औ प्रेम नसे जो कहैं पिय जाइए।
जो कहैं जाहु न तौ प्रभुता जौ कछू न कहैं तो सनेह नसाइए।
जो 'हरीचन्द' कहैं तुमरे बिन जीहै न तो यह क्यौं पतिआइए।
तासौं पयान समै तुमरे हम का कहैं आपै हमें समझाइए ॥15॥

आजु सिंगार कै केलि के मन्दिर बैठी न साथ मैं कोऊ सहेली।
धाय कै चूमै कबौं प्रतिबिम्ब कबौं कहै आपुहि प्रेम पहेली।
अंक में आपुने आपै लगै 'हरीचन्द जू' सी करै आपु नवेली।
प्रीतम के सुख मैं प्रिय मैं भई आए तें लाल कै जान्यौ अकेली ॥16॥

सोई बने सब मंजुल कुंज अलीन की भीर जहां अति हेली।
साज अनेक सजे सुख के 'हरीचन्द जू' त्यों ही खरी हैं सहेली।
सोई नई रतियां रति की पिय सोई कहै ढिग प्रेम पहेली।
सोचत सो सुख सोई भई तिय आए तें लाल के जान्यौ अकेली ॥17॥

तब तौ बखानी निज बीरता प्रमानी कै कै
प्रेम के निबाह भारे गरब गरूरे हौ।
जान सों पिया कै कह्यो प्रथम पयान 'हरीचन्द'
चन्द अब बैठे कित दुरि दुरि दूरे हौ।
हाय प्राननाथ बिनु भोगत अनेक बिथा
खोई सुख आसा लागि अब लौं मजूरे हौ।

अजौ तन तजिकै न जाओ लजवाओ मोहिं
हा हा मेरे प्रान निरलज्ज तुम पूरे हौ ॥18॥

जा दिन लाल बजावत बेनु अचानक आय कढ़े मम द्वारे।
हौं रही ठाढ़ी अटा अपने लखि कै हंसे मो तन नन्द दुलारे।
लाजि कै भाजि गई 'हरिचन्द' हौं भौन के भीतर भीति के मारे।
ताही दिना तें चवाइनहूं मिलि हाय चवाय कै चौचन्द पारे ॥19॥

बृज में अब कौन कला बसिए बिनु बात ही चौगुनो चाव करैं।
अपराध बिना 'हरिचन्द जू' हाय चवाइनैं घात कुदाव करैं
पौन मों गौन करे हो लरी परैं हाय बड़ोई हियाव करैं।
जौ सपनेहुं मिलै नन्दलाल तो सौतुख मैं ये चवाव करैं ॥20॥

आजु कुंज मन्दिर मैं छके रंग दोऊ बैठे,
केलि करैं लाज छोड़ि रंग सों जहकि जहकि।
सखीजन कहत कहानी 'हरिचन्द' तहां
नेह भरी केकी कीर पिक की चहकि चहकि।
एक टक बदन निहारें बलिहार लै लै,
गाढ़े भुज भरि लेत नेह सों लहिक लहकि।
गरें लपटाय प्यारी बार बार चूमि मुख,
प्रेम भरि बातैं करैं मद सों बहकि बहकि ॥21॥

आजु कुंज मन्दिर अनन्द भरि बैठे श्याम,
श्यामा सग रंगन उमंग अनुरागे हैं।
घन घहरात बरसात होत जात ज्यौं ज्यौं,
त्यौंही त्यौं अधिक दोऊ प्रेम पुंज पागे हैं।
'हरिचन्द' अलकैं कपोल पैं सिमिटि रहीं,
बारि बुंद चूअत अतिहि नीके लागे हैं।
भीजि भीजि लपटि लपटि सतराइ दोऊ,
नील पीत मिलि भए एकै रंग बागे हैं ॥22॥

बृज के सब नांव धरैं मिलि ज्यौं ज्यौं बढ़ाइकै त्यौं दोऊ चाव करैं।
'हरीचन्द' हंसैं जितनो सबही तितनी दृढ़ दोऊ निभाव करैं।
सुनि कै चहुंघा चरचा रिसि सों परतच्छ ये प्रेम प्रभाव करैं।
इत दोऊ निसंक मिलैं बिहरैं उत चौगुनो लोग चवाव करैं ॥23॥

मिलि गांव के नांव धरौ सबही चहुंघा लखि चौगुनो चाव करौ।
सब भांति हमैं बदनाम करौ कढ़ि कोटिन कोटि कुदावं करौ।
'हरिचन्द' जू जीवन को फल पाय चुकीं अब लाख उपाय करौ।
'हम सोवत हैं' पियअंक निसंक चवाइनै आओ चवाव करौ ॥24॥

व्याकुल हौं तड़पौं बिनु पीतम कोऊ तौ नेकु दया उर लाओ।
प्यासी तजौं तन रूप सुधा बिनु पापिन पी को पपीहै पिआओ।
जीअ मैं हौस कहूं रहि जाय न हा 'हरीचन्द' दोऊ उठि धाओ।
आवै न आवै पियारो अरे कोऊ हाल नौ जाइ के मेरी सुनाओ ॥25॥

जानत हौं नहीं ऐसी सखी इन मोहन जैसी करी हम सों दई।
होत न आपुने पीअ पराए कबौं यह बोलनि सांची अरी भई।
हा हा कहा 'हरीचन्द' करौं विपरीत सबै बिधि नै हम सों ठई।
मोहन ह्वै निरमोही महा भए नेह बढ़ाय कै हाय दगा दई ॥26॥

जानि कै मोहन के निरमोहहि नाहक बैर बिसाहि बरें परी।
त्यौं 'हरिचन्द' बिगारि कै लोक सो बेद की लीक भलै निदरें परी।
आपुनि ही करनी को मिल्यो फल तासों सबै सहते ही सरे परी।
यामैं न और को दोष कछू सखि चूक हमारी हमारे गरें परी ॥27॥

नेह लगाय लुभाय लई पहिले बृज की सब ही सुकुमारियां।
बेनु बजाय बुलाय रमाय हंसाय खिलाय करी मनुहारियां।
सो 'हरीचन्द' जुदा ह्वै बसे बधि कै छलसों व्रज बाल बिचारियां।
वाह जू प्रेम निबाह्यो भलें बलिहारियां लालन वे बलिहारियां ॥28॥

मेरी गलीन न आइए लालन यासों सबै तुमहीं लखि जाइहै।
प्रेम तो सोई छिप्यौ जो रहै प्रगटै रसहू सब भांति नसाइहै।
आइहौं हौंही उतै 'हरीचन्द' मनोरथ आपकों कुंज पुराइहै।
अंक न वाट में लाइए जू कोउ देखि जौ लैहै कलंक जगाइहै ॥29॥

मारग प्रेम को को समुझै 'हरीचन्द' यथारथ होत यथा है।
लाभ कछू न पुकारन में बदनाम ही होन की सारी कथा है।
जानत है जिय मेरो भली बिधि और उपाय सबै बिरथा है।
वावरे हैं बृज के सगरे मोहिं नाहक पूछत कौन बिथा है ॥30॥

जिय पै जु होइ अधिकार तो बिचार कीजै
लोक लाज भलो बुरो भले निरधारिए।
नैन श्रौन कर पर सबै पर बस भए
उतै चलि जात इन्हैं कैसे के संभारिए।
'हरीचन्द' भई सब भांति सों पराई हम
इन्हैं ज्ञान कहि कहो कैसे कै निबारिए।
मन मैं रहै जो ताहि दीजिए बिसारि मन
आपै बसै जामैं ताहि कैसे कै बिसारिए ॥31॥

होते न लाल कठोर इते जु पै होते कहूं तुमहूं बरसानियां।
गोकुल गांव के लोग कठोर करैं छत हीय मैं मारि निसानियां।
यौं तरसावत हौ श्रबलागन को मुख देखिबे को दधि दानियां।
दीनता की हमरे तुमरे निरदैपनहू की चलैगी कहानिया ॥32॥

बेनी सी बखानै कबि ब्याली काली काली आली
तिन सबहू कों प्रतिपाली अहा काली है।
ताही सों उताल नन्दलाल बाल कूदि जल
नाथ्यौ जाय ताहि चाहि उपमा न चाली है।
तहां 'हरीचन्द' सबै गांव के तमासे लगे
तिन के अछत तुहू कीनी खूब ख्याली है।
ज्योंहि ज्यों नचत प्यारी राधे तेरे दृग दोय
त्यौं ही त्यौं नचत फन पर बनमाली है ॥33॥

नैन लाल कुसुम पलास से रहे हैं फूलि
फूल माल गरें बन झालरि सी लाई है।
भंवर गुंजार हरि नाम जो उचार तिमि
कोकिला सों कुहुकि बियोग राग गाई है।
'हरीचन्द' तजि पतझार घर बार सबै
बौरी बनि दौरि चारु पौन ऐसी धाई है।
तेरे बिछुरे ते प्रान कन्त कै हिमन्त अन्त
तेरी प्रेम जोगिनी बसन्त बनि आई है ॥34॥

पीरो तन पर्‍यो फूली सरसां सरस सोई
मन मुरझानो पतझार मनौ लाई है।

सीरी स्वांस त्रिबिध समीर सी बहति सदा
अंखियां बरसि मधु झरि सी लगाई है।
'हरीचन्द' फूले मन मैन के मसूसन सो
ताही सों रसाल बाल बदि कै बौराई है।
तेरे बिछुरे तें प्रान कन्त कै हिमन्त अन्त
तेरी प्रेम जोगिनी बसन्त बनि आई है ॥35॥

एरी प्रानप्यारी बिद देखे मुख तेरो मेरे
जिय मैं बिरह घटा घहरि घहरि उठै।
त्योंही 'हरिचन्द' सुधि भूलत न क्योंहू तेरो
लांबो केस रैन दिन छहरि छहरि उठै॥
गड़ि गड़ि उठत कंटीले कुच कोर तेरी
सारी सों लहरदार लहरि लहरि उठै।
सालि सालि जात आधे आधे नैन बान तेरे
घूंघट की फहरानि फहरि फहरि उठै ॥36॥

बैठे सबै गुरु लोग जहां तहां आई बधू लखि सास भई खरी।
देन उराहनो लागी तबै निसि को अति भोरी न जानत रीत री।
ढीठ तिहारो बड़ो 'हरीचन्द' न देखत मेरी सु ऐसी दसा करी।
आंचर दीनो सखी मुख मैं कहि सारी फटी तो बनाइ है दूसरी ॥37॥

प्रानपियारे तिहारे लिए सखि बैठे हैं देर सों मालती के तर।
तू रही बातैं बनाय बनाय मिलै न बृथा गहिकै कर सों कर।
तोहि घरी छिन बीतत है 'हरिचन्द' उतै जुग सो पलहू भर।
तेरी तो हांसी उतै नहिं धीरज नौ घरी भद्रा घरी में जरै घर ॥38॥

दीनदयाल कहाइ कै धाइ कै दीनन सों क्यों सनेह बढ़ायो।
त्यौं 'हरिचन्द' जू बेदन मैं करुनानिधि नाम कहो क्यौं गनायो।
एती रुखाई न चाहिए तापैं कृपा करिकै जेहि कों अपनायो।
ऐसो ही जो पै सुभाव रह्यौ तो गरीब नेवाज क्यौं नाम धरायो ॥39॥

क्यों इन कोमल गोल कपोलन देखि गुलाब को फूल लजायो।
त्यौं 'हरिचन्द' जू पंकज के दल सो सुकुमार सबै अंग भायो।
अमृत से जुग ओंठ लसे नव पल्लव सो कर क्यों है सुहायो।
पाहन सो मन होते सबै अंग कोमल क्यौं करतार बनायो ॥40॥

आओ सबै जुरि कै बृज गांव के देखन को जे रहे अकुलात हैं।
चार चबाइनै लै दुरबीनन धाओ न आज तमासे लखात हैं।
सास जेठानी सखी संग की 'हरिचन्द' करौ मिलि भेद की बात हैं।
घूंघट टारि निवारि भए पिय कौं हम आजु निहारन जात हैं ॥41॥

एक ही गांव में बास सदा घर पास इहौ नहिं जानती हैं।
पुनि पांचएं सातएं आवत जात की आस न चित्त में आनती हैं।
हम कौन उपाय करैं इनको 'हरिचन्द' महा हठ ठानती हैं।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहिं मानती हैं ॥42॥

यह संग मैं लागियै डोलैं सदा बिन देखे न धीरज आनती हैं।
छिनहू जो बियोग परै 'हरीचन्द' तौ चला प्रलै की सु ठानती हैं।
बरूनी में थिरैं न झपैं उझपैं पल मैं न समाइबो जानती हैं।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहीं मानती हैं ॥43॥

व्यापक ब्रह्म सबै थल पूरन हैं हमहूं पहिचानती हैं।
पै बिना नन्दलाल बिहाल सदा 'हरिचन्द' न ज्ञानहि ठानती हैं।
तुम ऊधौ यहै कहियो उन सों हम और कछू नहिं जानती हैं।
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अंखियां दुखियां नहीं मानती हैं ॥44॥

जिनको लरकाई सों संग कियो अब सोऊ न साथहि साजती हैं।
'हरिचन्द' जू हानि हमैं बदनाम चवाव घने उपराजती हैं।
हम हाय कलंकिनि ऐसी भई सखियां लखि कै मोंहि भाजती हैं।
निसि बासर संग मैं जे रहतीं मुख बोलिबे सों अब लाजती हैं ॥45॥

पहिले बहुत भांति भरोसे दियो अब ही हम लाइ मिलावती हैं।
'हरिचन्द' भरोसे रही उनके सखियां जे हमारी कहावती हैं।
अब वेई जुदा ह्वै रही हम सों उल्टीं मिलि कै समुझावती हैं।
पहिले तो लगांइ कै आग अरी जल को अब आपुहि धावती हैं ॥46॥

सब आस तो छूटी पिया मिलबे की न जानैं मनोरथ कौन सजैं।
'हरिचन्द' जू दुख अनेक सहैं पै अड़े हैं टरैं न कहूं कौ भजैं।
सब सों निरसंक ह्वै बैठि रहैं सो निरादर हू सों कछू न लजैं।
नहिं जान परै कछु या तन को कहि मोह तें पापी न प्रान तजैं ॥47॥

मोहन सों जबै नैन लगे तब तो मिलिकै समुझावन धाई।
प्रीति की रीति औ नीति कही मिलिवे की अनेकन बात सुनाई।
वेऊ दगा दै जुदा ह्वै गई 'हरिचन्द' जू एकहू काम न आई।
हाय मैं कौन उपाय करौं सखियां अपुनी ह्वै गईं जु पराई ॥48॥

हाय दशा यह कासों कहौं कोउ नाहिं सुनै जौ करै हूं निहोरन।
कोऊ बचावनहारो नहीं 'हरिचन्द' जू यों तो हितू हैं करोरन।
सो सुधि कै गिरिधारन की अब धाइ कै दूर करौ इन चोरन।
प्यारे तिहारे निवास की ठौर कों बोरत हैं अंसुआ बरजोरन ॥49॥

हित की हम सों सब बात कहौ सुख-मूल सबै बतरावती हौ।
पै पिया 'हरीचन्द' सो नैन लगे केहि हेत ये बातैं बनावती हौ।
यहां कौन जो मानै तिहारो कह्यो हमें बातन क्यों बहरावती हौ।
सजनी मन पास नहीं हमरे तुम कौन को का समुझावती हौ ॥50॥

जब सों हम नेह कियो उन सों तब सों तुम बातैं सुनावती हौ।
हम औरन के बस में हैं परी 'हरिचन्द' कहा समुझावती हौ।
कोउ आपुन भूलिहै बूझहु तौ तुम क्यों इतनी बतरावती हौ।
इन नैनन को सखी दोष सबै हमैं झूठहि दोष लगावती हौ ॥51॥

जिनके हित त्यागि कै लोक की लाज कों संगही संग में फेरो कियो।
'हरिचन्द' जू त्यौं मग आवत जात में साथ घरी घरी घेरो कियो।
जिनके हित मैं बदनाम भई तिन नेकु कह्यौ नहिं मेरो कियो।
हमें ब्याकुल छोड़िकै हाथ सखी कोउ और के जाइ बसेरौ कियो ॥52॥

पिय रूसिबे लायक होय जो रूसनो वाही सों चाहिए मान किये।
'हरिचन्द' तौ दास साद बिन मोल कों बोलै सदा रुख तेरो लिये।
रहै तेरे सुखै सों सुखी नित ही मुख तेरो ही प्यारी बिलोकि जिये।
इतने हू पै जानै न क्यों तू रहै सदा पीय सो भौंह तनेनी किये ॥53॥

पहिले बिनु जाने पिछानें बिना मिलीं धाइ कै आगे बिचारे बिना।
अपुने सों जुदा ह्वै गईं तुरतै जिन लाभ औ हानि संभारे बिना।
'हरिचन्द' जू दोष सबै इनको जो कियो सब पूछे हमारे बिना।
बरिआई लखो इनकी उलटी अब रोवहिं आपु निहारे बिना ॥54॥

आय कै जगत बीच काहू सों न करै बैर
कोऊ कछू काम करै इच्छा जौ न जोई की।
ब्राह्मण की क्षत्रिन की बैसनि की सूद्रन की
अन्त्यज मलेछ की न ग्वाल की न भोई की।
भले की बुरे की 'हरिचन्द' से पतितहू की
थोरे की बहुत की न एक की न दोई की।
चाहे जो चुनिन्दा भयो जग बीच मेरे मन
तौ न तू कबहुं कहूं निन्दा करु कोई की ॥55॥

मैं वृषभानपुरा की निवासिनि मेरी रहै बृज बीथिन भांवरी।
एक संदेशो कहौं तुम सों पै सुनों जौ करो कछू ताको उपावरी।
जे 'हरिचन्द' जू कुंजन मैं मिलि जाहि करो लखि कै तुम बावरी।
बूझि है वाने दया करिकै कहिए परसों कब होयगी रावरी ॥56॥

केहि पाप सों पापी न प्रान चलैं अटके कित कौन बिचार लयो।
नहिं जानि परै 'हरिचन्द' कछू बिधि ने हमसों हठ कौन ठयो।
निसि आजहू की गई हाय बिहाय बिना पिय कैसे न जीव गयो।
हत भागिनि आंखिन कों नित के दुख देखिबे कों फिर भोर भयो ॥57॥

हम तो सब भांति तिहारी भई तुम्हैं छांड़ि न और सों नेह करौं।
'हरिचन्द' जू छांड़्यौ सबै कछु एक तिहारोई ध्यान सदा ही धरौं।
अपने को परायो बनाइ कै लाजहु छांड़ि खरी बिरहागि जरौं।
सब ही सहौं नाहिं कहौं कछु पै तुव लेखे नहीं या परेखे मरौं ॥58॥

आजु लौं जौ न मिले तो कहा हम तो तुमरे सब भांति कहावैं।
मेरो उराहनो है कछु नाहिं सबै फल आपुने भाग को पावैं।
जो 'हरिचन्द' भई सो भई अब प्रान चले रहैं तासों सुनावैं।
प्यारे जू है जग की यह रीति बिदा की समै सब कंठ लगावैं ॥59॥

जान दे री जान दे बिचार कुल कानहू को
गावन दे मेरे कुलटापन के गाथ को।
मैं तो रही भूलि बिन बात को बिचारे जौन
प्रेम को बिगारै छांडु ऐसे सब साथ को।

देखो 'हरिचन्द' कौन लाभ पायो जामैं पछि-,
ताय रहि गई धन पाय खोयो हाथ को।
जरौ ऐसी लाज आवैं कौन काज जानै आज
लखन न दीनों भरि नैन प्राननाथ को ॥60॥

सदा व्याकुल ही रहैं आपु बिना इनको हू कछू कहि जाइए तो।
इक बारहू तोहिं न देख्यौ कभू तिनको मुखचन्द दिखाइए तो।
'हरिचन्द' जू ये अंखियां नित की हैं बियोगी इन्हें समुझाइए तो।
दुखियान को प्रीतम प्यारे कबौं बहराइ कै धीर धराइए तो ॥61॥

रोवैं सदा नित की दुखिया बनि ये अंखियां जिहि द्यौस सों लागी।
रूप दिखाओ इन्हैं कबहूं 'हरिचन्द' जू जानि महा अनुरागी।
मानिहैं औरन सों नहिं ये तुव रंग रंगी कुल लाजहि त्यागी।
आंसुन को अपने अंचरान सों लालन पोंछि करौ बड़ भागी ॥62॥

घर बाहर केन को काम कछू नहिं को यह रार निवारि सकै।
'हरिचन्द जू' जो बिगरी बदिकै तिन्हैं कौन है जौन संवारि सकै।
समुझाइ प्रबोधि कै नीति-कथा इन्हैं धीरज कोऊ न पारि सकै।
तुम्हरे बिनु लालन कौन है जो यह प्रेम के आंसू निवारि सकै ॥63॥

संग मैं निसि बासर ही रहते जिनते कछु बातैं न मैंने छिपाई।
जे हितकारिन मेरी हुतीं 'हरीचन्द जू' होय गई सो पराई।
सो सब नेह गयो कित को मिलिबे की न एकहू बात बताई।
और चवाव करैं उलटो हरि हाय ये एकहू काम न आई ॥64॥

हौं कुलटा हौं कलंकिनी हौं हमने सब छांड़ि दयो कहा खोलौ।
आछी रहौ अपने घर में तुम क्यों यहां आइ करे जाहि छोलौ।
लागि न जाय कलंक तुम्हैं कहूं दूर रहौ संग लागि न डोलौ।
बावरी हौं जो भई सजनी तो हटो हम सों मति आइ कै बोलौ ॥65॥

आयो सखी सावन बिदेश मन भावन जू
कैसे करि मेरो चित्त हाय धीर धारिहै।
ऐहै कौन झूलन हिंडोरे बैठि संग मेरे
कौन मनुहारि करि भुजा कंठ पारिहै।

'हरिचन्द' भींजत बचैहै कौन भींजि आप
कौन उर लाइ काम ताप निरवारिहै।
मान समै पग परि कौन समुझैहै हाय
कौन मेरी प्रानप्यारी कहि कै पुकारिहै ॥66॥

घेरि घेरि घन आए छाय रहे चहुं ओर
कौन हेत प्राननाथ सुरति बिसारी है।
दामिनी दमक जैसी जुगनूं चमक तैसी
नभ मैं बिशाल बग पंगति संवारी है।
ऐसी समै 'हरिचन्द' धीर न धरत नेकु
बिरह बिथा तें होत ब्याकुल पियारी है।
प्रीतम पियारे नन्दलाल बिनु हाय यह
सावन की रात किधौं द्रौपदी की सारी है ॥67॥

लै मन फेरिबो जानौ नहीं बलि नेह निबाह कियो नहिं आवत।
हेरि कै फेरि मुखै 'हरिचन्द जू' देखनहू को हमैं तरसावत।
प्रीत पपीहन कों घन सांवरे पानिप रूप कबौं न पिआवत।
जानौं न नेक बिथा पर की बलिहारी तऊ हौ सुजान कहावत ॥68॥

आई गुरु लोग संग न्यौते ब्रज गांव नई
दुलही सुहाई शोभा अंगन सनी रही।
पूछे मन मोहन बतायो सखियन यह
सोई राधा प्यारी बृषभानु की जनी रही।
'हरिचन्द' पास जाय प्यारो ललचायो दीठ
लाज की धंसी सो मानो हीर की अनी रही।
देखो अनदेखो देख्यो आधो मुख हाय तऊ
आधो मुख देखिबे की हौस ही बनी रही ॥69॥

भूली सी भ्रमी सी चौंकी जकी सी थकी सी गोपी
दुखी सी रहत कछू नाहीं सुधि देह की।
मोही सी लुभाई कछू मोदक सों खाए सदा
बिसरी सी रहै नेक खबर न गेह की।
रिस भरी रहे कबौं फूलि न समात अंग
हंसि हंसि कहै बात अधिक उमेह की।

पूछे ते खिसानी होय उतर न आवै ताहि
जानी हम जानी है निसानी या सनेह की ॥70॥

आई प्रात सोवत जगाई मैं सखीन साथ
ननद बिलोकिबे को करै अभिलाख है।
'हरीचन्द' हंसि हंसि पोंछै मुख अंचल सों
आरसी लै दूजी ठाढ़ी कहै कछू माख है।
एक मोती बीनै एक गूथै बेनी एक हंसे
सांसत हमारी एक करै मिल लाख है।
बसन के दाग धोवै नख छत एक टोवै
चूर लै चुरी को खेलै एक जूस ताख है ॥71॥

आई आज कित अकुलाई अलसाई प्रात
रीसै मति पूछे बात रंग कित ढरिगो।
सोने से या गात छूवै सोनो भयो आप कै वा
आतप प्रभात ही को प्रगट पसरिगो।
'हरीचन्द' सौतिन की मुख दुति छीनी कै वा
आपनो बरन कहुं पाय धाय ररिगो।
नील पट तेरो आज औरै रंग भयो काहे
मेरे जान बिछुरि पिया तें पीरो परिगो ॥72॥

कैसे सखी बसिए ससुरारि मैं लाज को लेइबो क्यों सहि जावै।
ऐसी सहेलिनैं ऊधमी हैं नख दन्त के दाग लै कोऊ गनावै।
त्यों 'हरिचन्द' खरी ढिग सास के ढाठ जिठानी पिया को हंसावै।
ओढ़ि कै चादर रात के सेज की सामने ही ननदी चलि आवै ॥73॥

हम तो तिहारे सब भांति सों कहावैं सदा
हम सों दुराव कौन सो है सो सुनाइ दै।
द्वार पै खड़े हैं बड़ी देर सों अड़े हैं यह
आशा है हमारी ताहि नेक तो पुराइ दै।
'हरीचन्द' जोरि का बिनती बखानै यही
देखि मेरी ओर नेक मंद मुसुकाइ दै।
एरी प्रान प्यारी बार बार बलिहारी नेक
घूंघट उघारि मोहिं बदन दिखाइ दै ॥74॥

सास जेठानिन सों दबती रहै लीने रहै रुख त्यौं ननदी को।
दासिन सों सतरात नहीं 'हरीचन्द' करै सनमान सखी को।
पीय कों दच्छिन जानि न दूसत चौगुनो चाउ बढ़ै या लली को।
सौतिनहू को असीसै सुहाग करै कर आपने सेंदुर टीको ॥75॥

कहो कौन मिलाप की बातैं कहै कही औरन की तो कछू न पतीजिए।
चित चाहै जहां बसिए मिलिए न कभू जिय आवै सोई सोई कीजिए।
अब प्रान चले चहैं तासों कहैं 'हरीचन्द' की सो बिनती सुनि लीजिए।
भरि नैन हमैं इक बेरहू तो अपुनो मुख मोहन जोहन दीजिए ॥76॥

लाई केलि मन्दिर तमासा को बताइ छल
बाला ससि सूर के कला पैं किए दावा सी।
धाइ ताहि गहन चहत 'हरिचन्द जू' के
घूमि रही घर में चहूंघा करि कावा सी।
धोखा दै कै अंकम भरत अकुलानी अति
चंचल चखन सों लखानी मृग छावा सी।
आहि करि सिसकि सकोरि तन मोहि पियै
कर तें छटकि छूटी छलकि छलावा सी ॥77॥

तू रंगी रंग पिया के सखी कछू बात ने तेरी लखाइ परी है।
जद्यपि हौं नित पास रहौं तऊ मेरी यहै मति सोच भरी है।
जानी अहो 'हरिचन्द' अबै यह प्रीत प्रतीत तिहारी खरी है।
श्याम बसै उर मैं नित ताही सों पीतहू कंचुकी होत हरी है ॥78॥

जाहु जू जाहु जू दूर हटो सो बकै बिन बात ही को अब यासों।
वा छलिया नै बनाय कै खासो पठायो है याहि न जानै कहा सों।
काहि करै उपदेस खरो 'हरिचन्द' कहै कित जाइ कै तासों।
सो बनि पंडित ज्ञान सिखावत कूबरीहू नहिं ऊबरी जासों ॥79॥

सिसुताई अजौं न गई तन तें तऊ जोबन जोति बटौरे लगी।
सुनि कै चरचा 'हरिचन्द' की कान कछूक दै भौंह मरोरै लगी।
बचि सासु जेठानिन सों पिय तें दुरि घूंघट में दृग जोरै लगी।
दुलही उलही सब अंगन तें दिन द्वै तें पियूष निचोरै लगी ॥80॥

इत उत जग में दिवानी सी फिरत रही
कौन बदनामी जौन सिर पै लई नहीं।
त्रास गुरु लोगन की आस कै अनेक सही
कब बहु भांतिन के ताप सों तई नहीं।
'हरिचन्द' गिरि बन कुंज जहां जहां सुन्यौ
तहां तहां कब उठि धाइ कै गई नहीं।
होनी अनहोनी कीनी सब ही तिहारे हेतु
तऊ प्रान प्यारे भेंट तुम सों भई नहीं ॥81॥

एक बेर नैंन भरि देखैं जाहि मोहै तौन
माच्यौ व्रज गांव ठांव ठांव मैं कहर है।
संग लगी डोलैं कोऊ घर ही कराहैं परी
छूट्यो खान पान रैन चैन बन घर है।
'हरिचन्द' जहां सुनो तहां चर्चा है यही।
इक प्रेम डोर नाथ्यो सगरो शहर है।
या मैं संदेह कछू दैया हौं पुकारे कहौं
भैया की सौं मैया री कन्हैया जादूगर है ॥82॥

जौन गली कढ़े तहां मोहे नर नारी सब
भीरन के मारे बन्द होइ जात राह है।
कसी सी थकी सी सबै इत उत ठाढ़ी रहैं
घायल सी घूमैं केती किए हिए चाह हैं।
'हरीचन्द' जासों जोई कहै तौन सोई करै
बरबस तजै सब पतिब्रत राह है।
यामैं न संदेह कछू सहजाहि मोहै मन
सांवरो सलोना जानैं टोना खामखाह है ॥83॥

सुखद समीर रूखी ह्वै कै चलन लागी
घटि चली रैन कछु सिसिर हिमंत की।
फूले लागे फूल फेरि बौर बन आम लागे
कोकिलै कुहूकै लागीं माती मदमन्त की।
'हरीचन्द' काम की दुहाई सौ फिरन लागी
आवै लागी छन छन सुधि प्यारे कन्त की।
जानी परै आयु बिरहीन की सिरानी अब
आयो चहैं रातैं फेर दुखद बसन्त की ॥84॥

बन बन आग की लगाइ कै पलास फूले
सरसों गुलाब गुललाला कचनारो हाय।
आइ गयो सिर पै चढ़ाय मैन बान निज
बिरहिन दौरि दौरि प्रानन सम्हारो हाय।
'हरीचन्द' कोइलैं कुहूकि फिरैं बन बन
बाजै लाग्यौ जग फेरि काम को नगारो हाय।
दूर प्रान प्यारो काको लीजिए सहारो अब
आयो फेरि सिर पै बसन्त बजमारो हाय ॥85॥

रूप दिखाइ कै मोल लियो मन बाल गुड़ी बहु रंगन जोरी।
चाहत मांझो दियो 'हरीचन्द' जू लै अपने गुन की रस डोरी।
फेरि कै नैन परे तन पै बदनामी की तापै लगाइ पुंछोरी।
प्रीति की चंग उमंग चढ़ाय कै सो हरि हाय बढ़ाय कै तोरी ॥86॥

जानत ही नहिं हौं जग में किहिं कों
सबरे मिलि भाखत हैं सुख।
चौंकत चैन को नाम सुने सपनेहू
न जानत भोगन को रुख।
ऐसन सों 'हरिचन्द' जू दूर ही
बैठनो का लखनो न भलो मुख।
मो दुखिया के न पास रहौ उड़ि कै
न लगै तुमहू को कहूं दुख ॥87॥

गरजे घन दौरि रहैं लपटाइ
भुजा भरि कै सुख पागी रहैं।
'हरिचन्द' जू भींजि रहैं हिय में
मिलि पौन चलें मद जागी रहैं।
नभ दामिनी के दमके सतराइ
छिपी पिय अंग सुहागी रहैं।
बड़ भागिनी वेई अहैं बरसात मैं
जे पियं कंठ सों लागी रहैं ॥88॥

ऊधो जू सूधो गहो वह मारग
ज्ञान की तेरे जहां गुदरी है।

कोऊ नहीं सिख मानिहै ह्यां इक
श्याम की प्रीति प्रतीति खरी है।
ये बृजवाला सबै इक सी
'हरीचन्द' जू मंडली ही बिगरी है।
एक जौ होय जो ज्ञान सिखाइए
कूप ही में यहां भांग परी है ॥89॥

महाकुंज पुंजन में मिलि कै बिहार कीनि
तहां बांधि आसन समाधि समुझावै जिनि।
जौन अंग लाग्यौ पिया अंगन में बार बार
तापै कूर धूर को रमाइबो बतावै जिनि।
'हरिचन्द' जाही चख नित ही बिलोके श्याम
ताहि मूंद योग को आयोग ध्यान लावै जिनि।
जाही कान सुनी प्यार हरि की मधुर बातें
हाहा ऊधो ताही कान अलख सुनावै जिनि ॥90॥

कौन कहे इत आइए लालन
पावस में तो दया उर लीजिए।
को हम हैं कहा जोर हमारो है
क्यों 'हरिचन्द' बृथा हठ कीजिए।
जो जिय मैं रुचै भेंटिए ताहि
दया करि कै तेहि को सुख दीजिए।
कोरि ही कोरी भली हम हैं पिय
भींजिए जू उनके रस भींजिए ॥91॥

सखि आयो बसन्त रितून को कन्त
चहूं दिसि फूलि रही सरसों।
बर सीतल मन्द सुगन्ध समीर
सतावन हार भयो गर सों।
अब सुन्दर सांवरो नन्दकिसोर
कहैं 'हरिचन्द' गयो घर सों।
परसों को बिताय दियो बरसों
तरसों कब पायं पिया परसों ॥92॥

आजु केलि मन्दिर से निकसि नेवली ठाढ़ी
भौंर चारों ओर रहे गन्ध लोभि बार के।
नैन अलसाने घूमैं पटहु परे हैं भू मैं
उर में प्रगट चिह्न पिव कंठहार के।
'हरिचन्द' सखिन सों केलि की कहानी कहै
रस में मसूसी रही आलस निवार के।
सांचे में खरी सी परी सीसी उतरी सी खरी
बाजूबन्द बांधै बाजू पकरि किवार के ॥93॥

साज्यौ साज गांव मिलि तीज के हिंडोरना को
तानि पैं बितान खासो फरस बिछायो री।
आवै मिलि गोपी तापैं भींजि झुंड काम
छाप सी लगावैं गावैं गीत मन-भायो री।
मोहिं जान पाछे परी देरी तै दया कै
'हरीचन्द' अंक लैकै लाल छिपि पहुंचायो री।
जानि गई ताहू पैं चवाइनै गजब देखे
पायं बिनु पंक के कलंक मोहिं लायो री ॥94॥

खोरि सांकरी मैं आजु छिपि कै बिहारी लाल
तरु पै बिराजे छल जिय अति कीनो है।
ग्वाल बाल साथ केहू इत उत घाटिन में
छिपे 'हरिचन्द' दान हेतु चित दीनो है।
ताही समैं गोपिन बिलोकि कूदि धाए सब
ऊधम मचायो दूध दधि घृत छीनो है।
दही जो गिरायो सो तो फेरहू जमाय लैहैं
मन कहां पैहैं दान मिस जौन लीनो है ॥95॥

लाज समाज निवारि सबै प्रन प्रेम को प्यारे पसारन दीजिए।
जानन दीजिए लोगन कों कुलटा करि मोहि पुकारन दीजिए।
त्यों 'हरीचन्द' सबै भय टारि कै लालन घूंघट टारन दीजिए।
छांड़ि संकोचन चन्दमुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिए ॥96॥

पूरन पियूष प्रेम आसव छकी हौं रोम
रोम रस भीन्यौ सुधि भूली गेह गात की।

लोक परलोक छांड़ि लाज सों बदन मोड़ि
उघरि नची हौं तजि संक तात मात की।
'हरीचन्द' एतेहू पैं दरस दिखावै क्यों न
तरसत रैन दिना प्यासे प्रान पातकी।
एरे बृजनन्द तेरे मुख की चकोरी हूं मैं
एरे घनश्याम तेरे रूप की ही चातकी ॥97॥

छांड़ि कुल बेद तेरी चेरी भई चाह भरी
गुरुजन परिजन लोक लाज नासी हौं।
चातकी तृषित तुव रूप सुधा हेत नित
पल पल दुसह बियोग दुःख गांसी हौं।
'हरीचन्द' एक व्रत प्रेम ही को लीनौ
रूप की तिहारे ब्रज भूप हौं उपासी हौं।
ज्याय लै रे प्रानन बचाय लै लगाय कंठ
एरे नन्दलाल तेरी मोल लई दासी हौं ॥98॥

तरसत स्रौन बिना सुने मीठे बैन तेरे
क्यौं न तिन मांहि सुधा बचन सुनाइ जाय।
तेरे बिन मिले भाइ झांझरि सी देह प्रान।
राखि लै रें मेरो धाइ कंठ लपटाइ जाय।
'हरीचन्द' बहुत भई न सहि जाय अब
हा हा निरमोही मेरे प्रानन बचाइ जाय।
प्रीति निरवाहि दया जिय मैं बसाय आय
एरे निरदई नेकु दरस दिखाय जाय ॥99॥

दौरि उठि प्यारी गरलावैं गिरधारी किन
ऐसे पियहू सों किन बोलै कलबादिनी।
देखु 'हरिचन्द' ठीक दुपहर तेरे हेतु
आयो चलि दूर सों पियारो री प्रमादनी।
तेरे गृह चलत न दुख सुख जान गिन्यौ
सीतल बनाउ ताहि सुरत सवादनी।
मखमल भूभल भो लूह सीरी पास
दूरी भई तेरे यह धूप भई चांदनी ॥100॥

हे हरि जू बिछुरे तुम्हरें नहिं धारि सकी सो कोऊ बिधि धीरहिं।
आखिर प्रान तजे दुःख सों न संभारि सकी वा बियोग की पीरहिं।
पै 'हरिचन्द' महा कलकानि कहानी सुनाऊं कहा बलबीरहिं ॥
जानि महा गुन रूप की रासि न प्रान तज्यो चहैं वाके सरीरहिं ॥101॥

साजि सेज रंग के महल मैं उमंग भरी
पिय गर लागी काम कसक मिटाएं लेत।
ठानि बिपरीत पूरी मैन के मसूसन सों
सुरत समर जयपत्रहिं लिखाएं लेत।
'हरिचन्द' उझकि उझकि रति गाढ़ी करि
जोम भरि पियहि झकोरन हराएं लेत।
याद करि पी की सब निरदय घातें आजु
प्रथम समागम को बदलो चुकाएं लेत ॥102॥

कबहुंक बारिन में कुंजन निवारिन में
इत उत बेलिन कों चौंकि चितवन है।
कासन कपासन पै फिरत उदास कबौं
पल्लवन बैठि बैठि दिन रितवत है॥
'हरीचन्द' बागन कछारन पहारन मैं
जित तित परयौ गुनि नेह हितवत है।
सूखे सूखे फूलन पै तरुगन मूलन पै
मालती बिरह भौंरि दिन बितवत है ॥103॥

काले परे कोस चलि चलि थक गए पाय
सुख के कसाले परे ताले परे नस के।
रोय रोय नैनन में हाले परे जाले परे
मदन के पाले परे प्रान पर बस के॥
'हरीचन्द' अंगहू हवाले परे रोगन के
सोगन के भाले परे तन बल खसके।
पगन छाले परे नांघिबे को नाले परे
तऊ लाल लाले परे रावरे दरस के ॥104॥

थाकी गति अंगन की मति पर गई मन्द
सूख झांझरी सी ह्वै कै देह लागी पियरान।

बाबरी सी बुद्धि भई हंसी काहू छीन लई
सुख के समाज जित तित लागे दूर जान ॥
'हरीचन्द' रावरे बिरह जग दुखमय
भयो कछू और होनहार लागे दिखरान।
नैन कुम्हिलान लागे बैनहु अथान लागे
आओ प्राननाथ अब प्रान लागे मुरझान ॥105॥

लाई लिवाय तमासो बसाय भुराय कै दूतिका कुंजन मांहीं।
धाय गही 'हरिचन्द' जबै न छपी वह चन्दमुखी परछांहीं।
अंक में लेत छल्यो छलकै बलकै तब आप छोड़ाय कै बांहीं।
हाथन सों गहि नीबी कह्यो पिय नांहीं जू नांहीं जू नांहीं ॥106॥

नव कुंजन बैठे पिया नन्दलाल जू जानत हैं सब कोक कला।
दिन मैं तहां दूती भुराय कै लाई महा छबि धाम नई अबला।
जब धाय गही 'हरिचन्द' पिया तब बोली अजू तुम मोही छला।
मोहि लाज लगै बलि पांव परौं दिन हीं हहा ऐसी न कीजै लला ॥107॥

जानि सुजान मैं प्रीति करी सहिकै जग की बहु भांति हंसाई।
त्यौं 'हरिचन्द' जू जो जो कह्यो सो कर्‌यो चुप ह्वै करि कोटि उपाई।
सोऊ नहीं निबही उनसों उन तोरत बार कछू न लगाई।
सांची भई कहनावति वा अरी ऊंची दुकान की फीकी मिठाई ॥108॥

जानति हो सब मोहन के गुन तौ प्रति प्रेम कहा लगि कीनो।
त्यौं 'हरिचन्द' जू त्यागि सबै चित मोहन के रस रूप में भीनो।
तोरि दई उन प्रीति उतै उपवाद इतै जग को हम लीनो।
हाय सखी इन हाथन सों अपने पग आप कुठार मैं दीनो ॥109॥

इन नैनन मैं वह सांवरी मूरति देखति आनि अरी सो अरी।
अब तो है निबाहिबो याको भलो 'हरीचन्द जू' प्रीत करी सो करी।
उर खंजन के मद गंजन सों अंखियां ये हमारी लरी सो लरी।
अब लोग चवाव करो तौ करो हम प्रेम के फंद परी सो परी ॥110॥

अब तौ बदनाम भई भले ब्रज मैं घरहाई चवाव करौ तो करौ।
अपकीरति होउ भले 'हरिचन्द' जू सासु जेठानी लरौ तो लरौ।

नित देखनो है वह रूप मनोहर लाज पै गाज परौ तो परौ।
मोहिं आपने काम सों काम अली कुल के कुल नाम धरौ तो धरौ ॥111॥

नाम धरो सिगरो बृज तो अब कौन सी बात को सोच रहा है।
त्यों 'हरिचन्द' जू और हू लोगन मान्यो बुरो अरी सोऊ सहा है।
होनी हुती सु तो होय चुकी इन बातन तें अब लाभ कहा है।
लागे कलंक हू अंक लगें नहिं तौ सखि भूल हमारी महा है ॥112॥

वह सुन्दर रूप बिलोकि सखी मन हाथ तें मेरे भग्यो सो भग्यो।
चित माधुरी मूरति देखत ही 'हरिचन्द' जू जाय पग्यो सो पग्यो।
मोहिं औरन सों कछु काम नहीं अब तौ जो कलंक लग्यो सो लग्यो।
रंग दूसरो और चढ़गो नहीं अलि सांवरी रंग रग्यो सो लग्ये ॥113॥

हमहूं सब जानतीं लोक की चालहिं क्यों इतनो बतरावती हौ।
हित जामैं हमारो बनै सो करो सखियां तुम मेरी कहावती हौ।
'हरिचन्द जू' यामैं न लाभ कछू हमैं बातन क्यों बहरावती हौ।
सजनी मन पास नहीं हमरे तुम कौन को का समुझावती हौ ॥114॥

बिछुरे बलवीर पिया सजनी तिहि हेत सबै बिछुरावने हैं।
'हरीचन्द' जू त्यौं सुनकै अपवाद न औरहू सोच बढ़ावने हैं।
करिकै उनके गुन-गान सदा अपने दुख को बिसरावने हैं।
जेहि भांति सों द्यौस ए बीतैं सखी तेहि भांति सों बैठि बितावनै हैं ॥115॥

मन मोहन तें बिछुरीं जब सों तन आंसुन सों सदा धोवती हैं।
'हरीचन्द' जू प्रेम के फन्द परी कुल की कुल लाजहि खोवती हैं।
दुःख के दिन कों कोऊ भांति बितै बिरहागम रैन संजोवती हैं।
हम हीं अपनी सदा जानैं सखी निसि सोवती हैं किधों रोवती हैं ॥116॥

धिक देह औ गेह सबै सजनी जिहि के बस नेह को टूटनो है।
उन प्रान पियारे बिना इहि जीवहि राखि कहा सुख लूटनो है।
'हरिचन्द' जू बात ठनी सो ठनी नित के कलकानि तें छूटनो है।
तजि और उपाव अनेक अरी अब तौ हमकों विष घूंटनो है ॥117॥

सुनी है पुरानन में द्विज के मुखन बात
तोहि देखैं अपजस होत ही अचूक है।
तासों 'हरिचन्द' करि दरसन तेरो जिय
मेट्यौ चाहे कठिन मनोभव की हूक है।
ऐसो करि मोहिं सबै प्यारे नन्दनन्द जू सों
मिली कहैं लावैं मुख सौतिन के लूक है।
गोकुल के चन्द जू सों लागै जो कलंक तौ तू
सांचो चौथ चन्द ना तो बादर को टूक है ॥118॥

आई केलि मन्दिर मैं प्रथम नवेली बाल
जोरा जोरी पिय मन मानिक छुड़ाएं लेति।
सौ सौ बार पूछे एक उत्तरु मरु कै देति
घूंघट के ओट जोति मुख की दुराएं लेटि।
चूमन न देति 'हरिचन्दै' भरी लाज अति
सकुचि सकुचि गोरे अंगहि चुराएं लेति।
गहतहि हाथ नैन नीचे किए आंचर मैं
छबि सों छबीली छोटी छातिन छिपाएं लेति ॥119॥

यह सावन सोक नसावन है मन भावन यामैं न लाजै भरो।
जमुना पै चलो सु सबै मिलि कै अरु गाइ बजाइ कै सोक हरो।
इमि भाषत हैं 'हरिचन्द' पिया अहो लाडिली देर न यामैं करो।
बलि झूलो झुलावो झुको उझको यहि पाषैं पतिव्रत ताषैं धरो ॥120॥

उमड़ि उमड़ि दृग रोअत अबीर भए
मुख दुति पीरी बिरह महा भरी।
'हरिचन्द' प्रेम माती मनहुं गुलाबी छकीं
काम झर झांकरी सी दुति तन की करी।
प्रेम कारीगर के अनेक रंग देखौ यह
जोगिआ सजाए बाल बिरिछ तरे खरी।
आंखिन मैं सांवरी हिए मैं बसै लाल वह
बार बार मुख तें पुकारत हरी हरी ॥121॥

जिय सूधी चितौन की साधै रही सदा बातन मैं अनखाय रहे।
हंसि कै 'हरिचन्द' न बोले कबौं मन दूर ही सौं ललचाय रहे।

नहिं नेक दया उर आवत क्यौं करिकै कहा ऐसे सुभाय रहे।
सुख कौन सो प्यारे दियो पहिले जेहि के बदले यौं सताय रहे ॥122॥

जानत कौन है प्रेम बिथा केहि सों चरचा या बियोग की कीजिए।
को कहि मानै कहा समुझै कोऊ क्यौं बिन बातकी रारहिं लीजिए।
कूर चवाइन मैं पड़िकै 'हरिचन्द जू' क्यों इन बातन छीजिए।
पूछत मौन क्यौं बैठि रही सब प्यारे कहा इन्हैं उत्तर दीजिए ॥123॥

तुमरे तुमरे सब कोऊ कहैं तुम्हैं सो कहा प्यारे सुनात नहीं।
बिरुदावलि आपनी राखो मिलौ मोहिं सोचिबे की कछु बात नहीं।
'हरीचन्द जू' होनी हुती सो भई इन बातन सों कछु हात नहीं।
अपनावते सोच विचारि तबै जल-पान कै पूछनी जात नहीं ॥124॥

पिया प्यारे बिना यह माधुरी मूरति औरन को अब पेखिए का।
सुख छांड़ि कै संगम को तुमरे इन तुच्छन को अब लेखिए का।
'हरिचन्द' जू' हीरन को बेवहार कै कांचन को लै परेखिए का।
जिन आंखिन में तुव रूप बस्यौ उन आंखिन सों अब देखिए का ॥125॥

कित को दुरिगो वह प्यार सबै क्यों रुखाई नई यह साजत हौ।
'हरीचन्द' भए हौ कहा के कहा अनबोलिबे ते नहिं छाजत हौ।
नित को मिलनो तो किनारे रह्यौ मुख देखत ही दुरि भाजत हौ।
पहिले अपनाय बढ़ाय कै नेह न रूसिबे मैं अब लाजत हौ ॥126॥

पहिले मुसुकाइ लजाइ कछू क्यों चित्तै मुरि मो तन छाम कियो।
पुनि नैन लगाइ बढ़ाइ कै प्रीति निबाहन को क्यों कलाम कियो।
'हरिचन्द' कहा के कहा ह्वै गए कपटीन सों क्यों यह काम कियो।
मन मांहि जो छोड़न ही की हुती अपनाइ कै क्यों बदनाम कियो ॥127॥

धाई कै आगे मिलीं पहिले तुम कौन सों पूछि कै सो मोहिं भाखो।
त्यों तुमने सब लाज तजी केहि के कहे एतो कियो अभिलाखो।
काज बिगारी सबै अपुनो 'हरिचन्द' जू धीरज क्यों नहिं राखो।
क्यों अब रोइ कै प्रान तजौ अपुने किये को फल क्यों नहिं चाखो ॥128॥

इन दुखियान को न चैन सपनेहूं मिल्यौ।
तासों सदा ब्याकुल बिकल अकुलायंगी।
प्यारे 'हरिचन्द' जू की बीती जानि औध प्रान।
चाहत चले पै ये तो संग ना समायंगी।
देख्यो एक बारहू न नैन भरि तोहिं यातें।
जौन जौन लोक जैहैं तहां पछतायंगी।
बिना प्रान प्यारे भए दरस तुम्हारे हाय।
मरेहू पै आंखें ये खुली ही रहि जायंगी ॥129॥

हौं तो तिहारे सुखी सों सुखी सुख सों जहां चाहिए रैन बिताइए।
पै विनती इतनी 'हरिचन्द' न रूठि गरीब पै भौंह चढ़ाइए।
एक मतो क्यों कियो तुम सों तिन सोउन आवै न आप जो आइए।
रूसिबे सों पिय प्यारे तिहारे दिवाकर रूसत है क्यों बताइए ॥130॥

धारन दीजिए धीर हिए कुल कानि कों आजु बिगारन दीजिए।
मारन दीजिए लाज सबै 'हरीचन्द' कलंक पसारन दीजिए।
चार चवाइन कों चहुं ओर सों सोर मचाइ पुकारन दीजिए।
छांड़ि संकोचन चन्दमुखै भरि लोचन आजु निहारन दीजिए ॥131॥

[21 मई 1880 ई. से कविवचनसुधा में धारावाहिक प्रकाशित,
1882 ई. में चन्द्रप्रभा प्रेस, बनारस से पुस्तकाकार प्रकाशित]

मधु मुकुल

सन 1881 ई.

मधुरिपु मधुर चरित्र मधु पूरित मृदु मुद रास।
हरिजन मधुकर सुखद यह नव मधु मुकुल प्रकास॥
हृदय बगीचा अस्रु जल बनमाली सुखवास।
प्रेम लता मैं यह भयौ नव मधु मुकुल विकास॥

समर्पण

हृदय वल्लभ!

यह मधु मुकुल तुम्हारे चरण कमल में समर्पित है, अंगीकार करो। इस में अनेक प्रकार की कलियां हैं, कोई स्फुटित कोई अस्फुटित, कोई अत्यन्त सुगन्धमय कोई छिपी हुई सुगन्ध लिये, किन्तु प्रेम सुवास के अतिरिक्त और किसी गन्ध का लेश नहीं। तुम्हारे कोमल चरणों में ये कलियां कहीं गड़ न जायं, यही सन्देह है। तथापि तुम्हारे बाग के फूल तुम्हैं छोड़ और कौन अंगीकार कर सकता है, इस से तुम्हीं को समर्पित है।

फाल्गुन कृष्ण 1
संवत 1937

तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

मधु मुकुल

राग वसन्त

जै वृषभानु नन्दिनि राधे मोहन प्रानपियारी।
जै श्री रसिक कुंवर नन्दनन्दन सुन्दर गिरिवरधारी॥
जै श्री कुंज नायिका जै जै कीरति कुल उंजियारी।
जै बृन्दाबन चारु चन्द्रमा कोटि मदन मद हारी॥
जै ब्रज तरुन तरुनि चूड़ामनि सखियन मैं सुकुमारी।
जयति गोप कुल सीस मुकुट मनि नित्य बिहार बिहारी॥
जयति बसन्त जयति बृन्दाबन जयति खेल सुखकारी।
जय अद्भुत जस गावन शुक मुनि 'हरीचन्द' बलिहारी॥1॥

ऋतु सिसिर सुखद अति ही सुदेस।
सूचित बसन्त भावी प्रवेस॥
मुकुलित कचनार सुठौर ठौर।
बन दरसाए नव बौर बौर॥
कहुं कहुं पिक बोले बैठि डार।
मनु रितुपति नव चोबदार॥
चलि पवन सुखद छबि कहि न जाय।
रहे जल लहराय अनन्द बढ़ाय॥
फूली अतिसी सरसों सुहात।
मानों मिलि मदन बसन्त गात॥
गेंदा फूले सब डार डार।
मनु पाग पहिरि ठाढ़ी कतार॥
गूंजे भंवरा सब झोर झोर।
आवेस भयो तन मदन जोर॥
लखि बिहरन जुगल लजाय मार।
'हरीचन्द' हरषि गाई बहार॥2॥

खेलत बसन्त राधा गोपाल।
इत ब्रज बाला उत ग्वाल बाल॥
गावत बहार दै बिबिध ताल।
बाजत मृदंग आवज रसाल॥
तहं उड़त बिबिध बुक्का गुलाल।
गारी दै दै बहु करत ख्याल॥
बाढ़ी सोभा अति तौन काल।
'हरिचन्द' निरखि हरषित बिसाल॥3॥

श्याम सरस मुख पर अति सोभित तनिक अबीर सुहाई।
नील कंज पर अरुन किरिन की मनहुं परी परछांई॥
मनु अंकुर अनुराग सरस सिंगार मांझ छबि देई।
किधौं नीलमनि मधि इक मानिक निरखत मन हरि लेई॥
चन्द बदन मैं मंगल को मनु अंग निरखि मन मोहै।
'हरीचन्द' छबि बरनि सकै सो ऐसो कबि जग को है॥4॥

यह रितु बसन्त प्यारी सुजान।
नहिं ऐसी समय में कीजै मान॥
लखि सोभा यह रितुराज की।
सब सुन्दर सुखद समाज की॥
फूले नव कुसुम अनेक भांति।
मनु नव रतनन की नवल पांति॥
हरि बैठे हैं तो बिनु उदास।
चलि बेगहि प्यारी पिय के पास॥
चलिये बनि ठनि रितुराज जान।
'हरिचन्द' कहै सो लीजै मान॥5॥

प्यारी पौढ़ि रहौ अब समै नाहिं।
सब सखियां अपने घरन जाहिं॥
सब दिन बीत्यौ खेलत बसन्त।
अति आनन्दित सब सुख समन्त॥
चोवा चन्दन बुक्का गुलाल।
रंग भीनि बसन ह्वै गयो लाल॥
भरि रही अंग अंगनि अबीर।
सो पोंछि पहिन कै नवल चीर॥

इमि सुनि हरि की बतियां ललाम।
श्रीराधा आई कुंज धाम॥
पौढ़े दोउ सुख सों एक पास।
तन मन वार्‍यौ 'हरिचन्द' दास॥6॥

बिहाग धमार

अरी वह अबहि गयो मुख मांड़ि।
करि बेसुध भरि रूप ठगौरी तलफत ही मोहिं छांड़ि॥
हौं आई जल भरन अकेली नाहक जमुना घाट।
मारग ही में आइ कढ़्यौ वह साजे होरी ठाट॥
औचक पाछो सों मेरी गागरि दीनी सिर तैं ढोरि।
नैन मूंदि मेरो मींजि कपोलन कंचुकि डारी तोरि॥
गाढ़े भुज कसि हिये लगायो चुम्बन दै ब्रजराज।
औरहु कछु करि गयो ढिठाई मैं रहि गई करि लाज॥
अबहीं चल्यौ जात कछु मुरिकै चितवत मन हरि लेत।
सैनन हा हा खात छबीलो ऊपर गारी देत॥
कहां गयो री कोउ बताओ रूप चटपटी लाय।
हौं इत रही कराहत ही सखि बेसुध करि करि हाय॥
'हरिचन्द' तजि लाज काज सब नेह निसान बजाय।
अब नहिं रहिहौं बरजौ कोऊ मिलिहौं हरि सों धाय॥7॥

डफ की

मैं तो मलौंगी अबीर तेरे गालन मैं।
मलि गुलाल आंखैं आंजौंगी चोटी गुहौंगी बालन मैं॥
आज कसक सब दिन की निकसै बेंदी दै तेरे भालन मैं।
'हरीचन्द' तोहिं पकरि नचाऊं मीर बनूं ब्रज बालन मैं॥8॥

काफी

जुरि आए फांके मस्त होली होय रही।
घर में भूंजी भांग नहीं है तौ भी न हिम्मत पस्त॥
होली होय रही॥
महंगी परी न पानी बरसा बजरौ नाहीं सस्त।
धन सब गवा अकिल नहिं आई तो भी मंगल कस्त॥
होली होय रही॥

बरबस कायर कूर आलसी अन्धे पेट परस्त।
सूझत कुछ न बसन्त मांहि ये भे खराब औ खस्त ॥9॥

आजु भोरहि भोर खरी निखरी।
गोरी काहू गाढ़े छैल के पाले परी ॥
चोली बन्द खुले केस तेरे छूटे रैन सुरत संग्राम लरी ॥
आंख लाल अधर रंग फीको चोटी सिथिल तेरी फूल झरी।
'हरीचन्द' सगरी निसि जागी अंग सिथिल अलसान भरी ॥10॥

ब्रज की होरी

अरे गोरी जोबन मद इठलाती,
चलै गज मस्त सी चाल।
अरे गोरी गिनै न काहू वै मदमाती,
फिरत उतानी बाल ॥
अरे गोरी मत इतनौ गरबावै,
यह व्रज टेढ़ो गांव।
अरे गोरी अबहिं छैल वह आवै,
मोहन जाको है नांव ॥
अरे गोरी गर लावै मनमानो करि,
मद तेरो देइ उतार।
अरे गोरी 'हरिचन्द' संग लीने,
लंगर छैल लगवार ॥11॥

डफ बाजै मेरो यार निकट आयो।
सुन री सखी मेरो नाम लेइ कै मधुरे सुर गारी गायो।
मेरे घर के द्वार खरो ह्वै अबिरन सों मारग छायो।
'हरिचन्द' अब घर न रहौंगी मिलि करिहै पिय मन भायो ॥12॥

सिन्दूरा काफी

मेरी आंखिन भरि न गुलाल लाल मुख निरखन दै।
होरीहू मैं काहें करत यह मुख दरसन जंजाल ॥
प्रीति रीति नहिं जानत प्यारी मदमातो रस ख्याल।
'हरीचन्द' हिय हौस मिटै क्यों जब यह ऐंड़ी चाल ॥13॥

सिन्दूरा

रे रसिया तेरे कारन ब्रज में भई बदनाम।
ऐसी होरी कोऊ खेलत बैड़ी जैसी तू खेलत श्याम॥
करत न लाज बकत मनमानी गर लावत पर बाम।
'हरीचन्द' कछु काम और नहिं एक एहै सब जाम॥14॥

भीमपलासी

फिर गाई रस की सोइ गारी।
मदन बसीकर सिद्ध मन्त्र सी स्रवन परी धुनि आजि हहा री॥
फेर ओट डफ की करि चितई चितवनि प्रेम भरी सोइ प्यारी।
'हरीचन्द' हिय लगी चटपटी ब्याकुल भई लाज की मारी॥15॥

सोरठ का मेल

ब्रज के नगर तैंने कान्हा, ऊधम मचायो रे।
होरी के मिस कुल नारिन को गेह छुड़ायो रे॥
करत फिरत निज मनमानी गढ़ लाज ढहायो रे।
'हरीचन्द' पिय बाट चलत हठि कंठ लगायो रे॥16॥

मेरे निकट तू आउ हौस तेरी सबै पुजाऊं रे।
निज बस कै रस लै अधरन को गर लपटाऊं रे॥
काम उमंग निकासि भुजन कसि हियो सिराऊं रे।
'हरीचन्द' अपनो करि छांडूं तब घर जाऊं रे॥17॥

काफी

प्यारे होरी है कै जोरी।
जो तुम निधरक झुकेई परत हौ मानत नाहिं निहोरी॥
कहा कहैंगी देखनवारी जो मेरी दुलरी तोरी।
'हरीचन्द' मुख चूमि भजन की बदी कौन नै होरी॥18॥

बिहाग या काफी

अरे कोउ लाइ मिलाओ रे, प्रान पिया मेरे साथ।
कैसे भरो जोबन मेरो उमग्यौ मरत जिआओ रे॥
इन दुखिया अंखियन को सुन्दर रूप दिखाओ रे।
'हरीचन्द' दुख अगिन दहकि रही धाइ बुझाओ रे॥19॥

श्याम बिनु होरी न भावै हो।
फाग खेल तेहवार रंग सब जियहि जरावै हो॥
को दुख मेटै करि कै दया उन्है जाइ लै आवै हो।
'हरीचन्द' पिय लाइ इतै मोहिं मरत जिआवै हो॥20॥

पीलू काफी

अपुने रंग रंगी अंखियन मैं प्रान पियारे अबीर न मेलौ।
देखन देहु मधुर मूरति मोहिं अटपट खेल पिया जिन खेलौ॥
आओ गर लगि तपन बुझाऊं काहें करत हौ रंग को रेलौ।
'हरीचन्द' गर लगि प्यारी के क्यों न सुरति सुख सिन्धु सकेलौ॥21॥

जोगिया काफी

और रंग जिन डारौ रंगी मैं तो रंग तुम्हारे।
कोउ बात सो होऊं जौ बाहर तौ तुम गारी उचारौ॥
काहे को बरबस लोग हंसावत निलज खेल निरवारौ।
'हरीचन्द' गर लगि कै मेरे जिय की हौस निकारौ॥22॥

काफी

फेर वाही चितवन सों चितयो।
लगी काम चाबुक सी हिय पर तन मन बिकल भयो॥
भले जाल धीरज बुधि बल सब गुरु जन भयहु गयो।
'हरीचन्द' निधरक उर मैं फिर काम को राज ठयो॥23॥

काफी

होरी है कै राम राज रे।
जो तू गिनत न कछू काहुवै करत आपुनेइ मन के काज रे॥
निधरक अंग परसत नारिन के गारी बकि बकि लेत लाज रे।
'हरीचन्द' भयो छैल अनोखो बरजेहूं नहिं रहत बाज रे॥24॥

पीलू काफी

यह दिन चार बाहर, री पिय सों मिलु गोरी।
फिर कित तू कित पिय कित फागुन यह जिय मांझ विचार॥
जोबन रूप नदी बहती यह लै किन पांय पखार।
'हरीचन्द' मति चूक समै तू करु सुख सौ तेहवार॥25॥

सिन्दूरिया

ए री जोबन उमग्यौ फागुन लखिकै कोउ बिधि रह्यौ न जात।
मानत अब न मनाए मेरे जिय अति ही अकुलात॥
कहा करौं कित जाउं सहेली कठिन काम की घात।
'हरीचन्द' पिय बिनु मेरी कोउ पूछत हाय न बात॥26॥

देस

पिया बिनु कटत न दुख की रात।
तारे गिनत लेत करवट बहु होत न कठिन प्रभात॥
नैनन नींद न आवत क्यौंहू जियरा अति अकुलात।
'हरीचन्द' पिय बिनु अति ब्याकुल मुरि मुरि पछरा खात॥27॥

सिन्दूरा

भले मिलि नांव धरौ सबरे ब्रज के अब तोहिं न छाडूं छैल।
मोहन लगी फिरौं निसु बासर कुंज घाट बन गैल॥
सुख सों लाज सिधारौ सुरग कों काहू की हौं न दबैल।
'हरीचन्द' तजि जाऊं कहां जब सबहि कहत बिगरैल॥28॥

बिहाग या काफी

आजु होरी खेलन प्यारे पीतम आवैंगे मेरे धाम।
रंग सों भरौंगी कछु न डरौंगी पुजवौंगी मन काम॥
गाल गुलाल लगाई माल गल दैकै करूंगी प्रनाम।
'हरीचन्द' मुख चूमि भुजा भरि मेटूंगी दुख को नाम॥29॥

बिहाग या सिन्दूरा

आजु सखि होरी खेलन पीतम ऐहैं फरकत बायों नैन।
पुजवैंगी सकल मनोरथ जिय के सुख सों बिताऊंगी रैन॥
दोउ भुज गल दै मुख चूमौंगी करूंगी उमगि सुख सैन।
'हरीचन्द' हिय सफल करूंगी सुनि वा मुख के बैन॥30॥

काफी

आजु मैं करूंगी निबेरो खेल को जो तू ठाढ़ो रहैगो रंग मैं।
अबही निकासूंगी सगरी कसर जो तू रोकत टोकत रह्यौ नित मग मैं॥

बांधि भुज सों निज बस करिकै मुख चूमौंगी प्रेम उमग मैं।
'हरीचन्द' अपनो करि छाडूंगी मीर कहाऊंगी सगरे जग मैं ॥31॥

पीलू

बन बन फिरत उदास री, मैं पिय प्यारे बिन।
कहुं न लगत जिय घाट बाट घर फिर फिर लेत उसास री,
मैं पिय प्यारे बिन
कछु न सुहात धाम धन के सुख जियत मिलन की आस।
'हरीचन्द' उमगेई आवत दोउ दृग होइ हरास ॥32॥

उमग्यौ जोबन जोर री, पिय बिनु नहिं मानै।
देखि फाग रितु बन द्रुम फूले कियो मदन घनघोर री ॥
बाढ़ी अंग अंग काल कसक अति सुनि सुनि कोइल सोर री।
'हरीचन्द' प्यारे बिन मारत छिन छिन मदन मरोर री ॥33॥

पीलू खेमटा

सलोनी तेरी सूरत मेरे जिय भाई।
तन में नैनन में छबि तेरी रही समाई ॥
इन आंखिन कों और रुचत नहिं करौ अनेक उपाई।
'हरीचन्द' तू ही इक सरबस जीवन धन सुखदाई ॥34॥

निवानी तेरी सूरत मेरे मन बसी।
नैन उदास अलक अरुझानी मेरे जिय सों फंसी ॥
कोटि बनावट वारौं इन पै सहजहि सोभा लसी।
'हरीचन्द' फांसी गर डारत तनक मन्द मृदु हंसी ॥35॥

भैरवी या काफी

पिया मैं पल ना तजौं तेरो साथ।
एक ओर अब जगत होउ किन अब कलंक लियो माथ ॥
जनम जनम की दासी मैं तेरी तुम ही मेरे नाथ।
'हरीचन्द' अब तो तेरो दामन पकर्‍यो गाढ़े हाथ ॥36॥

काफी

सखी री अब मैं कैसी करौं।
बिनु पीतम गर लगें कौन बिधि जीवन के दिन भरौं ॥

बिनु पीतम हिय मैं हिय मेले कठिन ताप किमि हरौं।
'हरीचन्द' पूछै किन उन सौं या दुःख जरौं ॥37॥

धनाश्री

फेर अब आई रैन बसन्त की।
बदलि चली पौनहु सुगन्ध भरि तजि कै सीत हिमन्त की ॥
फिर आई दुखदाइन पिय बिनु घरी बियोगिन अन्त की।
'हरीचन्द' पाती लै आओ अबहूं तो कोउ कन्त की ॥38॥

यथा रुचि

घर मैं छिनहूं थिर न रहै।
दौरि दौरि झांकति दुआर लगि पिय को दरस चहै ॥
रूप सुधा पीअति अघाति नहिं पिय के गुनहिं कहै।
'हरीचन्द' रस माती पलहू दृग अन्तर न सहै ॥39॥

सिन्दूरा

बे परवाही के संग मन फंसि गयो कुदावं।
वह न गिनत त्रिनहू सों जा हित धरत सबै ब्रज नावं ॥
वेढ़ब फंसी करौं का सजनी कहा करूं कित जावं।
'हरीचन्द' नहिं पूछत कोऊ मारि फिरौं सब गावं ॥40॥

इकताला

पिया प्यारे मैं तेरे पर वारी भई।
सहज सलोनी सुन्दर सूरत निरखत ही बलिहारी भई ॥
अब ना रहौं घर लाख कहो कोऊ सब ही भांति तुम्हारी भई।
'हरीचन्द' संग लागी डोलौं सुन्दर रूप भिखारी भई ॥41॥

बिहाग

सोई पिय के गर लपटाई।
सीस धुजा दै पिय के हिय सों कसि कै हियो लगाई ॥
निधरक पियत अधर रस उमगी तऊ न नेकु अघाई।
'हरीचन्द' रस सिंधु तरंगन अवगाहत सुख पाई ॥42॥

भीमपलासी

फेर चलाई रंग पिचकारी।
गाई फेर वहै मीठे सुर प्रेम भरी सोई गारी॥
फेर वहै चितवन चितई जो तन मन बेधन वारी।
'हरीचन्द' फिर मदन बिबस भई मैं कुल नारि बिचारी॥43॥

काफी सिन्दूरा

इतरानो फिरि तू भले अपने मन मैं न गिनौं कछु तोहिं माल।
चार दिना को छैल छोहरा सोऊ भयो चहै रसिक लाल॥
गारी गावत डफहि बजावत ऐंड़ानो चलै मस्त चाल।
'हरीचन्द' छिन मैं सो भुलाऊं पकरि नचाऊं दै दै ताल॥44॥

बिहाग

सोई सुख फिर चाहै पिय प्यारो।
एक वेर चलि फेर निकुंजन जहं ब्रजराज दुलारो॥
जहं रस रंग बिलास किए बहु तुम संग मिलि कै प्यारी।
तहीं बैठि सुख सोचि सकल सोइ बेबस होत मुरारी॥
तुव गुन गन दृग भरि भरि भाखत पिय ब्याकुल ह्वै जाई।
राधा नाम अधार जिअत है प्यारो कुंअर कन्हाई॥
फेर फेर सखियन सों पूछत चरित तिहारे आली।
तुव बैठनि बतरानि हंसनि सुधि कर उमगत बनमाली॥
चलु कित बेग कुंज मन्दिर मैं लै पिय कों गर लाई।
'हरीचन्द' दै अधर अमृत पिय प्रानहि राखु बचाई॥45॥

ईमन

गोरी गोरी गुजरिया भोरी संग लै कान्हा
नट ललित जमुन तट नव बसन्त करि होरी।
सोभा सिंधु बहार अंग प्रति दिपति देह दीपक
सो छबि अति मुख सुदेस ससि सो री॥
आसा करि लागी पिय सों रट पंचम सुर गावत ईमन हट
मेघ बरन 'हरीचन्द' बदन अभिराम करी बरजोरी।
सारंग नौनि पहिरि सुहा सारी भयो कल्यान मिले।
श्री गिरिधारी छबि पर जन तृन तोरी॥46॥

होली

भारत मैं मची है होरी ॥
इक ओर भाग अभाग एक दिसि होय रही झकझोरी।
अपनी अपनी जय सब चाहत होड़ परी दुहुं ओरी॥
दुन्द सखि बहुत बढ़ो री ॥
धूर उड़त सोइ अबिर उड़ावत सब को नयन भरो री।
दीन दशा अंसुअन पिचकारिन सब खिलार भिंजयो री ॥
भींजि रहे भूमि लटोरी ॥
भइ पतझार तत्त्व कहुं नाहीं सोइ बसन्त प्रगटो री।
पीरो मुख भई प्रजा दीन ह्वै सोइ फूली सरसों री ॥
सिसिर को अन्त भयो री ॥
बौराने सब लोग न सूझत आम सोई बौर्‍यौ री।
कुहू कहत कोकिल ताही तें महा अंधार छयो री ॥
रूप नहिं काहू लख्यो री ॥
हार्‍यौ भाग अभाग जीत लखि बिजय निसान हयो री।
तब स्वाधीनपनो धन बुधि बल फगुआ माहिं लयो री ॥
रोष कछु रहि न गयो री ॥
नारी बकत कुफार जीति दल तासु न सोच लयो री।
मूरख कारो काफिर आधो सिच्छित सबहि भयो री ॥
उत्तर काहू न दयो री ॥
उठौ उठौ भैया क्यौं हारौ अपुन रूप सुमिरो री।
राम युधिष्ठिर विक्रम की तुम झटपट सुरत करो री ॥
दीनता दूर धरो री ॥
कहां गए छत्री किन उनके पुरुषारथहि हरो री।
चूड़ी पहिरि स्वांग बनि आए धिक धिक सबन कह्यो री ॥
भेस यह क्यों पकरो री ॥
धिक यह मात पिता जिन तुमसों कायर पुत्र जन्यो री।
धिक वह घरी जनम भयो जामैं यह कलंग प्रगटो री ॥
जनमतहि क्यों न मरो री ॥
खान पियन अरु लिखन पढ़न सों काम न कछू चलो री।
आलस छोड़ि एक मत ह्वैकै सांची बृद्धि करो री ॥
समय नहिं नेकु बचो री ॥
उठौ उठौ सब कमरन बांधौ सस्त्रन सान धरो री।
बिजय निसान बजाइ बावरे आगेइ पांव धरो री ॥

छबीलिन रंगन रंगो री ॥
आलस मैं कछु काम न चलिहै सब कछु तो बिनसो री।
कित गयो धन बल राज पाट सब कोरो नाम बचो री ॥
तऊ नहिं सुरत करो री ॥
कोकिल एहि बिधि बहु बकि हार्‌यौ काहू नाहिं सुनो री।
मेटी सकल कुमेटी थोथी पोथी पढ़त मरो री ॥
काज नहिं तनिक सरो री ॥
चालिस दिन इमि खेलत बीते खेल नहीं निपटो री।
भयो पंक अति रंग को तामैं गज को जूथ फंसो री ॥
न कोउ बिधि निकसि सको री ॥
खेलत खेलत पूनम आई भारी खेल मचो री।
चलत कुमकुमा रंग पिचकारी अरु गुलाल की झोरी ॥
बजत डफ राग जमो री ॥
होरी सब ठांवन लै राखी पूजत लै लै रोरी।
घर के काठ डारि सब दीने गावत गीत न गोरी ॥
झूमका झूमि रहो री ॥
तेज बुद्धि बल धन अरु साहस ऊधम सूरपनो री।
होरी में सब स्वाहा कीनो पूजन होत भलो री ॥
करत फेरी तब कोरी ॥
फेर धुरहरी भई दूसरे दिन जब अगिन बुझो री।
सब कछु जरि गयो होरी में तब धूरहि धूर बचो री ॥
नाम जमघंट परो री ॥
फूंक्यौ सब कुछ भारत नै कछु हाथ न हाय रहो री।
तब रोअन मिस चैती गाई भली भई यह होरी ॥
भलो तेहवार भयो री ॥47॥

होली लीला

राग मधुमात सारंग वा गौरी

रंगीली मचि रही दुहुं दिसि होरी, इत हरि उत बृषभानु किसोरी।
चलत कुमकुमा रंग पिचकारी, अरुन अबीर की झोरी ॥

इत जमुना निरमल जल लहरति तरल तरंगनि राजै।
उत गिरिराज फलित चिन्तित फल चिन्तामनिमय भ्राजै ॥

ता मधि बिपुल बिमल बृन्दाबन जुगल केलि थल साहै।
षटरितु रहत जहां कर जोरे बैकुंठहु को मोहै॥

जाही जुही केतकी कुरवक बकुल गुलाब निवारी।
फूले फूल अनेकन लपटत लहरत केसर क्यारी॥

लपटी लता तरोवर सों बहु फूलि फूलि मन भाई।
मनु मंडप में दुलहा दुलहिन रहे सेहरन लाई॥

कहुं कहुं सघन तरोवर सों मिलि मंडल सुन्दर छायो।
पत्ररंध्र सों धूप चांदनी मिलिकै लगत सुहायो॥

कहूं कुटी कहुं सघन कुटी कहुं कदम खंडिका छाई।
कहुं बितान कहुं कुंज मंडप कहुं छई छांह मन भाई॥

कहुं कंदरा सिलामनि बेदी बिबिध रतन सोपाना।
झरना झरत बिमल जल के जहं करत हंस कल गाना॥

फले सकल फल अमृत सरिस कहुं कहूं मौर बिस्तारा।
कहुं फूलन पै मत्त भंवरगन उड़त करत झंकारा॥

कहूं घाट छतरी कहुं राजै सीतल सुभग तिबारी।
कहुं बालुका बिछी अति कोमल स्वच्छ स्वेत सुखकारी॥

कहुं कहु झुके तरोवर जल मैं मनु निज प्रिय को भेंटै।
मुकुर मांहि सोभा लखि अपनी कै जिय को दुख मेंटैं॥

कहुं कहुं कुंड तलाब बावरी भरे फटिक से नीरा।
कहूं झील लहरत अपने रंग देखि दुरत दृग पीरा॥

त्रिबिध पौन जब लै पराग मधु चहुं दिसि आनि झकोरे।
बिहबल है मद अन्ध करत तब गन्ध लिये जब दौरे॥

कूले जलनि कमल अरु कोई कहुं सैवाल सुहाई।
कारडव जल कुक्कट सारस बिहरत तहं मन लाई॥

मोर चकोर सारिका सुकगन मिलि कल कलह मचाई।
डार डार प्रति बैठि कोकिलन काम बधाई गाई॥

सरसों अतिसी खेतन सोहैं कुसुम फूल बहु फूले।
नव पलास कचनार देत बिरहीजन के हिय हूले॥

सखिन जानि होरी को आगम पथ गुलाब छिरकायो।
कियो ढेर केसर गुलाल को रंगन हौज भरायो॥

छायो तोरि गुलाब पांखुरिन मारग सोहत है अति छायो।
अगर धूप ठौरहि ठौरन दै बगर सुबास बसायो॥

पायदान झारी पिकदानी मुरछल चंवर अड़ानी।
फूल चंगेर माल बहु बिजन लै मृगमद घन सानी॥

लिये सकल सुख साज सहेली सरस कतारन ठाढ़ी।
मानहुं मदन सदन बिसुकरमा चित्र पूतरी काढ़ी॥

कोउ गावत कोउ नाचत आवै कोऊ भाव बतावै।
कोउ मृदंग बीना सुर मंडल ताल उपंग बजावै॥

खेलत गेंद कहूं कोउ नट सी क़ला अनेकन साजै।
आंख मिचौनी होत तहां इक परसि और को भाजै॥

छड़ी लिए इक खड़ी अदब सों सबइ तमाम जनावै।
एक भंवर निरवारनवारी एक निरखि बलि लावै॥

आवत तहं दोउ होरी खेलन परम प्रेम रंग भीने।
कछु अलसात छके मद लोचन बांह बांह मैं दीने॥

अपुनो अपुनो जूथ अलग करि खेलत सब मिलि गोरी।
जान न देहु प्रान प्यारे को यह कह्यौ ललित किसोरी॥

रोपि मध्य डांड़ो जै कहिकै बिजय निसान बजाई।
कियो खेल आरम्भ सखी प्यारी की आज्ञा पाई॥

धरन लगीं मनमोहन पिय को घेरि घेरि ब्रजनारी।
लाल कियो गोपाल लाल कों दै केसर पिचकारी॥

चोआ चन्दन बुक्का बन्दन केसर मृगमद रोरी।
अबिर गुलाल कुमकुमा कुमकुम अरु घनसार झकोरी॥

मींजि कपोल कोऊ भाजत है धाइ फेंट कोउ खोलै।
कोउ मुख चूमि रहत ठोड़ी गहि इक गारी दै बोलै॥

इतनेहिं उत सों सखा जूथ सब सजि सजि खेलन आए।
बांधे पाग सुरंग फेंट मैं रंग रंग बसन बनाए॥

फेटन पै तुर्रा की मलकनि मोर पंखोआ सोहै।
बेनु सींग दल झांझ ढोल डफ बाजन मुनि मन मोहै॥

गावत गारी अबिर उड़ावत धूम मचावत डोलै।
पकरि लेत तेहि जान देत नहि हो हो होरी बोलै॥

तिनसों कहि ब्रजराज लाडिले सखियन धोखा दीन्हों।
मैं प्यारी के संग आवत हो इन बीचहि गहि लीन्हों॥

धाइ धरौ इनकों इक इक करि रंग मैं सबन भिंजाओ।
गारी दै मन भायो करि कै बहु बिधि नाच नचाओ॥

ये अबला सबला भई भारी इनको सब मद गारौ।
आजु हराइ इन्हैं होरी मैं रंग के पिचुका मारौ॥

धाए सुनत ग्वाल मदमाते गहिरो खेल मचायो।
घूंघर करि गुलाल की चहुं दिसि रंग नीर बरसायो॥

एक घोरि कै मृगमद डारत इक लावत घनसारा।
चोआ तेल फुलेल एक लै अतर भिंजावत बारा॥

हरित अरुन पंडुर श्यामल रंग रंग गुलाल उड़ाई।
बिच बिच बिबिध सुगन्ध सनित बुक्का बगरत मन भाई॥

कबहुं बादले रंग रंग के कतरि मिहीन उड़ावै।
तरनि किरिन मिलि अति छबि पावत चमकि सबन मन भावै॥

परिमल अम्बर मृगमद पीसे सने कपूर सुहाए।
मेलि मेलि केवरा धूर में झोरिन पूरि उड़ाए॥

चोआ चोंटि चोंटि के अंगन तापर बिंदुली लावैं।
केसर छींटि चरचि रोरी सों लै रंग सों नहवावैं॥

गारी देत निलज डफ बाजत ऊंचे राग जमायो।
गूंजि रह्यौ सुर बर बृन्दाबन हो हो शब्द सुनायो॥

एकन कों गहि रहत एक एकन को इक मुख मांड़ै।
करत निपट पट रहित एक को हा हा करि करि छांड़ै॥

नारि नरन कों नारि बनावत नर नारिन नर साजै।
गांठ जोरि बर बदन चीति कै चूमि चूमि मुख भाजै॥

फूल छड़ी की मारि परत तब लाल उठत अकुलाई।
पुनि हो हो करि रेलि पेलि तिय दलहि भजावत आई॥

अवनि अकास एक रंग देखियत तरुन अरुनई छाई।
लता पत्र प्रति रंगे रंग सों इक रंग परत लखाई॥

पटे अटारी अटा झरोखा मोखा छाजन छातैं।
मारग सहित सुरंग गुलाल सों लाल सबै दरसातैं॥

भींजे बसन सबै तिन मधि कोउ सीत भीत अति कांपै।
काहू के पट छुटे लाज सों अपुनो तन कोइ ढांपै॥

एकन को इक पकरि नचावत एक बजावत तारी।
आपुन हंसत हंसावत औरन देत कुफारी गारी॥

रंग जम्यो होरी को भारी मद माते नर नारी।
सबके नैनन में देखियत इक होरी खेल खुमारी॥

तिन मधि घूंघर मैं गुलाल के लसत जुगल लपटाने।
भींगे रंग सगबगे बागे रस बस आलस साने॥

श्याम सरूप मनोहर मोहन कोटि काम लखि लाजै।
उमगत अंग अंग तें जोबन बय किसोर नव भ्राजै॥

मनु मानिक नीलम मिलाइ दोउ सरस पूतरी ढारी।
उलहत रोम रोम तें सोभा कवि रसना मति हारी॥

अंग अनंग भर्‌यो आगम के दिन सहजहि सुन्दराई।
लखतहि मन मोहत जुवतिन को चढ़त तरल तरुनाई॥

पद तन लाल प्रवाल चिन्ह धुज अंकुस मंडित सोहै।
नव पल्लव पर सरस ओस कन से नख लखि मन मोहै॥

चरन मंजु मंजीर बिबिध नग जटित न परत बखाने।
मनु मनिगन मिस मुनिजन को मन रहत चरन लपटाने॥

जुगल पींडुरी गुलफन की छबि लगत दृगन अति नीकी।
मनु बैदुर्य्य डार जुग सुन्दर करत जगत छबि फीकी॥

कदलि खम्भ सम जंघ जुगल जेहि रमा पलोटन चाहै।
तापै लपटि रह्यौ पीताम्बर सोभा सुख अवगाहै॥

मनु घन मैं घिरि दामिनि लपटी नीलहि कंचन बेली।
रस सिंगार मैं बिरह लता सु तमालहि पीत चमेली॥

तापै कलित किंकिनी कूजति मनु रसना कविगन की।
बन्दनवार काम मन्दिर की विजय घोस रति रन की॥

तापैं फेंटा ललित लपेटा पंचरंग सोभित ऐसे।
सावन सांझ बिबिध रंग बादर दामिनि चूमत जैसे॥

उदर उदार सचिक्कन कोमल भर्‍यौ सकल रस सोहै।
लेत लपेट चितै चितवत नहिं भरत पेट दृग जोहै॥

सब जग-मूल नाभिसर सोहत रूप गांठ मनु बांधी।
ता पर रमत रसिक रोमावलि रस सरिता सर सांधी॥

जुवति गाढ़ रति निरदय समुदय सदय दीन हित साजै।
सोभित उर जहं अनुदिन नवल प्रिया प्रतिबिम्ब बिराजै॥

ता पर हार अपार परे मनिगन की अनगन माला।
ओतप्रोत मनु जुवति मनोरथ सोत पोत मनि ख्याला॥

सब पर सोहत गुंजमाल बनमाल सहित आलम्बी।
मनु अनुराग सहित सगरे रस रहे हरि गल अवलम्बी॥

मुक्तपांति सोभित अति सुन्दर कौस्तुभ पदिक बिराजै।
प्यारी मन को सरस सिंहासन छत्र मनहुं छबि छाजै॥

मुक्त भएहूं रस के लोभी जन हरि गर लपटाने।
पुन्य गोप पद पाइ ओप जुत चोप भरे सरसाने॥

प्रियावरोधन चतुर बाहु जुग देखत ही मन मोहै।
अति आतुर तिय गर लगिवे कों नील बेलि सी सोहै॥

मनिनपूर केयर जुगल पर नौ रतनी कसि बांधी।
नभ भसुंड के सुंड दंड ध्रुव सह ग्रह पंगति नांधी॥

मुनिबन्धन मनिबन्ध कलित कंगन पहुंची मन भाई।
जुगल नवल पल्लव मैं मानहुं कुसुमलता लपटाई॥

जुबती उर परसन अति चंचल कर जुग अति रंग माड़ै।
हांथहि हाथ लेत ये चित कों फेर कबहुं नहिं छाड़ै॥

उरधरेख चक्र चिन्हन सों चिन्हित कर तल देखे।
मनु गुलाल पाटी पैं अंकित किए मदन निज लेखे॥

पोर पोर अंगुरी मैं मुदरी ऊपर नख दुति भारी।
विद्रुम कली अग्र मुक्ताफल मीना मध्य संवारी॥

कदलिपत्र सी पीठ दीठ परि नीठ नीठ नहिं चालै।
ता पर पीत उपरना सोभित लपटी धूप तमालै॥

काजर पीकादिक छापित बर रंग भरयौ मन मोहै।
सोना और सुगन्ध दोऊ मिलि नगन जरयौ अति सोहै॥

कलकल कंठ कुंठ कर सोभित कंठ पीक छबि छाजै।
मनहुं नीलमनि सरस सुराही अमृत भरी अति राजै॥

चिबुक चारु मोहत मन जोहत करन करन छबि भारी।
युगल कपोल गोल दरपन सम प्रतिबिम्बित जहं प्यारी॥

सकल स्वाद रस मूल अधर जुग कोमल अति अनियारे।
मनु द्वै लाल अंगूर लिए सुक लखि मुनि मन मतवारे॥

कुन्द कली सी दन्त पांति मैं बीरा रंग सुहायो।
मनु दरक्यौ दारिम लखि प्रमुदित नासा सुक उड़ि आयो॥

आगम सूचित रेख लेख तल अधर आभ अरुनायो।
हलकत बेसर मोती सुन्दर अति जिय लगत सुहायो॥

बरुनी नैन चपल पल भौंहन सोभा के मनु भौना।
मनुष जाल करि मनहुं फंसाए खंजन के जुग छौना॥

प्रिया रंग माते अलसागे सरसाने रस साने।
पिया भाव के भरे अघट मनु सोहत जुगल खजाने॥

प्रिया ध्यान मैं मुंदे रहन की खुले रहन की देखौं।
झुकित रहन की याद परे नित जिनकी बान बिशेषै॥

खंजन मीन कमल नरगिस मृग सीप भौंर सर सांधे।
मनु इनके गुन एकति करिकै अंजन गुन दै बांधे॥

जहं जहं परत दृष्टि इनकी बन गलियां अलियां मोहैं।
मानिक नील हीर से बरसत खिलत कंज से सोहैं॥

मनु इन प्रन बदि राख्यौ ब्रज मैं कहर चहूं दिसि डारी।
जहां परै कतलाम करैं तित सब नव जोबनवारी॥

प्रिया रूप लखि रीझि मनहुं श्रवनन सों कहन गुन धाए।
तिनहीं के प्रतिबिम्ब मकर जुग कुंडल करन सोहाए॥

मानिनि मान पतिव्रत तिय को मुनि मन ज्ञान गरूरै।
सोभा सब उपमानन की यह बदि बदिकै नित चूरै॥

चंचल चपल चारु अनियारे फरकत सुथिर रहैं ना।
प्रियाबिम्ब प्रतिबिम्बित प्रतरिन प्रिया रूप के ऐना॥

मान तजत कोउ परी कराहत कोउ अति ब्याकुल भारी।
चली निकट आवत कोउ धाई जित तित इनकी मारी॥

कारी झपकारी अनियारी बरुनी सघन सुहाई।
चुभत नोक जाकी नित मम उर रस छाजन सी छाई॥

केसर आड़ रेख पर सोभित लाल तिलक छबि भेखा।
मान महावर के जुग पद की सोभित मनु जुग रेखा॥

ललित लटपटी लाल पाग बिच अलक अधिक छबि देई।
मनु अनुराग सिंगार लपटि रहे निरखत जिय हरि लेई॥

चिक्कन चिलकदार चुनवारी कारी सोंघे भीनी।
नव घूंघरवाली अलकावलि लटकत तिय मन छीनी॥

पाग पेंच पर ललित हीर सिरपेंच भल्यौ रंग दमकै।
गरब भर्‍यौ छबि छीनि जगत की ओप चोप करि चमकै॥

तापर मोर पखौआ सुन्दर हलत अतिहि छबि पाई।
जगत जीति सिगार सिखर पर धुजा मनहुं फहराई॥

सहज तियागन को मन लोभा लखि नख सिख की सोभा।
गोभा उठत प्रेम के जिय में देत मदन मन चोभा॥

कोमल तासु गन्ध सोभा प्रति अंगन सरस संवारी।
मनहुं नीलमनि अतर मेलि कै पुतरी सांचे ढारी॥

तैसिहि श्रीबृषभानु नन्दिनी रंग भरी संग राजै।
रूपगर्विता जुवति जूथ सत जा पद नख लखि लाजै॥

केहि अधिकार कहन सोभा को को पुनि सुनिबे लायक।
बिनु ब्रजनाथ सदा जो तिनके अन्तरंग पद पायक॥

हरि अनुराग प्रगटि पद तल जुग अरुन लखत मन मोहैं।
पिय हिय अधर नैन लागनि की जासु बानि नित जोहैं॥

नख दिव्य फटिक से सुन्दर कवि पै नहिं कहि जाहीं।
मानस मैं हरि होत रुद्र बपु लहि जिनकी परछाहीं॥

मेहंदी सुरंग महावर आभा मिलिकै अति दुति दमकै।
प्रिया अनय पर प्रीतम की अनुराग मेंड़ मनु चमकै॥

अनवट बिछिया पग पातन सो सोभित अति पद पीठी।
मनहुं कमल पर कलित ओस कन चन्द्र चन्द्रिका दीठी॥

पायजेब गूजरी छड़े दोउ पग मैं पड़े सुहाए।
उज्जल बिबिध मनोरथ मनु तिय पद लपटाए॥

चरनन की छबि किमि भाखैं ये जग के सब कवि छोटे।
बारम्बार प्रिया सोए पर जे हरि आप पलोटे॥

मानस मैं इनकी परछाहीं जब प्रगटै रंग भीने।
पग पेंच चन्द्रिकन श्याम घन इन्द्र धनुष छबि छीने॥

बिनु श्री हरि कै सखि समाज के जा पद पंकज धूरी।
नहि पाई शिव अज अजहूं लौं जद्यपि करत मजूरी॥

सारी नील लपटि रही कटि लौं रग अनुरूप सोहाई।
मनु हरि आप बसन्त मिस निस दिन रहत अंग लपटाई॥

अंचल हार माल मोतिन सों हिय अति सोभा पावै।
उमगि उमगि जेहि श्याम मनोहर बार बार उर लावै॥

निज जन अभय करन को दोऊ करन मेहंदी राजै।
कल पल तामैं मनु प्रवाल को पल्लव सोभा साजै॥

मुंदरी छल्ले बांक आरसी कंकन पहुंची सोहैं।
कड़े पड़े हथफूल अनूपम देखत पिय मन मोहैं॥

इन हाथन ही हाथन हाथन पिय को मन लै लीनों।
निज जन कों नित भक्ति दान बिनही प्रयास इन दीनों॥

इनहीं पै घरि हाथ पिया डोलत निरतत मद माते।
धाय मिलत आगे पिय कों ये याही तें रंग राते॥

पीठि परम सोभित चुटिला सों दीठि टरत नहिं टारी।
मानस मैं पिय प्रानन को जो एकहि राखनवारी॥

मुख सोभा कापै कहि आवै जहं बानी मति हारी।
पिया प्रान अवलम्ब एक सब उपमहिं दीजै बारी॥

पिय के जीवन मूरि अधर दोउ कोमल पतरे सोभैं।
पिय की रसना सजल करत लखि अमृत स्वाद के लोभैं॥

ठोड़ी नासा बेसर के बिच छोटो सो मुख राजै।
अति भोरो रंजित रंग पानन दन्तावलि मिलि छाजै॥

जुगल कपोलन झलकत लखियत करनफूल परछाहीं।
रूप सरोवर चलित कमल मनु कबिजन कहत लजाहीं॥

प्रतिबिम्बित ताटंक नगन मैं जुगल कपोल सुहाए।
मनु द्वै आरसि मध्य चन्द्र प्रतिबिम्बन बढ़त लखाए॥

तनिक तरकुली कानन सोहत केस पास ढुरि आए।
पास प्रगट परिवेष किनारिन मिलिकै अति छबि छाए॥

करन पिया सुख करन मनोहर सोभित परम लखाहीं।
पीतम बचन मुरलिका धुनि सुनि प्रमुदित रहहिं सदाहीं॥

नैन सकल रस ऐन ध्यान के द्वार छके रंग भारी।
पुतरिन के मिस सदा बिराजत जिनमैं श्याम बिहारी॥

सुन्दरता श्यामता बड़ाई चंचलता अरुनाई।
लाज सहित ये सिमिटि सिमिटि सब इनहीं मैं मनु आई॥

सहजहि कजरा फैलि रह्यो लखतहि पिय मन ललचाई।
भोरी चमकति सी पिय के मन बहु भाई॥

पलक पिया छबि ओट छबीली दया भरी अनियारी।
घनसारी कारी बरुनी राजत प्यारी झपकारी॥

भौंह जुगल छबि भरी धनुष सी किमि कबि पै कहि आवै।
मानहुं मैं जिनपै कबहूं नहिं कुटिलपनो दरसावै॥

रस सोहाग की आलबाल सों भाल ललित छबि छायो।
तनिक बेंदुली सह जापैं अति सेंदुर बिन्दु सुहायो॥

केस सुदेश चमक चिकनारे कारे अति सटकारे।
खुले बधे सबही बिधि सोहत सघन सुघूंघरवारे॥

सारी मुख परिबेष किनारी मैं सुन्दर मुख दमकै।
मंडल किरिनावलि तारावलि मैं ससि मानहुं चमकै॥

सोभा सुन्दरता सुबास कोमलता ललित लुनाई।
होड़ा होड़ी उमड़ि रहे सब कवि पैं नहिं कहि जाई॥

सोभा फैलत रस बरसत सो उमगत सी तरुनाई।
परसत तेज लुनाई लहकति उपजति सी छबिताई॥

जिनको जगत मैं रूप होत सब जाके तनिक बिलोकें।
ताकी सोभा को कहि पावै रहत रसन कबि रोकें॥

प्रान पिया रिझवार पास मुख चितवत ही रहि जाहीं।
ह्वै बलिहार प्रान मन वारत छिन छिन अति ललचाहीं॥

लिए रहत रुख भौंर निवारत इक टक बदन निहारै।
तनिक हंसनि बोलनि चितवनि पैं अपुनो सरबस वारै॥

सखी सहस तजि नित नित जाके गोहन लागे डोलैं।
हंसत प्रिया के हसे प्रान प्यारी के बोले बोलैं॥

गुन गावत लै पान खवावत दावन रहत उठाएं।
मुख चूमत माला सुरझावत दोउ कर लेत बलाएं॥

चुटकि देत बलिहार कहत हैं बोलनि चलनि सराहैं।
अपने कों धन धन करि मानत प्यारी प्रेम उमाहैं॥

जुगल परस्पर रंगे प्रेम रंग होरी खेलि न जानैं।
रहत दृगन ही मैं अरुझाने यहि कों सरबस मानैं॥

प्रिया श्रमित लखि चलत कुंज को मंथर गति अति मोहैं।
मरगजे बसन माल कुम्हिलानी बिथुरे कच मन मोहैं॥

हाथ हाथ पै दिए एक रंग अरुन भए दोउ राजैं।
लखि बलिहार होत सखिजन सब सरस आरती साजैं॥

इक गावत इक तार बजावत इक कुसुमन झरि लाई।
इक तृन तोरत इक पद परसत इक लखि रहत लुभाई॥

बाजत बेनु मन्द मधुरे सुर गावत कछु कछु प्यारी।
आवत चले कुंज रस भीने श्यामा श्री गिरिधारी॥

एहि बिधि खेल होत नितही नित बृन्दाबन छबि छायो।
सदा बसन्त रहत जहं हाजिर कुसुमित फलित सोहायो॥

जदपि सकल दिन अति छबि बरसत बृंदा बिपिन अपारा।
तऊ सुखद सब सों निरभय यह होरी रंग बिहारा॥

नित नित होरी रहैं मनावत याही तें ब्रजनारी।
बिहरत कुल की संक छांड़िकै जामैं गिरिवरधारी॥

सो होरी रस परम गुप्त है अनुभवहू नहिं आवै।
शिव शुक सों बिरलो कोउ कोऊ कछु पावैं तो पावै॥

पै श्रीबल्लभ चरन सरन जो होय सोई कछु जानै।
जो यह जानै सो फिर जग मैं और नहीं उर आनै॥

बिनु श्रीबल्लभ कृपा कोर यह निरखेहू नहिं सूझै।
जिमि गंवार मनि हाथ लेइ पै ताको मोल न बूझै॥

श्रीबल्लभ पद रज प्रताप सों यह लीला कहि गाई।
मनि सम पोहि पोहि अति रुचि सों माला रुचिर बनाई॥

रसिकन की सरवस्व परम निधि बल्लभियन की जानौ।
जुगल अनन्य जनन की तौ यह मूरि सजीवन मानौ॥

एहि कुरसिक जन हाथ न दीजौ रहियौ सीस चढ़ाई।
पुनि पुनि पढ़ि पुनि सुनि अनुभव करि लहियो रस अधिकाई॥

विषय बिदूषित ज्ञान करम मैं परे स्वर्ग सुख लोभे।
तेया रसहि परसिहैं नाहिन निज अभिमान न सोभे॥

केवल श्रीबल्लभ पद किंकर 'हरीचन्द' से दासा।
रहिहैं यह रस सने सदा मांगत बरसाने बासा॥48॥

होली

फागुन के दिन चार, री गोरी खेल ले होरी।
फिर कित तू औ कहां यह औसर क्यों ठानत यह आर।
जोबन रूप नदी बहती सम यह जिय मांझ बिचार।
'हरीचन्द' गर लगु पीतम के करु होरी त्यौहार ॥49॥

श्याम पिया बिनु होरी के दिनन में,
जिय की साध मेरी कौन पुजावै।
गाइ बजाइ रिझाइ सबहि बिधि,
कौन भुजन भरि कंठ लगावै।
गाल गुलाल लगाइ लपटि गर,
कौन काम की कसक मिटावै।
'हरीचन्द' मुख चूमि बार बहु,
फिर चूमन कों को ललचावै ॥50॥

प्रान पिया बिनु प्रान लेन कों,
फिर होरी सिर पर, घहरानी।
गावन लोग लगे इत उत सब
सुनि सुनि फिर हो चली मैं दिवानी ॥
फिर फूले टेसू सरसों मिलि
फिर कोइल कुहकत बौरानी।
'हरीचन्द' फिर मदन जोर भयो
का मैं करों बिरहिन अकुलानी ॥51॥

झिंझौटी

रसमसी सरस रंगीली अंखियां मद सों भरीं।
मुंदि मुंदि खुलत छकीं आलस सों ढुरि ढुरि जात ढरीं ॥
झूमत झुकत रंग निचुरत मनु मीन मंजीठ परीं।
'हरीचन्द' पिय छकत लखत ही सबहि भांति निखरीं ॥52॥

प्यारी तेरी भौंहैं जात चढ़ीं।
आलस बस ह्वै चंचलता तजि बांकेपनहि मढ़ीं ॥
झुकि झूमत सरसानी अंखियां मनु रस सिन्धु कढ़ीं।
'हरीचन्द' अधखुली रसीली कानन जात बढ़ीं ॥53॥

पूरबी

नैन फकीरिनि हो रामा अपने सैंयां के कारनवां।
रूप भीख मांगन के कारन छांनि फिरत बन बनवां॥
रूप दिवानी कल न परत कहुं बाहर कबहुं अंगनवां।
'हरीचन्द' पिय प्रेम उपासी छोड़ि धाम धन जनवां॥54॥

काफी

तुम बने सौदाई, जगत में हंसी कराई।
जाव प्यारे तुम हमसे न बोलो जिय न जलायो सदाई।
सूनी सेज बरु मैं सो रहूंगी तुम मत आओ यहांई॥
तुम बने सौदाई, जगत में हंसी कराई।
समझावत मानत नहिं नेकहु करि अपने मन भाई।
रहो खुशी से वहीं जाय के जहं मुख अबिर मलाई॥
तुम बने सौदाई, जगत में हंसी कराई।
प्यारे कियो और कों प्यारी इत उत प्रीति लगाई।
अपने मन के भले भए हौ झूठी बात बनाई॥
तुम बने सौदाई, जगत में हंसी कराई।
हमहिं लजावत मिलत और से जियरा जरावत आई।
माधवी फाग प्रान संग खेलि रहौंगी मैं बिष खाई॥
तुम बने सौदाई, जगत में हंसी कराई॥55॥

होली की लावनी

इत मोहन प्यारे उत श्री राधा प्यारी।
बृन्दावन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥ध्रुव॥
सब ग्वाल बाल मिलि डफ कर लिए बजावैं।
इत सखियां हरि को मीठी गारी गावैं॥
पचरंग अबीर गुलाल कपूर उड़ावैं।
पिचकारिन सों रंग की बरसा बरसावैं॥
लखि हंसत परस्पर राधा गिरिवरधारी।
बृन्दावन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥
इक ग्वालिन बनि बलदेव श्याल ढिग आई।
कर पकरन मिस पकर्‍यो हरि करि चतुराई॥

यह लखत सखी सब धेरि घेरि कै धाई।
गहि लिए श्याम रहिं बहु बिधि नाच नचाई॥
फगुवा दै छूटे कोऊ बिधि बनवारी।
बृन्दावन खेलत फाग बढ़ी छवि भारी॥
बंसी लै भागति हरि की कोऊ नारी।
तब मोहन हा हा खात करत मनुहारी॥
सो लखि कै कोऊ हंसत खरी दै तारी।
भागत कोउ गाल गुलाल लाइ दै गारी॥
सो छबि लखि कै कोउ तन मन डारत वारी।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥
चहुं ओर कहत सब हो हो हो हो होरी।
पिचकारी छूटत उड़त रंग की झोरी॥
मध ठाढ़े सुन्दर स्याम साथ लै गोरी।
बाढ़ी छबि देखत रंग रंगीली जोरी॥
गुन गाइ होत 'हरीचन्द' दास बलिहारी।
बृन्दाबन खेलत फाग बढ़ी छबि भारी॥56॥

होली की ग़ज़ल

गले मुझको लगा लो ए मेरे दिलदार होली में।
बुझे दिल की लगी मेरी भी तो ऐ यार होली में॥
नहीं यह है गुलाले सुर्ख उड़ता हर जगह प्यारे।
य आशिक की है उमड़ी आहे आतिशबार होली में॥

जबां के सदके गाली ही भला आशिक को तुम दे दो।
निकल जाए य अरमां जी का ऐ दिलदार होली में॥
गुलाबी गाल पर कुछ रंग मुझको भी जमाने दो।
मनाने दो मुझे भी जाने मन त्यौहार होली में॥

अबीरी रंग अबरू पर नहीं उसके नुमायां है।
अबीरी म्यान में है मगरबी तलवार होली में॥
है रंगत जाफरानी रुख अबीरी कुमकुमे कुच हैं।
बने हो खुद ही होली तुम तो ऐ दिलदार होली में॥
'रसा' गर जामे मै गैरों को देते हो तो मुझको भी।
नशीली आंख दिखला कर करो सरशार होली में॥57॥

बिहाग

बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौं।
बिरह उसांस उड़ाइ गुलालहिं दृग-पिचकारी मेलौं॥
गावैं बिरह धमार लाज तजि हो हो बोलि नवेली।
'हरीचन्द' चित माहिं लगाऊं होरी सुनो सहेली॥58॥

धमार

आज है होरी लाल बिहारी।
आज तोहिं हम देहैं नई गारी॥
तोहिं गारी कहा कहि दीजै।
अगिनित गुन क्यौं गनि लीजै॥
तेरो चन्द बंस को धारी।
जाने भोगी गुरु की नारी॥
तासों बुध भयो संकर जाती।
जासों तेरे कुल की पांती॥
तेरी कुल जननी इला रानी।
तामैं दोउ सुख मुद दानी॥
तेरी बेस्या सी कुल माता।
जाको नाम उरबसी ख्याता॥
जदुराज बड़े हैं ज्ञानी।
जिन दीनी अपनी जवानी॥
तेरो कंसराय सो मामा।
तेरी माय करी बे कामा॥
तेरी रोहिनी तजि घर बारा।
अब ब्रज मैं करत बिहारा॥
तेरो नन्द बहुत जस पायो।
जिन बिरधापन सुत जायो॥
तुम सकल गुनन मैं पूरे।
नट बिट सब ही बिधि रूरे॥
इमि कहत हंसत ब्रज नारी।
'हरीचन्द' मुदित गिरिधारी॥59॥

राग देस

बिहारी जी मति लागौ म्हारे अंक।
या गोकुल रा लोक चवाई तुम तौ परम निसंक॥
म्हारी गलिअन मति आओ प्यारा रूप भीख रा रंक।
'हरीचन्द' थारे कारन म्हाने लाग्यौं छै जगरो कलंक॥60॥

बिहारी जी कांई छे तम्हारो यहां काज।
तुम सौतिन रे मद रा मात्या रंग रंगीला साज॥
रैन बसे जहां वहीं सिधारो म्हाने तो लागे छे घणी लाज।
'हरीचन्द' थारे चरनन लागूं छिमा करौ महाराज॥61॥

राग कलिंगड़ा

बिहारी जी घूमै छो थारा नैणा।
कौन खिलार संग निसि जाग्या कहा करो छो सैणा॥
कौन रो यह लाया छौ रे प्यारे रंगन रंग्यौ उपरैणा।
'हरीचन्द' थैं जनम रा कपटी कौन सुनैं थारे बैणा॥62॥

राग धनाश्री

लाल मेरो अंचरा खोलै री।
गुरजन की नहिं मानै लाज मेरो अंचरा खोलै री।
पनियां लेन हौं निकसी मोसों हंसि हंसि बोलै री।
मीठी मीठी बात सौं प्यारो अमृत घोलै री।
'हरीचन्द' पिय सांवरो संग लागोई डोलै री॥63॥

राग सहाना

तैंड़े मुखड़े पर घोल घुमाइयां।
सांवलिये साजन छल बलिए तुझ पर बल बल जाइयां॥
हुई दिवाणी मोहन दा जो इशक जाल गल पाइयां।
'हरीचन्द' हंस हंस दिल लीता अब यह बे परवाइयां॥64॥

बिहाग

रे निठुर मोहिं मिल जा तू काहे दुख देत।
दीन हीन सब भांति तिहारी क्यों सुधि धाइ न लेत॥

सही न जात होत जिय व्याकुल बिसरत सब ही चेत।
'हरीचन्द' सखि सरन राखि कै भल्यो निबाह्यो हेत ॥65॥

काफी

अब तेरे भए पिया बदि कै।
दगे नाम सों यार तिहारे छाप तेरी ऊपर लै॥
कहां जाहि अब छोड़ि पियारे रहे तोहिं निज सरबस दै।
'हरीचन्द' ब्रज की कुंजन में डोलैंगे कहि राधे जै ॥66॥

सिन्दूरा

आज कहि कौन रुठायो मेरो मोहन यार।
बिनु बोले वह चलो गयो क्यों बिना किए कछु प्यार॥
कहा करौं हौं कछु न बनत है कर मींड़त सो बार।
'हरीचन्द' पछितात रहि गई खोइ गले को हार ॥67॥

असावरी

तुम मम प्रानन तें प्यारे हो तुम मेरे आंखिन के तारे हो॥
प्राननाथ हो प्यारे लाल हो आयो फागुन मास।
अब तुम बिनु कैसे रहोंगी तासों जीव उदास॥
प्रान प्यारे यह होरी त्योहार।
हिलि मिलि झुरमट खेलिये हो यह बिनती सौ बार।
प्रान प्यारे अब तो छोड़ौ लाज।
निधरक बिहरौ मो संग प्यारे अब याको कहा काज॥
प्रान प्यारे जौ रहिहो सकुचाय।
तौ कैसे कै जीवन बचिहै यह मोहिं देहु बताय।
प्रान प्यारे जग में जीवन थोर।
तो क्यों भुज भरिकै नहिं बिहरी प्यारे नन्दकिशोर॥
प्रान प्यारे तुम बिनु जिय अकुलाय।
तापै सिर पै फागुन आयो अब तो रह्यो न जाय॥
प्रान प्यारे तुम बिन तलफै प्रान।
मिलि जैये हौं कहत पुकारे एहो मीत सुजान॥
प्रान प्यारे यह अति सीतल छांह।
जमुना कूल कदम्ब तरे किन बिहरौ दे गल बांह॥

प्रान प्यारे मन कछु ह्वै गयो और।
देखि देखि या मधु रितु मैं इन फूलन को बे तौर॥
प्रान प्यारे लेहु अरज यह मान।
छोड़हु मोहि न अकेला प्यारे मति तरसाओ प्रान॥
प्रान प्यारे देखि अकेली सेज।
मुरुछि मुरछि परिहौं पाटी पै कर सों पकरि करेज॥
प्रान प्यारे नींद न ऐहै रैन।
अति ब्याकुल करवट बदलौंगी ह्वैहै जिय बेचैन॥
प्रान प्यारे करि करि तुम्हरी याद।
चौकि चौकि चहुं दिसि चितओंगी सुनै न कोउ फरियाद॥
प्रान प्यारे दुख सुनिहै नहिं कोय।
जग अपने स्वारथ को लोभी बादन मरिहौं रोय॥
प्रान प्यारे सुनतहि आरत बैन।
उठि धाओ मति बिलम लगाओ सुनो हो कमलदल नैन॥
प्रान प्यारे सब छोड़्यौ जा काज।
सोउ छांड़ि जाइ तौ कैसे जीवैं फिर ब्रजराज॥
प्रान प्यारे मति कहुं अनते जाहु।
मिलि कै जिय भरि लेन देहु मोहिं अपनो जीवन लाहु॥
प्रान प्यारे इनको कौन प्रमान।
ये तो तुम बिनु गौन करन कों रहत तयारहि प्रान॥
प्रान प्यारे पल की ओट न जाव।
बिना तुम्हारे काहि देखिहैं अंखियां हमैं बताव॥
प्रान प्यारे साथिन लेहु बुलाय।
गाओ मेरे नामहिं लै लै डफ अरु बेनु बजाय॥
प्रान प्यारे आइ भरौ मोहिं अंक।
यह तो मास अहै फागुन को यामै काकी संक॥
प्रान प्यारे देहु अधर रस दान।
मुख चूमहु किन बार बार दै अपने मुख को पान॥
प्रान प्यारे कब कब होरी होय।
तासों संक छोड़ि कै बिहरौ दै गल मैं भुज दोय॥
प्रान प्यारे रहौ सदा रस एक।
दूर करौ या फागुन मैं सब कुल अरु बेद विवेक॥
प्रान प्यारे थिर करि थापौ प्रेम।
दूर करौ जग के सबै यह ज्ञान करम कुल नेम॥

प्रान प्यारे सदा बसौ ब्रज देस।
जमुना निरमल जल बहौ अरु दुख को होउ न लेस।
प्रान प्यारे फलनि फलौ गिरिराज।
लहौ अखंड सोहाग सबै ब्रज बधू पिया के काज॥
प्रान प्यारे जाइ पछारौ कंस।
फेरौ सब थल अपुन दुहाई करि दुष्टन को धंस॥
प्रान प्यारे दिन दिन रहौ बसन्त।
यही खेल ब्रज मैं रहौ हो सब बिधि सुखद समन्त॥
प्रान प्यारे बाढ़ौ अबिचल प्रीति।
नेह निसान सदा बजै जग चलौ प्रेम की रीति॥
प्रान प्यारे यह बिनती सुनि लेहु।
'हरीचन्द' की बांह पकरि दृढ़ पाछे छोड़ि न देहु॥68॥

होली बन्दर सभा

(होली जबानी सुतुर्मुर्ग परी के)

इत उत नेह लगाइ भए पिय तुम हरजाई।
जूठी पातर चाटत घूमत घर घर पूंछ डुलाई॥
सौत भई अब सगी तुम्हारी हम तो भई हैं पराई।
पड़ी टुकड़े पर आई॥
मिल जा तू प्यारे क्यों नाहक फिरत मनो बौराई।
बिनती करत उस्ताद खयानत गलियन गलियन धाई॥
रात सब लोग जगाई॥69॥

पिय मूरख इत आइ देहु मोहिं बोल सुनाई।
वह दिन भूल गए जु घाट पर तुमने दही गिराई॥
पोछ उठाय रही पछताय न बोली हम सकुचाई।
तुम्हें कछु लाज न आई॥
दुख धोवन अरु रोग हरन तुम आप सरूप कहाई।
हम तो करि सन्तोष हैं बैठी बिरहा बोझ उठाई।
करो सीतल हिय आई॥
आसन सों बसन्त में गावत हम तो मलार सदाई।
भई उस्ताद न घाट न घर की खरी बात यह गाई।
रही आखिर मुंह बाई॥70॥

होली

कुंज बिहारी हरि संग खेलत कुंज बिहारिनि राधा।
आनन्द भरी सखी संग लीने मेटि बिरह की बाधा॥
अबिर गुलाल मेलि उमगावत रसमय सिन्धु अगाधा।
घूंघट मैं झुकि चूमि अंक भरि भेंटति सब जिय साधा॥
कूजति कल मुरली मृदंग संग बाजत धुम किट ता धा।
बृन्दाबन सोभा सुख निरखत सुरपुर लागत आधा॥
मच्यौ खेल बढ़ि रंग परस्पर इत गोपी उत कांधा।
'हरीचन्द' राधा माधव कृत जुगल खेल अवराधा॥71॥

तुम भौंरा मधु के लोभी रस चाखत इत डोलौ।
कलिन कलिन पर माते माते मधुरे मधुरे बोलौ॥
कहुं गुंजरत कहूं रस चाखत कहुं नाचत मदमाते।
बिलमि रहत कहुं कलियन फूलन रस लालच रसराते॥
कहुं मधु पियत अंक कहुं लागत करत फिरत कहुं फेरा।
कहुं कलियन बस परि दल मैं मुंदि रजनी करत बसेरा॥
तुमरो का परमान लाड़िले, सबै बात मन मानी।
तुम सों प्रीति करै सो बावरि 'हरीचन्द' हम जानी॥72॥

शिवरात्रि का पद

आजु शिव पूजहु हे बनमाली।
छोड़ि कुटी बाहर ह्वैं बैठे ए दोउ शोभाशाली॥
नहिं गंगा मृग चरम नहीं करि नहिं बिभूति सिर राजै।
नहिं चन्द केवल कछु नागिन लटकत सिर पर छाजै॥
तुम बड़भागी भक्त लाल चलि सेवन बहु बिधि कीजै।
'हरीचन्द' ऐसी भामिनि कों काहें रूसन दीजै॥73॥

संस्कृत राग बसन्त

हरिरिह विलसति सखि ऋतुराजे।
मदनमहोत्सव वेषविभूषित वल्लवरमणिसमाजे॥
प्रकटित वर्षावधि हृदयाहित युवतिसहस्रविकारे।
स्वावेशावृतमत्तीकृत नरलोक मयापहमारे॥

मुकुलितार्द्धमुकुलितपाटलगण शोभितोपवनदेशे।
शकुनपंडुरीकृत सुविवाहार्थित सिद्धार्थकवेशे॥
त्रिविधपवन पूरित पराग पटलांधमधुपझंकारे।
आम्र मंजरीबेष बिभूषित रतिसहचरी विहारे॥
कूजित केकावलि कलकंठप्रतिध्वनिपूरित तीरे।
प्रकटित हृदयगतानुराग कमलच्छलयमुनानीरे॥
पथिकबधूबधप्रायश्चित्तानलतनु दग्धपलाशे।
कान्तविरहपीतिमापीत वासन्ती कुसुमविकाशे॥
रूपगर्व्वभरहसितमालतीदर्शितदन्तकदम्बे।
कामविकाराञ्चितलतिका कृत वरसहकारालम्बे॥
मृगमदकश्मीरागुरुचन्दन चर्चित युवति समूहे।
सुरललनावांछितविहारलोकत्रयसुकृतदुरूहे॥
श्री वृषभानु नन्दिनीमोदविनोदामोदविताने।
कविवर गिरिधरदास तनूभव 'हरिश्चन्द्र' कृत गाने॥74॥

बसन्त

श्रीबल्लभ प्रभु वल्लभिअन बिन तुम्हैं कहा कोउ जानै हो।
निज निज रुचि अनुसारहि सब ही कछु को कछु अनुमाने हो॥
करमठ श्रुतिरत कर्म प्रवर्तक जज्ञ पुरुष कहि भाखै हो।
ज्ञानी भाष्यकार आतम रत विषय बिरत अभिलाखैं हो॥
मरजादा रत मानि, अचारज हरि पद रत सिर नावैं हो।
गुप्त परम रस अमृत प्रेम बपु नित्य बिहार बिहारी हो।
गो गोपी गोकुल प्रिय सुन्दर रास रमत गिरिधारी हो॥
प्रगटत निज जन मैं निज लीला आपुहि द्विज बपु लीन्हो हो।
'हरीचन्द' बिनु निज पदसेवक औरत नाहीं चीन्हो हो॥75॥

बसन्त

देखहु लहि रितुराजहि उपवन फूली चारु चमेली।
लपटि रहीं सहकारन सों बहु मधुर माधवी बेली॥
फूले वर बसन्त बन बन मैं कहुं मालती नवेली।
तापै मदमाते से मधुकर गूंजत मधु रस रेली॥
मदन महोत्सव आजु चलौ पिय मदन-मोहन सों भेंटैं।
चोआ चन्दन अगर अरगजा पिय के अंग लपेटैं॥
बहुत दिनन की साध पुजावैं सुख की रास समेटैं।
'हरीचन्द' हिय लाइ प्रानप्रिय काम कसक सब मेंटैं॥76॥

मेरे जिय की आस पुजाउ पियरया होरी खेलन आओ।
फिर दुरलभ ह्वैहैं फागुन दिन आउ गरे लगि जाओ॥
गाइ बजाइ रिझाइ रंग करि अबिर गुलाल उड़ाओ।
'हरीचन्द' दुख मेंटि काम को घर तेहवार मनाओ॥77॥

होरी नाहक खेलूं मैं बन में पिया बिनु होरी लगी मेरे मन में।
सूनो जगत दिखाई श्याम बिनु बिरह बिथा बढ़ी तन में॥
होरी नाहक खेलूं मैं बन में पिया बिनु होरी लगी मेरे मन में।
काम कठोर दवारि लगाई जिय दहकत छन छन में॥
'हरीचन्द' बिन बिकल बिरहिनि बिलपति बालेपन में।
होरी नाहक खेलूं मैं बन में पिया बिनु होरी लगी मेरे मन में॥78॥

बन मैं, आगि लगी है फूले देखु पलासु।
कैसे बचिहै बाल बियोगिनि देखि बसन्त बिलास॥
चलत पौन लै फूल बास होत काम परकास।
'हरीचन्द' बिनु श्याम मनोहर बिरहिन लेत उसास॥79॥

चहूं दिसि धूम मची है हो हो होरी सुनाय।
जित देखो तित एक यहै धुनि जगत गयो बौराय॥
उड़त गुलाल चलत पिचकारी बाजत डफ घहराय।
'हरीचन्द' माते नर नारी गावत लाज गंवाय॥80॥

नित नित होरी ब्रज में रहौ।
बिहरत हरि संग ब्रज जुवती गन सदा अनन्द लहौ॥
प्रफुलित फलित रहो वृन्दाबन मधुप कृष्ण गुन कहौ।
'हरीचन्द' नित सरस सुधामय प्रेम प्रवाह बहौ॥81॥

[सन 1881 ई. में लाइट यन्त्रालय बनारस से प्रकाशित]

फूलों का गुच्छा

सन 1882 ई.

समर्पण

मेरे प्राणप्रिय मित्र!

क्या तुम ने यह नहीं सुना है "रिक्तपार्णिन वश्येद्वै राजानं भेषजं गुरु" अर्थात् राजा और वैद्य और गुरु को कोरे हाथों नहीं देखना। तो मैं आज अनेक दिन पीछे तुम्हारा दर्शन करने आया हूं, इस से यह "फूलों का गुच्छा" तुम्हारे जी बहलाने के लिए लाया हूं जो अंगीकार करो तो परिश्रम सफल हो। यह मत सन्देह करना कि मैं राजा वा गुरु इन में कौन हूं, क्योंकि मेरे तो तुम्हीं राजा और तुम्हीं वैद्य और तुम्हीं गुरु हो।

14 सितम्बर 1882 — केवल तुम्हारा

॥ 1939 ॥ — **हरिश्चन्द्र**

फूलों का गुच्छा

नहीं का बाकी वक्त नहीं है जरा न जी में शरमाओ।
लब पर जां है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
कहां गईं वह पिछली बातें कहां गया वह था जो प्यार।
किधर छिपाया चांद सा मुखड़ा दिखलाता जो यार॥
बेहोशी में घबड़ा घबड़ा करके यही कहता हूं पुकार।
मर्ज बढ़ गया बहुत इससे बचना अब है दुश्वार॥
करो आरजू दिल की मेरे पूरी सूरत दिखलाओ।
लब पर जां है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
गरचे उम्र भर खराब रुसवा जलीलो परेशान रहा।
हमेशा मुझको तुम्हारे मिलने का अरमान रहा॥
जिया बेहयाई से अब तक कितना भी हैरान रहा।
जान न दे दी, हमेशा कौल का तेरे ध्यान रहा॥
पै मरने के सिवा है अब तदबीर कौन वह बतलाओ।
लब पर जां है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
तुम्हें कहे जो झूठा प्यारे उसे ही बनाए झूठा।
मुझको तुमसे नहीं कुछ बाकी है करना शिकवा॥
इसमें तुम्हारा कसूर क्या है होता है किस्मत का लिखा।
मर जायेंगे पर न इस जबां से होगा तेरा गिला॥
हुई जो होनी थी इससे जरा न जी में शरमाओ।
लब पर जां है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥
हम तो खैर हसरत लाखों ही जी में अपने ले के चले।
पर य खौफ है तुम्हें बेरहम न प्यारे कोई कहै॥
हंस के रुखसत करो न जी में तो कुछ भी अरमान रहे।
कोई जुदा गर होय तो मिलते हैं सब जाके गले॥
'हरीचन्द्र' से भला रस्म इतनी तो अदा करके जाओ।
लब पर जां है, भला अब तो प्यारे मिलते जाओ॥1॥

तुम्हीं निहांगर हौ तो जहां में सब य आशकारा क्या है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है॥
तेरा रंग गर नहीं है तो क्या दुनियां में दिखलाता है।
तेरी शक्ल बिन कहां से सूरत हर शय पाता है॥
तुझे हाथ गर नहीं तो खुद क्या यह जहान बन जाता है।
तुझे नहीं है जो मुंह तो किसका सबद सुनाता है॥
तुममें फलक गर नहीं तो किससे रोशन यह काशाना है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है॥
खयाल के बाहर तुम हौ तो यह खयाल सब है किसका।
तुम तो चुप हौ तो फिर यह शोर जहां में है कैसा॥
तुम्हें कान गर नहीं है तो आवाज कौन यह है सुनता।
ध्यान के बाहर जो तुम हो तो यह ध्यान कैसे आया॥
दूर समझ से हौ तो यह फिर कैसे सबने समझा है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है॥
तुझे न जिसने याद किया वह खुद अपने को है भूला।
बिगड़ा बस वह न तेरा जोयां जो ऐ यार बना॥
सब कुछ उसने खोया जिसने तुझे न ऐ दिलबर पाया।
अन्धा है वह जिसको यह नूर नहीं कुछ दिखलाया॥
हरजा पर गर नहीं हो तुम तो फिर य तमाशा कैसा है।
तुम्हीं छिपे हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है॥
तुझे कोई काबे में हाजिर कोई दैर में बतलाता।
भूले हैं सब अक्ल में बेशक हनके फर्क पड़ा॥
अरे नहीं एक जाई तू तो हाजिर रहना है हर जा।
फिर बकने से भला इन बातों के हासिल है क्या॥
बेवकूफ है 'हरीचन्द्र' जो इसमें कुछ भी कहता है।
तुम्हीं छिपै हौ तो यह सब जुहूर प्यारे किसका है॥2॥

छुड़ा के दीनों ईमां मुझको जहां में काफिर ठहराया।
दैरो हरम को इबादत को क्यौं मुझसे छुड़वाया॥
पिला पिला के शराब क्यों मलाना मुझको बनवाया।
बना के मेरा तमाशा क्यौं आलम को दिखलाया॥
अपना क्यौं मुझको दुनियां में प्यारे कहलाया।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया॥
कहां गईं वह बातैं प्यारी प्यारी तेरी ऐ दिलदार।
कहां गया वो तुम्हारा आगे का सा मुझ पर प्यार॥

कहां गई वह मीठी निगाहैं हर दम जो थीं दिल के पार।
कहां छिपाया निमानी सूरत तू ने मेरे यार॥
दिखा के अपना जल्वा फिर क्यों रुख फेरा क्यौं शरमाया।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया॥
क्यौं वह मै थी मुझे पिलाई जिसका न उतरै कभी नशा।
दो आलम में मुझे ऐ प्यारे क्यों बदनाम किया॥
काफिर क्यौं कहलाया मुझको दैरो हरम दोनों से गवां।
हम चश्मों में किया क्यौं मुझे मेरे प्यारे रुसवा॥
मेरे इश्क का नक्कारा दो आलम में क्यों बजवाया।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया॥3॥

होके तुम्हारा गुलाम अब मैं किसका प्यारे कहलाऊं।
आके तुम्हारे दर पै प्यारे किसके घर पर जाऊं॥
इसी शर्म में मरता हूं मैं अपना नाम क्या बतलाऊं।
अपने दिल को यार किस तरह कहो मैं समझाऊं॥
यही चाल थी तो फिर क्यौं तू गरीब परवर कहलाया।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया॥
अब तो न छोड़ूं तेरा कदम प्यारे जो होनी हो सो हो।
यार निबाहो तुम भी बाकी हैं जिन्दगी के दिन दो॥
कहां मैं जाऊं किसको ढूंढूं किसका होकर रहूं कहो।
मैं तो प्यारे तुम्हारा हूं तुम मेरे प्यारे हो॥
'हरीचन्द' मेरा है मैं उसका हूं यह था क्यों फरमाया।
था जो छोड़ना तो फिर पहले क्यौं मुझको अपनाया॥4॥

दिल में दिलबर ने जल्वा दिखला के बनाया मस्ताना।
मजा न पाया बयां जिसका गूंगे का गुड़ खाना॥
जब से यार ने अपने इश्क की मै से मुझे सरशार किया।
अपनी नरगिसी निमानी आंखों का बीमार किया॥
भोली सी उस सूरत पर मुझको निसार सौ बार किया।
जुल्फ दिखाकर पेंच में लट के झट गिरफ्तार किया॥
तब से सब कुछ छोड़ हुआ उस मस्ती से मैं दीवाना।
मजा न पाया बयां जिसका गूंगे का गुड़ खाना॥
कोई मुझे कहता काफिर बे ईमां कोई बतलाता।
कोई मुझसे बोलने में भी जबां से शरमाता॥

हाल देखकर हंसता कोई तरस कोई मुझ पर खाता।
कोई मुझको आनकर रो रो कर है समझाता॥
पर मैं क्या समझूं कि रंग में अपने हूं खुद मस्ताना।
मजा न पाया बयां जिसका गूंगे का गुड़ खाना॥
यह वह शै है जिसकी खोज में हर कोई हैरान रहा।
हर शखसों ने आज तक इसकी बाबत बहुत कहा॥
कोई मजाजी कहता हकीकी नाम किसी ने है रक्खा।
कोई मसजिद कोई बुतखाने में नित है जाता॥
पै हमने तो सीधा ताका उस साकी का मैखाना।
मजा न पाया बयां जिसका गूंगे का गुड़ खाना॥
यह वह रंग है जिसमें रंगा उस पर न दूसरा रंग चढ़ा।
यह वह मै है न उतरा महशर तक भी जिसका नशा॥
बगैर इसमें डूबे किसी को जरा न इसका पता लगा।
बिन मस्ती के इश्क के कोई नहीं हुशियार बना॥
'हरीचन्द' क्या इससे हासिल है व फकत हमने जाना।
मजा न पाया बयां जिसका गूंगे का गुड़ खाना॥5॥

खाक किया सबको तब यह अकसीर है कमाया हमने।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने॥
अपना बेगाना किया दोस्त को दुश्मन ठहराया हमने।
दीन व ईमां बिगाड़ा धरम सब डुबाया हमने॥
काम रंज से रहा चैन दम भर न कहीं पाया हमने।
दोनों जहां के ऐश को खाक में मिलाया हमने॥
जिसका नाम है शरम उसी को जग में शरमाया हमने।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने॥
जब से दिल में मेरे वह दिलबर जलवा अफरोज हुआ।
मिला मजा वह नहीं इस दुनियां में सानी जिसका॥
जब से आंखों में उसके मिलने का मेरी छा गया नशा।
सब कुछ भूला कुछ ऐसा हासिल मुझको हुआ मजा॥
काम किसी से रहा न ऐसा नशा है जमाया हमने।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने॥
छिपा न उसका इश्क राज आखिर को सब कुछ फाश हुआ।
बे दीनी का व शुहरा हुआ कि काफिर सब ने कहा॥

हुई यहां तक बरबादी घर बार खाक में सभी मिला।
ली बदनामी हुआ बेशर्मी हया दर दर रुसवा॥
बे ईमां बे दीं काफिर अपने को कहलाया हमने।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने॥
मिला मेरा दिलबर मुझको अब किसी बात की चाह नहीं।
कोई खफा हो या खुश हो कुछ मुझको परवा नहीं॥
सिवा यार के कूचे जाना दैरो हरम की राह नहीं।
सब कुछ मेरा यार है और कोई अल्लाह नहीं॥
'हरीचन्द्र' क्या बयां हो गूंगे होकर गुड़ खाया हमने।
सबको खोया यार अपने को तब पाया हमने॥6॥

श्री राधा माधव जुगल चरन रस का अपने को मस्त बना।
पी प्रेम पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा॥
यह वह मै है जिसके पीने से और ध्यान छुट जाता है।
अपने में औ दिलबर में फिर कुछ भेद नहीं दिखलाता है॥
इसके सुरूर से मस्त हरेक अपने को नजर बस आता है।
फिर और हवस रहती न जरा कुछ ऐसा मजा दिखाता है॥
टुक मान मेरा कहना दिल को इस मैखाने की तर्फ झुका।
पी प्रेम पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा॥
यह वह मै है जिसका कि नशा जब आंखों में छा जाता है।
मैखाना काबा बुतखाना सब एकी सा दिखलाता है॥
हुशियार समझता अपने को जग को अहमक बतलाता है।
वह काम खुशी से करता जिसके नाम से जग शरमाता है॥
जिसका नाम है शर्म आप वह इस मै से जाती शरमा।
पी प्रेम पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा॥
हुशियार वही है आलम में इस मै से जो सरशार बने।
हो कार उसी का पूरा जो इस दुनियां से बे कार बने॥
हो यार वही उसका जो इस जग में सबसे अरायार बने।
पहिने कमाल का जामा वह जिसका कि गरेबां तार बने॥
गर लुत्फ उठाना हो इसका तो तू भी मेरा मान कहा।
पी प्रेम पियाला भर भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा॥
गो दुनिया में उस दाना को हर शख्श बड़ा नादान कहे।
पर उसे मजा वह हासिल है जिससे वह हेच सबको समझे॥

कभी न उतरै उसका नशा जिसके सिर इसका भूत चढ़ै।
हंसते हंसते इस दुनियां से झट उसका बेड़ा पार लगे॥
इतबार न हो तो देख न ले क्या 'हरीचन्द' का हाल हुआ।
पी प्रेम पियाला भर भर कर कुछ इसी मै का भी देख मजा॥7॥

यह वह गोरख धन्धा है जिसका न किसी पर भेद खुला।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥
कहां से औ किस तरह से किसने क्यों यह पैदा किया जहां।
किसने सूरत खड़ी की किसने इसमें डाली जां॥
मिली कहां से अक्ल बशर को अक्ल सख्त यह है हैरां।
क्या है बोलता बयां से इसके बस हारी है जबां॥
फिर अखीर में कहां जायगा इसका नतीजा होगा क्या।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥
कोई बनानेवाला खुद है या खुद ही यह बनता है।
बदन है सोई जां है या वहां दूसरा बैठा है॥
बुरी भली बातों का नतीजा कहीं जाके कुछ मिलता है।
या मन माने वही करना दुनिया में अच्छा है॥
इसको मुअम्मा कहते हैं मुशकिल है हल करना जिसका।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥
गरचे खुदा है कोई तो हो फिर उसके मानने से है क्या।
मानै भी तो किस तरह कैसे कोई देवे बता॥
काबे में जाकर के झुका सिर करे उसको डर कर सिजदा।
या कोई बुत बना कर उसकी नित कर ले पूजा॥
होके एक मत मजहबवालो कुछ तो इसमें कहो जरा।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥
एक किसी ने माना किसी ने दो व किसी ने तीन कहा।
मिला बताया किसी ने उसे जहां से कहा जुदा॥
बुत में किसी ने पूजा किसी ने उसको पुकारा कह के खुदा।
अपनी अपनी तौर पर गरज कि सबने है खींचा॥
मगर न तै यह हुआ हकीकत में य माजरा है कैसा।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ॥
मैंने तो पहिचाना प्यारे तुमको तै कर सब झगड़े।
बने बनाये तुम ने सब का सब में मौजूद रहे॥
नाम तुम्हारा दिलबर है हैं बुत व खुदा दोनों झूठे।
यह सब जलवा तुम्हारा ही है जिधर चाहे देखे॥

हरीचन्द के सिवा किसी पर जरा न तेरा भेद खुला।
वह झगड़ा है फैसला जिसका कुछ अब तक न हुआ ॥8॥

दिलबर के इश्क में दिल को एक मिलावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
दिलबर को एक कर के अपने में साने।
उस दुनिया को इक अजब तमाशा जाने॥
मैं क्या हूं इसको जी देकर पहिचाने।
अपने को अपना सिरजनहारा माने॥
यह भेद का परदा आंखों से हट जावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
वह मै पी ले उतरे न नशा फिर जिसका।
वह सुरूर हो जिसका बयान क्या करना॥
सब दुनिया को बस जाने एक तमाशा।
इस धारा में अपने को समझै बहता॥
जब सब आलम यह नजर खेल सा आवे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
कुछ भले बुरे में फर्क न जी से रक्खे।
काले गोरे का एक रंग बस सूझे॥
दुशमन को दोस्त को एकी नजर से देखे।
मैखाना मसजिद मन्दिर एकी समझे॥
दो की गिनती भूले न जबां पर लावे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
जब अपना ही अपने को होए सौदा।
अपनी आंखों से देखे आप तमाशा॥
खुद अपनी करने लगै आप ही पूजा।
अपने ही नशे से आप बने मस्ताना॥
रग रग से अनलहक यही सदा बस आवे।
अपने को खोए तब अपने को पावे॥
तब 'हरीचन्द' मैं क्या कहूं यह दिखलाता।
जब चिनगारी से आप आग हो जाता॥
पत्ते से पेड़ बन्दे से खुदा कहलाता।
जब अपने को हर शै में हाजिर पाता॥

जुज से कुल कतरे से दरिया बन जावे।
अपने को खोए तब अपने को पावै ॥9॥

मिलै न मुझसे उसका दिल जिस में वह दिलाराम न हो।
मुंह न दिखावै जिसके मुंह में दिलबर का नाम न हो॥
लगै आग उस मैखाने में जहां न वह साकी होवै।
बरगशतः हो व मजलिस जहां दौर उसका न चलै॥
जिसमें उसका नशा न हो वह जहरे हलाहल होए मै।
बरहम होए वह सुहबत जहां न उसका जिक्र रहै॥
वीराना वह बाग हो जिसमें मेरा वह गुलफाम न हो।
मुंह न दिखावै जिसके मुंह में दिलबर का नाम न हो॥
पुरजे हो वह किताब जिसमें तेरा यार बयान न हो।
गारत हो वह दीन जिसमें तुझ पर ईमान न हो॥
ढहै वह काबा जहां वक्त सिजूदे के तेरा ध्यान न हो।
टूटै वह बुत तुम्हारी झलक जिसमें ए जान न हो॥
काफिर हो वह कुफ्र से तेरे यार जो कि बदनाम न हो।
मुंह न दिखावे जिसके मुंह में दिलबर का नाम न हो॥
हम तो पीकर शराब तेरी मस्त हुए ऐसे प्यारे।
सबको खोकर तुम्हें ऐ यार हमने पाया बारे॥
मजा मिला वह जिससे हेच दिखलाते हैं मजहब सारे।
छोड़ के सबको बैठे मैखाने में आसन मारे॥
दूर हो वह नाचीज हाथ में जिसके इश्क का जाम न हो।
मुंह न दिखावै जिसके मुंह में दिलबर का नाम न हो॥
कमी न देखै नजर उठाकर गरचे सामने खड़ा हो शाह।
या फकीर हो, नहीं कुछ इसकी भी मुझको परवाह॥
यार हो रिश्तेदार हो मुझको खाक नहीं कुछ उनकी चाह।
फकत मिलो तुम मेरे दिलबर औ मेरा करो निबाह॥
'हरीचन्द' तेरे कहलाकर और किसी से काम न हो।
मुंह न दिखावे जिसके मुंह में दिलबर का नाम न हो॥10॥

हजार लानत उस दिल पर जिसमें कि इश्के दिलदार न हो।
फूटें आंखें वे जिनमें बंधा अशक का तार न हो॥
हिज्र की तलखी नहीं है जिसमें तलख जिन्दगानी वह है।
जीस्त नहीं है सरासर बस सरगरदानी वह है॥

सुलझे रहना इसके जाल से निरी परेशानी वह है।
जीना क्या है अगर इस जां में नहीं जानी वह है॥
है जिन्दा दर गोर व जिसको मरने का आजार न हो।
फूटैं आंखें वे जिनमे बंधा अशक का तार न हो॥
वे महबूब मजेदारी गर हुई तबीअत में तो क्या।
झूठी है सब शायरी अगर नहीं दिल कहीं फिदा॥
नाहक दीदारी है सारी गर न इश्क का तीर लगा।
दुनियादारी भी है इक बोझ सिर्फ उलफत के बिना॥
बेचारा है वह जो जुल्मे दिलबर से लाचार न हो।
फूटे आंखें वे जिनमें बंधा अशक का तार न हो॥
मिलें जहन्नुम में वह बातें जिनका कुछ भी उसूल न हो।
क्यों वह काबिल है बनता जिसमें वह मकबूल न हो॥
सिजदा है य सर का मारना जिसमें कुछ भी हुसूल न हो।
फाजिल है वह बना क्यौं दुनियां में जो फुजूल न हो॥
क्यौं माला फेरे है वह गुल जिसके गले का हार न हो।
फूटें आंखें वे जिनमें बधा अशक का तार न हो॥
क्यों वह दौलतमन्द है जिसके पास जरे बेकसी नहीं।
क्या आजादी है उसको जिसकी अक्ल कुछ फंसी नहीं॥
बगैर उसके वस्ल के सब रंड़ रोना है यह हंसी नहीं।
उजड़ा है वह मोहनी छबि जिस दिल में बसी नहीं॥
'हरीचन्द' सब अभी खाक में मिलै जिसमें वह यार न हो।
फूटें आंखें वे जिनमें बंधा अशक का तार न हो॥11॥

तुम गर सच्चे हो तो जहां को कहते हैं सब क्यों झूठा।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किस का॥
जो झूठा होता है उसकी बातैं होती हैं झूठी।
ज्यों सपने की मिली सम्पत कुछ काम नहीं करती॥
सच्चों के तो काम हैं जितने वह सच्चे होते हैं सभी।
फिर बकते हैं भला क्यों सब के जहां झूठा है अजी॥
भला कहीं शीशे से हीरा हुआ किसी ने है देखा।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किसका॥
तुम ने बनाया कि बने खुद तो यह माया है कैसी।
एक जो हौ तुम तो फिर यह कौन दूसरी आके घुसी॥
गरचे काम उसका है तो फिर तेरी क्या तारीफ रही।
तुम करते हो क्यौं कहते हैं हुई किसमत की लिखी॥

हैं जो तुम्हारे शरीक तो फिर ला शरीक क्यौं नाम पड़ा।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किस का॥
जहां अगर झूठा है तो फिर मतवालों को क्या है काम।
फिर मजहब में भला क्यों करता है हर शख्स कलाम॥
वेद वगैरह भी तो जहां में हैं फिर क्या है इनसे काम।
इनके सिवा भी कहोगे जो कुछ सब झूठा है मुदाम॥
खुद झूठा जो हो उसका कहना भी सब है झूठा।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किस का॥
सभी शोर करते हैं सांप का रस्सी में यह धोखा है।
झूले हैं वह, जहां गर दो हो तो यह बात बन॥
यह तो तब हो जब कि सांप रस्सी यह कायम हों दो शै।
यहां तुम्हारे सिवा है कोई दूसरा कौन कहै॥
'हरीचन्द' तू सच है तो जग क्यौं अपने मुंह झूठ बना।
तुम निर्गुन हौ तो फिर यह गुन जग में सब है किस का॥12॥

ढूंढ़ फिरा मैं इस दुनिया में पश्चिम से ले पूरब तक।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक॥
मसजिद मन्दिर गिरजों में देखा मतवालों का जो दौर।
अपने अपने रंग में रंगा दिखाया सबका तौर॥
सिवा झूठी बातों व बनावट के न नजर आया कुछ और।
एक एक को टटोला खूब तरह हमने कर गौर॥
तेरे न दरशन हुए मुझे मैं बहुत खोज कर बैठा थक।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक॥
जो आकिल पंडित शायर हैं उनको भी जाकर देखा।
झगड़े ही में उन्हें हमने हर दम लड़ते पाया॥
जिसे बुरा कहता है एक उसको कहता कोई अच्छा।
कोई पुरानी लीक पीटै है कोई कहता है नया॥
जहां पै देखा नजर पड़ी ह्वां यह झूठी कोरी बक बक।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक॥
जिनको आशिक सुनते थे उनके भी जाकर देखे ढंग।
माशूकों के कहीं कुछ नजर पड़े हर तरह के रंग॥
वही बंधी बातैं हैं वही सुहबत है वही हैं उनके संग।
गरज कि इनसे मेरी जां आई है अब बहुत य तंग॥

मतलब की बातों को छोड़कर और नहीं कुछ है बेशक।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक॥
कोई मान कर सवाब तेरा इश्क जहां में करते हैं।
कोई गुनाह से खौफ दोजख का करके डरते हैं॥
कोई मजाजी इश्क में अपने मतलब का दम भरते हैं।
कोई मरके मिलें बैकुंठ इसी पर मरते हैं॥
'हरीचन्द' पर इनमें से पहुंचा कोई नहिं तेरे तलक।
कहीं न पाई मेरे दिलदार प्रेम की तेरे झलक॥13॥

[सन 1882 ई. में प्रकाशित]

प्रेम फुलवारी

सन 1883 ई.

'इश्क चमन महबूब का वहां न जावै कोय।
जावै तो जीवै नहीं जिए तो बौरा होय॥
सीस काट आगे धरौ तापर राखौ पांव।
इश्क चमन के बीच में ऐसा हो तो आव॥'

'सींचन की सुधि लीजौ मुरझि न जाय।'

मेरे प्यारे,

तुम्हैं कुंजों में वा नदियों के तटों पर फिरते प्रायः देखा है और इससे निश्चय होता है कि तुम बड़े सैलानी हो। पर यों मनमानी सैल करने में तुम्हारे कोमल चरनों में जो कंकरियां गड़ती हैं, वह जी में कसकती हैं। इस से मैंने रच रच कर यह फुलवारी बनाई है, सींचते रहना, यह भला मैं किस मुंह से कहूं। पर जैसे इधर उधर सैल करते फिरते हो, वैसे ही कभी कभी भूले भटके इस 'फुलवारी' में भी आ निकलोगे तो परिश्रम सफल होगा।

केवल तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

प्रेम फुलवारी

भरति नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर।
जयति अपूरब घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥1॥
जेहि लहि फिर कछु लहन की आस न चित में होय।
जयति जगत पावन करन प्रेम बरन यह दोय ॥2॥
चन्द मिटै सूरज मिटै मिटैं जगत के नेम।
यह दृढ़ श्री 'हरिचन्द' को मिटै न अबिचल प्रेम ॥3॥

प्रेम फुलवारी की भूमि

राग बिहाग

श्री राधे मोहिं अपुनो कब करिहौ।
जुगल रूप रस अमित माधुरी कब इन नैननि भरिहौ ॥
कब या दीन हीन निज जन पै ब्रज को बास बितरिहौ।
'हरीचन्द' कब भव बूड़त तें भुज धरि धाइ उबरिहौ ॥1॥

अहो हरि बस सब बहुत भई।
अपनी दिसि बिलोकि करुना निधि कीजै नाहिं नई ॥
जौ हमरे दोसन कों देखो तौ न निबाह हमारौ।
करिकै सुरत अजामिल गज की हमरे करम बिसारौ ॥
अब नहिं सही जात कोऊ विधि धीर सकत नहिं धारी।
'हरीचन्द' को बेगि धाइकै भुज भरि लेहु उबारी ॥2॥

पियारै याको नांव नियाव।
जो तोहिं भजै ताहि नहिं भजनो कीनो भलो बनाव ॥
बिनु कछु किए जानि अपुनो जन दूनो दुख तेहि देनो।
भली नई यह रीति चलाई उलटो अवगुन लेनो ॥

'हरीचन्द' यह भलो निबेर्‍यौ ह्वैकै अन्तरजामी।
चोरनि छांड़ि छांड़ि कै डांड़ौ उलटो धन को स्वामी ॥3॥

जानते जो हम तुमरी बानि।
परम अबार करन की जन पै, हे करुना की खानि।
तो हम द्वार देखते दूजो होते जहां दयाल॥
करते नहिं विश्वास बेद पै जिन तोहिं कह्यौ कृपाल।
अब तो आइ फंसे सरनन मैं भयो तुम्हारो नाम।
'हरीचन्द' तासों मोहिं तारो बान छोड़ि घनश्याम ॥4॥

प्यारे अब तो सही न जात।
कहा करैं कछु बनि नहिं आवत निसि दिन जिय पछितात॥
जैसे छोटे पिंजरा में कोउ पंछी परि तड़पात।
त्योंही प्रान परे यह मेरे छूटन को अकुलात॥
कछु न उपाव चलत अति व्याकुल मुरि मुरि पछरा खात।
'हरीचन्द' खींचौ अब कोउ बिधि छांड़ि पांच अरु सात ॥5॥

नाहिं तो हंसी तुम्हारी ह्वैहै।
तुमहीं पै जग दोस धरैगो मेरो दोस न दैहै॥
बेद पुरान प्रमान कहो को मोहिं तारे बिनु लैहै।
तासों तारो 'हरीचन्द' को नाहीं तो जस जैहै ॥6॥

फैलिहै अपजस तुम्हरो भारी।
फिर तुमकों कोऊ नहिं कहिहै मोहन पतित उधारी॥
वेदादिक सब झूठ होंइगे ह्वे जैहै अति ख्वारी।
तासों कोउ विधि धाइ लीजिए 'हरीचन्द' को तारी ॥7॥

तुम्हरे हित की भाखत बात।
कोउ बिधि अब की तार देहु मोहिं नाहीं तो प्रन जात।
बूंद चूकि फिरि घट ढरकावत रहि जैहौ पछितात।
बात गए कछु हाथ न ऐहै क्यों इतनो इतरात॥
चूक्यो समय फेरि नहिं पैहौ यह जिय धरि के तात।
तारि लीजिए 'हरीचन्द' को छांड़ि पांच अरु सात ॥8॥

भरोसो रीझन ही लखि भारी।
हमहूं को विश्वास होत है मोहन पतित उधारी॥
जो ऐसो सुभाव नहिं होतो क्यौं अहीर कुल भायो।
तजि कै कौस्तुभ सो मनि गल क्यौं गुंजा हार धरायो॥
क्रीट मुकुट सिर छोड़ि पखौआ मोरन को क्यों धार्‍यौ।
फेंट कसी टेंटिन पै मेवन को क्यौं स्वाद बिसार्‍यौ॥
ऐसी उलटी रीझ देखि कै उपजत है जिय आस।
जग निन्दित 'हरिचन्दहु' को अपना वहिंगे करि दास॥9॥

सम्हारहु अपुने को गिरिधारी।
मोर मुकुट सिर पाग पेंच करि राखहु अलक संवारी।
हिय हलकत बनमाल उठावहु मुरली धरहु उतारी।
चक्रादिकन सान दै राखो कंकन फंसन निवारी॥
नूपुर लेहु चढ़ाइ किंकिनी खींचहु करहु तयारी।
पियरो पट परिकर कटि कसि कै बांधौ हो बनवारी॥
हम नाहीं उनमें जिनको तुम सहजहि दीने तारी।
बानो जुगओ नीके अब की 'हरीचन्द' की बारी॥10॥

हम तो लोक भेद सब छोड़्यौ।
जग को सब नाता तिनका सो तुम्हरे कारन तोड़्यौ॥
छांड़ि सबै अपुनो अरु दूजेन नेह तुम्हहिं सों जोड़्यौ।
'हरीचन्द' पै केहि हित हम सों तुम अपुनो मुख मोड़्यौ॥11॥

जो पै सावधान ह्वै सुनिए।
तौ निज गुन कछु बरनि सुनाऊं जो उर मैं तेहि गुनिए॥
हम नाहिंन उन मैं जिनको तुम तारे गरब बढ़ाई।
बोलि लेहु पृथुराजहि तो कछु मो गुन परै सुनाई॥
चित्रगुप्त जौ बदि हमरे गुन निज खातन लिखि लेहीं।
तौ हम पाप आपुने तिनको हारि तुरत सब देहीं॥
एक समै औगुन गिनिबे को नागराज प्रन कीनौ।
नहिं गिनि गए सेस बहु रहि गयो सोई नाम तब लीनौ॥
सबै कहत हरि कृपा बड़ेंरी अब हीं परिहि लखाई।
पै जो मो अघ भय न भागि कै रहै न हृदय दुराई॥

बहुत कहां लौं कहौं प्रानपति इतने ही सब मानौ।
'हरीचन्द' सों भयो सामना नीके जुगओ बानौ ॥12॥

पिया हौं केहि बिधि अरज करौं।
मति कहुं चूकि होइ ब अदबी याही डरन डरौं ॥
भोरहि सों मेला सो लागत नर नारिन को भारी।
न्हात खात बन जात कुंज मैं केहि बिधि लेहुं पुकारी ॥
महल टहल मैं रहत लुभाने सांझहि सों सब राती।
तहं को बिघन बनै कछु कहि कै एहि डर धरकत छाती ॥
बड़े बड़े मुनि देव ब्रह्म शिव जहं मुजरा नहिं पावैं।
तहं हम पामर जीव कहो क्यौ घुसि कै अरज सुनावैं ॥
एक बात बेदन की सुनिए कछु भरोस जिय आयो।
'हरीचन्द' पिय सहस श्रवन तुम सुनतहि आतुर धायो ॥13॥

प्रेम फुलवारी के वृक्ष

प्राननाथ तुमसों मिलिबे को कहा जुगति नहिं कीनी।
पचिहारी कछु काम न आई उलटि सबै बिधि दीनी ॥
हेरि चुकी बहु दूतिन को मुख थाह सबन की लीनी।
तब अब सोचि बिचारि निकाली जुगति अचूक नवीनी ॥
तन परिहरि मन दै तुब पद हैं लोक तृगुनता छीनी।
'हरीचन्द' निधरक बिहरौगी अधर सुधा रस भीनी ॥14॥

इन नैनन को यही परेखो।
वह सुख देखि पिया संगम को फेर बिरह दुख देखो ॥
नहिं पाखान भए पिय बिछुरत प्रेम प्रतीत न लेखौं।
'हरीचन्द' निरलज ह्वै रोवत यह उलटी गति पेखो ॥15॥

देख्यौ एक एक कों टोय।
प्राननाथ बिनु बिरह संघाती और नाहिनै कोय।
माता पिता धन धाम मीत जग निज स्वारथ को होय।
'हरीचन्द' जो सोऊ बिछुरै तौ न मरै क्यों रोय ॥16॥

पियारे क्यों तुम आवत याद।
छूटत सकल काज जग के सब मिटत भोग के स्वाद ॥
जब लौं तुम्हरी याद रहै नहिं तब लौं हम सब लायक।
तुम्हरी याद होत ही चित में चुभत मदन के सायक ॥

तुम जग के सब कामन के अरि हम यह निहचै जानैं।
'हरीचन्द' तो क्यों सब तुमरे प्रेमहिं जग मैं सानैं ॥17॥

पियारे ऐसे तो न रहे।
जैसे भए कठोर अबै तुम तैसे कबहुं न हे॥
हम वह नाहिं कहा, कै मुरछित लखि तुम भुज न गहे।
कहां गईं वे पिछली बतियां जो तुम बचन कहे॥
जो तुम तनिक मलिन मुख देखत छिनहू नाहिं सहे।
सो 'हरीचन्द' प्रान बिछुरत कित बदन छिपाय रहे ॥18॥

एहि उर हरि रस पूरि गयो।
तन मैं मन मैं जिय मैं सब ठां कृष्ण हि कृष्ण भयो॥
भर्‌यौ सकल तन मन तौहू नहिं मान्यौ उमड़ि बह्यौ।
नैनन सों बैनन सों रोक्यो नाहिंन परत रह्यौ॥
लघु घट तामैं रूप समुद रह्यो कतौं न उमगि निकरै।
तापें लाए ज्ञान कहो तेहि जिय कित लाइ धरै॥
कौन कहै रखिवे की उलटो बहि जैहे या धार।
'हरीचन्द' मधुपुरी जाहु तुम ह्यां नहिं पैहो पार ॥19॥

रहैं क्यौं एक म्यान असि दोय।
जिन नैनन में हरि रस छायो तेहि क्यौं भावै कोय।
जा तन मन मैं रमि रहे मोहन तहां ग्यान क्यौं आवै।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्यां को जो पतिआवै॥
अमृत खाइ अब देखि इनारुन को मूरख जो भूलै।
'हरीचन्द' ब्रज तो कदली बन काटौ तो फिरि फूलै ॥20॥

गमन के पहिले ही मिल जाहु।
नाहीं तो जिय ही रहि जैहै तुव मुख देखन लाहु॥
जान देहु सब और चित्त के मिलि रस करन उमाहु।
'हरीचन्द' सूरति तो अपनी बारेक फेर दिखाहु ॥21॥

नैन भरि देखन हूं मैं हानि।
कैसे प्रान राखिए सजनी नाहिं परत कछु जानि॥
या ब्रज के सब लोग चवाई त्यौं बैरिन कुल कानि।
देखत ही पिय प्यारे को मुख करत चवाव बखानि॥

मिलिबो दूर रह्यौ बिन बातहिं बैठि करहिं सब छानि।
'हरीचन्द' कैसी अब कीजै या ललचौंहीं बानि ॥22॥

प्राननाथ जौ पैं ऐसी ही तुम्हें करन ही हांसी।
तौ पहिले ही क्यौं न कह्यौ हम मरतीं दै गल फांसी ॥
जिय जारन क्यौं जोग पठायो तोरि प्रीति तिनुका सी।
'हरीचन्द' ऐसी नहिं जानी ह्वैहैं हरि बिसुवासी ॥23॥

हरि संग भोग कियो जा तन सों तासों कैसे जोग करैं।
जो सरीर हरि संग लपटानी वापैं कैसे भसम धरैं ॥
जिन श्रवनन हरि बचन सुन्यौ है ते मुद्रा कैसे पहिरैं।
जिन बेनिन हरि निज कर गूंथीं जटा होइ ते क्यौं निकरैं ॥
जिन अधरन हरि अमृत पियो अब ते ज्ञानहिं कैसे उचरैं।
जिन नैनन हरि रूप बिलोक्यौ तिन्हैं मूंदि क्यों पलक परैं ॥
जा हिय सो हरि हियो मिल्यौ है तहां ध्यान केहि भांति धरैं।
'हरीचन्द' जा सेज रमे हरि तहां बघम्बर क्यौं बितरैं ॥24॥

फेरहू मिलि जैये इक बार।
इन प्रानन को नाहिं भरोसो ए हैं चलन तयार ॥
जौ छतियन सों लगि नहिं बिहरो प्यारें नन्द कुमार।
तौ दूरहि सों बदन दिखाओ करौ लाल मनुहार ॥
नहिं रहि जाय बात जिय मेरे यह निज चित्त बिचार।
'हरीचन्द' न्यौतेहु कै मिस बृज आओ बिना अबार ॥25॥

भईं सखि ये अंखियां बिगरैल।
बिगरि परीं मानत नहिं देखे बिना सांवरो छैल ॥
भईं मतवार धरत पग डगमग नहिं सूझत कुल गैल।
तजिकै लाज साज गुरुजन की हरि की भईं रखैल ॥
निज चवाव सुनि औरहु हरखत करत न कछु मन मैल।
'हरीचन्द' सब संक छांड़ि कै करहिं रूप की सैल ॥26॥

हौस यह रहि जैहै मन माहीं।
चलती बार पियारे पिय को बदन बिलोक्यौं नाहीं ॥
बैदन के बदले पिय प्यारे धाइ गही नहिं बाहीं।
'हरीचन्द' प्यासी ही जैहैं अधर सुधारस चाहीं ॥27॥

कहां गए मेरे बाल सनेही।
अब लौं फटी नहीं यह छाती रही मिलन अब केही॥
फेर कबै वह सुख धौं मिलिहै जिअत सोचि जिय एही।
'हरीचन्द' जो खबर सुनावै देहुं प्रान धन तेही॥28॥

याद परैं वे हरि की बतियां।
जो बन कुंजन बिहरत मधुरी कहीं लाइकै छतियां॥
कहं वे कुंज कहां वे खग-मृग कहं वे बन की पतियां।
'हरीचन्द' जिय सूल होत लखि वही उंजेरी रतियां॥29॥

जो पैं ऐसिहि करन रही।
तो क्यों मन मोहन अपुने मुख सों रस बात कही॥
हम जानी सुख सों बीतैगी जैसी बीति रही।
सो उलटी कीनी बिधिना नै कछू नाहिं निबही॥
हमैं बिसारि अनत रहे मोहन औरै चाल गही।
'हरीचन्द' कहा को कहा ह्वै गयो कछु नहिं जात कही॥30॥

अब वे उर मैं सालत बातैं।
जो नन्द नन्दन ब्रज मैं कीनी प्रेम प्रीति की घातैं॥
बेई कुंज वही द्रुम पल्लव वही उंजेरी रातैं।
एक प्रान प्यारो ढिग नाहीं बिष सम लागत तातैं॥
कर अक्रूर प्रान हरि लै गयो आयो दुष्ट कहां तैं।
'हरीचन्द' बिदरत नहिं छतियां भईं कुलिस की छातैं॥31॥

अब तौ लाजहु छूटि गई री।
ठोंकि बजाइ नगारौ दै के हौं पिय बसहि भई री॥
नहिं छिपाव कछु रह्यौ सखिन सों खुल्यो भेद सबई री।
परछत ह्वै रोवत पिय के हित ऐसी रीति लई री॥
बकि बकि उठत नाम प्रीतम को है यह रीति नई री।
'हरीचन्द' जग कहत भले ही यह अब बिगरि गई री॥32॥

अरे कोउ कहौ संदेसो श्याम को।
हमरे प्रान पिया प्यारे को अरु भैया बलराम को॥
बहुत पथिक आवत हैं या मग नित प्रति वाही गाम को।
कोऊ न लायो पिय को संदेसो 'हरीचन्द' के नाम को॥33॥

तुव मुख देखिबे की चाट।
प्रान न गए अजहुं मो तन तें लागी आस कपाट॥
नैन फेर चाहत हैं देख्यौ लीने गो धन ठाट।
बेनु बजावत सो मुख लालन वाही जमुना बाट॥
अटक्यौ जीब फंस्यौ जग मैं फिर तुव मिलिबे की बाट।
'हरीचन्द' हिय भयो कुलिस लौं गयो न अब लौं फाट॥34॥

निलज इन प्रानन सों नहिं कोय।
सो संगम सुख छांड़ि अजहुं ये जीवत निरलज होय॥
गए न संग प्रान प्रीतम के रहे कहा सुख जोय।
'हरीचन्द' अब सरम मिटावत बिना बात ही रोय॥35॥

अब मैं कैसे चलूंगी क्यौं सुधि मोहिं दिलाई।
पनघट ही पै पिय प्यारे को क्यौं दियो नाम सुनाई॥
दूर रह्यौ धर गति मति भूली पग न धर्‌यौ अब जाई।
'हरीचन्द' हौं तबहि लौं काज की जब लौं रहूं भुलाई॥36॥

हाय हरि बोरि दई मंझधार।
कीन्हीं थल की नहिं बेरे की भली लगाई पार।
नेह की नाव चढ़ाय चाव सों पहिले करि मनुहार।
अब कहो बिन अपराध तजी क्यौं सुनिहैं कौन पुकार॥
लोक लाज घर भूमि छुड़ाई करो घात सों वार।
'हरीचन्द' तापैं उतराई मांगत हौं बलिहार॥37॥

नैन ये लगि कै फिर न फिरे।
बिथुरी अलकन मैं फंसि फंसिकै रहि गए तहीं घिरे॥
पचि हारे गुरुजन सिख दैके नाहिंन रहत थिरे।
'हरीचन्द' प्रीतम सरूप मैं डूबे फिर न तिरे॥38॥

पिय सों प्रीति लगी नहिं छूटै।
ऊधौ चाहौ सो समझाओ अब तौ नेह न टूटै॥
सुन्दर रूप छोड़ि गीता को ज्ञान लेइ को कूटै।
'हरीचन्द' ऐसो को मूरख सुधा त्यागि बिख लूटै॥39॥

निठुर सों नाहक कीनी प्रीति।
अब पछिताय हाय करि रहि गई उलटि परो सब रीति।
हम तन मन धन जा हित खोयो उन मानी न प्रतीति।
'हरीचन्द' कहा को कहा कीनों बलि बिधना की नीति ॥40॥

पुरानी परी लाल पहिचान।
अब हमकों काहे को चीन्हौ प्यारे भए सयान॥
नई प्रीति नए चाहनवारे तुमहूं नए सुजान।
'हरीचन्द' पै जाइं कहां हम लालन करहु बखान ॥41॥

सखी री ये उरझौंहैं नैन।
उरझि परत सुरझ्यौ नहिं जानत सोचत समुझत हैं न॥
कोऊ नाहिं बरजै जो इनको बने मत्त जिमि गैन।
'हरीचन्द' इन बैरिन पाछे भयो लैन के दैन ॥42॥

सखी री ये अंखिया रिझवारि।
देखत ही मोहन सों रीझीं सब कुल कानि बिसारि॥
मिलीं जाइ जल दूध मिलै ज्यों नेकु न सकीं संभारि।
सुन्दर रूप बिलोकत रपटीं कांचे घट जिमि बारि॥
अब बिनु मिले होत हैं व्याकुल रोअत निलज पुकारि।
अपुने फल करि हमहिं कनौड़ी और दिवावत गारि॥
लोक लाज कुल की मरजादा तृन सम तजी बिचारि।
'हरीचन्द' इनको को रोकै बिगरीं जगहि बिगारि ॥43॥

सखी री ये बिसुवासी नैन।
निज सुख मिले जाइ पहिले पै अब लागे दुख दैन।
दगा दई ह्वै गए पराए बिसरायो सब चैन।
'हरीचन्द' इनके वेवहारन जानि नफा कछु है न ॥44॥

मरम की पीर न जानै कोय।
कासों कहौं कौन पुनि मानै बैठ रहीं घर रोय॥
कोऊ जरनि न जाननवारी बे महरम सब लोय।
अपुनो कहत सुनत नहिं मेरी केहि समुझाऊं सोय॥

लोक लाज कुल की मरजादा बैठि रही सब सोय।
'हरीचन्द' ऐसहि निबहैगी होनी होय सो होय ॥45॥

मोह कित तुमरो सबै गयो।
सोई हम सोई तुम तौ अब ऐसो काह भयो ॥
मान समै जिनको नेकहु दुख तुम कबहूं न सम्हारे।
तेई नैन रोवत निसि बासर कैसे सहत पियारे ॥
तनिकहु लखि मम मुख मुरझानो करि मनुहार मनाओ।
सोई परी धरनि पै देखत क्यौं तुरतै नहिं धाओ ॥
हाय कहा हौं कहौं प्रान पिय तुम आछत गति ऐसी।
'हरीचन्द' पिय कहां दुराये कहो प्रीति यह कैसी ॥46॥

जो पिय ऐसो मन मोहिं दीनो।
तो क्यौं एक निरालो जग नहिं मो निवास हित कीनो ॥
इन जग के लोगन सों मो सों बानिक बनि नहिं आवै।
उन करोर के मध्य एक क्यौं हम सों निबहन पावै ॥
कै तो जगहि छोड़ाओ हम सों राखौं कै ढिग मोहिं।
'हरीचन्द' दुख देहु न इतनो बिनय करत हौं तोहिं ॥47॥

खुलि कै दुखहु करन नहिं पावै।
कैसे प्रान रहैं जो सब बिधि हम ही भार उठावैं ॥
नैनन सदा चवाइन के डर दृग भरि पियहि न देख्यौ।
ताको दुख तो सह्यो कोऊ बिधि जानि करम को लेख्यौ ॥
रोवनहूं में हानि भई अव प्रगट हाय नहिं होई।
तो केहि बिधि जिय धीरज राखैं सो भाखौ सब कोई ॥
सब बिधि हमहिं बिपति तो ऐसे जीवनहू पै ख्वारी।
'हरीचन्द' सोयो बिधिना किन जाग हमारी बारी ॥48॥

पियारे तजी कौन से दोस।
इतनी हमहू तो सुनि पावैं फेर करैं सन्तोस ॥
तुमरे हित सब तज्यो आस इक तुम्हरी ही चित धारी।
एक तुम्हारे ही कहवाए जग मैं गिरवरधारी ॥
जो कोउ तुमरो होइ सोई या जग मैं बहु दुख पावै।
यह अपराध होइ तौ भाखो जासों धीरज आवै ॥

कियो और तो दोस कछू नहिं अपनी जान पियारे।
तुमरे ही ह्वै रहे जगत मैं एक प्रेम प्रन धारे॥
जो अपुने ही को दुःख देनो यहै आप को बानो।
तों क्यौं नहिं ताको अपने मुख प्यारे प्रगट बखानो॥
जासो चतुर होइ जग मैं कोउ तुम सों प्रेम न लावै।
'हरीचन्द' हम तौ अब तुमरे करौ जोई मन भावै॥49॥

सुरतिहू अब नहिं आव स्याम की।
प्राननाथ आरति नासन मन मोहन सब सुख धाम की॥
वेई नैन वही मन औ तन वही चटपटी काम की।
भए कुलिस लौं सब पिय बिछुरे निसि बीतत चौ जाम की॥
सुनियत लाल कहानिन मैं अब जैसे सीता राम की।
'हरीचन्द' कहा को कहा कीनो बलि या गति बिधि बाम की॥50॥

अब मैं कब लौं देखूं बाट।
भोर भयो हौं ठाढ़ि ही रहि गइ पकरे द्वार कपाट॥
हार पहार भए बिछुरे अरु बिख भए सुख के ठाट।
सूनी सेज बिनु पिया देखत क्यौं न गयो हिय फाट॥
बिरह सिन्धु मैं डूबी ग्वालिनि कहुं दिखात नहिं घाट।
'हरीचन्द' गहि बांह उठाओ जिय मति करहु उचाट॥51॥

होय हरि द्वै में ते अब एक।
कै मारो कै तारो मोहन छांड़ि आपनी टेक॥
बहुत भई सहि जात नहीं अब करहु बिलम्ब न नेक।
'हरीचन्द' छांड़ो हो लालन पावन पतित विवेक॥52॥

नावरि मोरी झांझरी हो जाय परी मंझधार।
निसि अंधियारी पानी लागत उलटो बहत बयार॥
सूझत नहिं उपाय बिनु केवट कोइ न सुनत पुकार।
'हरीचन्द' डूबत कु समय में धाइ लगाओ पार॥53॥

कोऊ ना बटाऊ मेरी पीर को।
सब अपने स्वारथ को कोऊ देनहार नहिं धीर को॥
कसकत सो बन रास बिलसिबो हरि संग जमुना तीर को।
उलहत हियो नैन भरि आवत लखि थल धीर समीर को॥

कहा कहौं कित जाउं न भूलत हंसि हंसि हरिबो चीर को।
'हरीचन्द' कोउ हाल कहत नहिं गोपराज बलबीर को ॥54॥

अबिरल जुगल कमल दृग बरसत सखि प खीजत होइ खिस्यानी।
आजु कुंज क्यौं सेज बिछाई तापै दई पिछौरी तानी॥
हौं धोखे ही गई सयन को चिन्तत पिय संजोग सुखदाई।
द्वारहिं तें अभिलाख लाख करि भरि आनन्द फूली न समाई॥
ढकी सेज लखि कै पिय सोए जानो भइ जिय अमित उमाही।
नूपुर खोलि चली हरुए गति पीतम अधर सुधा रस चाही॥
निकट जाइकै लाइ जुगल भुज जबै गाढ़ आलिंगन कीनो।
तब सुधि आई पिय घर नाहीं उन तो गौन मधुबन को कीनो॥
मुरछि परी करि हाय साथ ही मानहुं लता मूल सों तोरी।
बेसुधि लखि आईं बृज बनिता बैठि रहीं घेरे चहुं ओरी॥
छिरकत नीर गुलाब बदन पैं आंचर पौन करत कोउ नारी।
ब्याकुल सखि समाज सब रोअत मनु आजुहिं बिछुरे गिरिधारी॥
इतनेहू पै प्रान गए नहिं फिरहू सुधि आई अध राती।
है पापिनि जीवति ही जागी फटी न अजौं कुलिस की छाती॥
फिरि वह घर व्यवहार वहै सब करन परैं नित ही उठि माई।
'हरीचन्द' मेरे ही सिर बिधि दीनी काह जगत अमराई ॥55॥

रहे यह देखन कों दृग दोय।
गए न प्रान अबौं अंखियां ये जीवति निरलज होय॥
सोई कुंज हरे हरे देखियत सोई सुक पिक कीर।
सोई सेज परी सूनी ह्वै बिना मिले बलबीर॥
वही झरोखा वही अटारी वही गली वही सांझ।
वहै नाहिं जो बेनु बजावत ऐहै गलियन मांझ॥
ब्रजहू वही वही गौवें हैं वही गोप अरु ग्वाल।
बिडरे सब अनाथ से डोलत ब्याकुल बिना गुपाल॥
नन्द भवन सूनो देखत क्यों गयो नहीं हिय फाट।
'हरीचन्द' उठि बेगहि धाओ फेरहु ब्रज की बाट ॥56॥

नन्द भवन हौं आजु गई हो भूले ही उठि भोर।
जागत समय जानि मंगल मुख निरखन नन्द किशोर॥
नहिं बन्दीजन गोप गोपिका नाहिंन गौवें द्वार।
नहिं कोउ मथत दही नहिं रोहिनि ठाढ़ी लै उपचार॥

तब मोहिं सुरत परी घर नाहिन सुन्दर श्याम तमाल।
मुरछित धरनि गिरी द्वारहि पै लखि धाईं ब्रज बाल॥
लाईं गेह उठाइ कोउ बिधि जीवन गए अंदेस।
'हरीचन्द' मधुकर तुव आए जागी सुनत संदेस॥57॥

हठीले पिय हो प्यारिहु को हठ राखौ।
तुव रूसे सों काम चलै नहिं मधुर बचन मुख माखौ॥
आओ मधुबन छांड़ि फेरहू दूर कूबरिहि नाखौ।
'हरीचन्द' को मान राखिकै अधर सुधारस चाखौ॥58॥

अथ प्रेम फुलवारी के फूल

प्रीति की रीत ही अति न्यारी।
लोग बेद सब सों कछु उलटी केवल प्रेमिन प्यारी॥
को जानै समुझै को याको बिरली जाननहारी।
'हरीचन्द' अनुभव ही लखिये जामैं गिरबरधारी॥59॥

श्रीराधे सोभा कहा कहिये।
रसना अधम बहुरि अधिकारी कोऊ नहिं लहिये॥
कासों कहिये को समुझै एहि समुझि चित्त रहिये।
परम गुप्त रस सब सों कहि कहि कैसे चित दहिये॥
बिनु तुव कृपा अपार सिन्धु रस केहि प्रकार बहिये।
'हरीचन्द' एहि सोच छोड़ि सब मौन रह्यो चहिये॥60॥

अहो मम प्राननहू तें प्यारे।
ब्रज के धन प्रेमिन के सरबस इन अंखियन के तारे॥
गहवर कंठ होत क्यौं सुनतहि गुन गन परम तिहारे।
उमगत नैन हियो भरि आवत उलहत रोमहु न्यारे॥
प्राननाथ श्री राधा जू के जसुदा नन्द दुलारें।
'हरीचन्द' जुग जुग चिरजीअहु भक्तन के रखवारे॥61॥

पियारे थिर करि थापहु प्रेम।
परम अमृतमय जब लौं रवि ससि प्रेमिन पैं करि छेम॥
दूर करहु जग बंचनहारे ज्ञान करम कुल नेम।
'हरीचन्द' यह प्रीत दुन्दुभी तिनहीं गाजौ एम॥62॥

छोड़ि कै ऐसे मीठे नाम।
मित्र प्रानपति पीतम प्यारे जीवितेस सुख धाम॥
क्यौं खोजत जग और नाम सब करिकै मुक्ति सहेत।
ईश्वर ब्रह्म नाम हौआ सो श्रवन न जो सुख देत॥
तजि कै तेरे कोमल पंकज पद को दृढ़ विस्वास।
'हरीचन्द' क्यौं भटकत डोलत धारि अनेकन आस॥63॥

अहो मेरे मोहन प्यारे मीत।
क्यौं न निबाही मम जीवन लौं परम प्रेम की रीति॥
इतनेहू पै तोहिं न आई मेरी यार प्रतीत।
'हरीचन्द' बलिहारी रावरे भली करी यह नीत॥64॥

बिहरिहैं जग सिर पै दै पांव।
एक तुम्हारे ह्वै पिय प्यारे छांड़ि और सब गांव॥
निन्दा करौ बताओ बिगरी धरौ सबै मिलि नांव।
'हरीचन्द' नहिं कबहुं चूकिहैं हम यह अब को दांव॥65॥

निछावरि तुम पै सो कहा कीजै।
सब कछु थोरो लगत जगत में कैसे इनको लीजै॥
राज पाट घर बार देह मन धन सम्बन्धी जात।
नेम धरम कुल कानि लाज सब तृनहू से न लखात॥
प्रेम भरी तुमरी चितवनि की समता को जग कौन।
'हरीचन्द' तासों नहिं कहिए कछु रहिए गहि मौन॥66॥

न जानों गोविन्द कासों रीझै।
जब सों तप सों ज्ञान ध्यान सों कासों रिसि करि खीझै॥
वेद पुरान भेद नहिं पायो कह्यो आन की आन।
कह जप तप कीनों गनिका नै गीध कियो कह दान॥
नेमी ज्ञानी दूर होत हैं नहिं पावत कहुं ठाम।
ढीठ लोक बेदहु ते निन्दित घुसि घुसि करत कलाम॥
कहुं उलटी कहुं सीधी कहुं दोहुन तें न्यारी।
'हरीचन्द' काहू नहिं जान्यौ मन की रीति निकारी॥67॥

प्रेम फुलवारी के फल

रे मन करु नित नित यह ध्यान।
सुन्दर रूप गौर श्यामल छबि जो नहिं होत बखान॥
मुकुट सीस चन्द्रिका बनी कनफूल सुकुंडल कान।
कटि काछिनि सारी पग नूपुर बिछिया अनवट प्रान॥
कर कंकन चूरी दोउ भुज पै बाजू सोभा देत।
केसर खौर बिन्दु सेंदुर को देखत मन हरि लेत॥
मुख पैं अलक पीठ पैं बेनी नागिनि सी लहरात।
चटकीलो पट निपट मनोहर नील पीत फहरात॥
मधुर मधुर अधरन बंसी धुनि तैसी ही मुसकानि।
दोउ नैनन रस भीनी चितवनि परम हया की खानि॥
ऐसो अद्भुत भेष बिलोकत चकित होत सब आय।
'हरीचन्द' बिन जुगल कृपा यह लख्यो कौन पै जाय॥68॥

श्री राधे चन्द्रमुखी तुव नाम।
तदपि चकोर मुखी सी व्याकुल निरखत ससि घनश्याम॥
तैसेहि जदपि आप नव घन से मोहन कोटिक काम।
तदपि दरस तुव प्यास नैन जुग चातक रहत मुदाम॥
कौन कहै कै समुझै यामें जो कुछ करै कलाम।
'हरीचन्द' ह्वै मौन निरखिए जुगलरूप सुखधाम॥69॥

आजु महा मंगल भयो भोर।
प्राननाथ भेंटे मारग मैं चितयो प्रेम भरी दृग कोर॥
करौं निछावरि प्रान जीवनधन तनिकहिं निरखत भौंह मरोर।
श्याम सरूप सुधा रस सानी बानी बोलत नन्दकिशोर॥
कोटि काम लावन्य मनोहर चितवत प्रेम भरी दृग कोर।
नेह भर्‍यौ सब अंग सलोनो आनन्द रस भींज्यो प्रति पोर॥
सिद्ध होयगो सगरो कारज प्रातहि मिलौ प्रानपिय मोर।
'हरीचन्द' जुग जुग चिरजीओ मांगत ग्वालिनि अंचल छोर॥70॥

आजु चलि कुंजन देखहु छाई बिमल जुन्हाई।
पत्र रन्ध्र में घिर घिर आवत ता तर सेज बिछाई॥
समय निसीथ इकन्त भयो अति कहुं कहुं खग बोलत सुख पाई।
ललिता दूर बजावत बीना मधुर मृदंगहु परत सुनाई॥

आलिंगन परिरम्भन को सुख लूटत तहां जुगल रसदाई।
'हरिचन्द' वारत तन मन सब गावत केलि बधाई ॥71॥

कहत हौं बार करोरन होहु चिरंजी नित
नित प्यारे देखि सिरावै हियो।
एक एक आसिख सों मेरे
अरब खरब जुग जियो ॥
जब लौं रबि ससि भूमि समुद्र
ध्रुव तारा गन थिर कियो।
'हरीचन्द' तब लौं तुम प्रीतम
अमृत पान नित पियो ॥72॥

लाल के रंग रंगी तू प्यारी।
याही तें तन धारत मिस कै सदा कसूंभी सारी ॥
लाल अधर कर पद सब तेरे लाल तिलक सिर धारी।
नैननहू में डोरन के मिस झलकत लाल बिहारी ॥
तन मै भई नहीं सुघ तन की नख सिख तू गिरधारी।
'हरीचन्द' जग बिदित भई यह प्रेम प्रतीत तिहारी ॥73॥

हमारे ब्रज की रानी राधे।
जिन निज बस करि मोहन सह सब ब्रज नर नारी नाधे ॥
परम उदार धाइ सुमिरन के पहिलेहि नासत बाधे ॥
कहि 'हरीचन्द' सोच उनकी मोहिं जे नहिं इनहिं अराधे ॥74॥

सखियो याद दिवावति रहियो।
समय पाइकै सदा हमारिहु कबहुं जुगल सों कहियो ॥
केलि कोप अरु काज समय तजि सुख में तुम रुख लहियो।
करि मनुहार जोरि कर दोऊ मेरी बिथा उलहियो ॥
जो कछु क्रोध करैं तो ताको बिनती कर कर सहियो।
कहियो कबौं धाइकै बाहैं 'हरीचन्दहु' की गहियो ॥75॥

पिया मुख चूमत अलकन टारि।
सोई बाल मुंदी पलकन की छबि रहे लाल निहारि ॥
कबहुं अधर हलके कर परसत रहत भंवर निरवारि।
अंजन मिसि सिन्दूर निरखि रहे टरत न इक पल टारि ॥

जागी भरि आलस भुज सों गहि पियतम को भुज नारि।
खींचि चूमि मुख पास सोवायो 'हरीचन्द' बलिहारि ॥76॥

पियारे केहि बिधि देहुं असीस।
नित नित तौ हम कहत जियो तुम मोहन कोटि बरीस ॥
तऊ न बोध होत मेरे जिय नित उठि यहै मनाऊं।
कबहुं न बदन पिया प्यारे को मुरझ्यो देखन पाऊं ॥
तुम जीवो तुमरे जन जीवैं जब लौं सागर बारी।
कह्यौ कहत अरु नितहि कहैंगे जीओ लाल बिहारी ॥
भाग लहौ सब ही प्रेमी जन सुबस बसौ बृजबासी।
'हरीचन्द' जग जुगल बिराजैं प्रीति रीति परकासी ॥77॥

रहौं मैं सदा जुगल भुज छहियां।
अब मत छांड़ौ राधा मोहन पकरि दीन की बहियां ॥
सदा बसाओ श्री वृन्दाबन नित नव कुंजन महियां।
'हरीचन्द' इक रूप निबाहौ अब पन बिगरै नहियां ॥78॥

तुम्हैं कोउ खोजत है हो राधे।
ना जानै कौन सांवरो सो ढोटा पीरी कटि बांधे ॥
बड़े बड़े नैन भरि रहे जल सों बचन कहत आधे आधे।
बन बन पात पात करि खोजत प्यारी प्यारी रट नाधे ॥
कोमल मुख कुम्हलाइ रह्यौ वाको खरी प्रीति पथ साधे।
'हरीचन्द' सखि चलु न दया करि हरि बिरहा की बाधे ॥79॥

टरौ इन अंखियन सों अब नाहिं।
निवसो सदा सोहागिन राधा पुतरी सी दृग माहिं ॥
नील निचोल तरकुली कानन सिर सिन्दूर मुख पान।
काजर नैन सहज ही भोरी मन मोहनि मुसकान ॥
सदा राज राजौ वृन्दाबन सुबस बसौ ब्रज देस।
बरसौ प्रेम अमृत प्रेमिन पै नितहि श्याम घन भेस ॥
देखि यहै अब दूजो देखन परे न जब लौं प्रान।
'हरीचन्द' निबहौ स्वासा लगि यहै प्रेम को बान ॥80॥

श्री स्वामिनी जी की स्तुति*

श्री राधे तुही सुहागिनि सांची।
और कामिनिन को सुख सम्पति तुव रस आगे कांची॥
प्रेम सिद्धि तुव द्वार नटी लौं रहत रैन दिन नाची।
'हरीचन्द याही सों सब तजि हरि मति तुव रंग रांची॥81॥

राधे तुही सुहागिन पूरी।
जाको त्रिभुवन पति सेवक लौं अनु छिन करत मजूरी॥
और सबन की सुख सामां तुव आगे परम अधूरी।
'हरीचन्द' याही तें सोहत तोही को सेन्दुर चूरी॥82॥

राधे तुव सोहाग की छाया जग में भयो सोहाग।
तेरो ही अनुराग छटा हरि सृष्टि करन अनुराग॥
सत चित तुव कृति सों बिलगाने लीला प्रियजन भाग।
पुनि 'हरिचन्द' अनन्द होत लहि तुव पद पदुम पराग॥83॥

हमारी प्यारी सखियन की सिरताज।
ताहू की महरानी जो सब ब्रज मंडल महराज॥
सील सनेह सरस सोभा निधि पूरनि जन मन काज।
'हरीचन्द' की सरबस जीवनि पालनि भक्त समाज॥84॥

श्यामा प्यारी सखियन की सरदार।
अति भोरी गोरी रस बोरी सहजहि परम उदार॥
लाज कृपा सों भरे बड़े दृग बड़े छूटे तिमि बार।
'हरीचन्द' तनिकहिं बस कीनो श्री ब्रजराज कुमार॥85॥

राधा प्यारी सखियन की सिरमौर।
जदपि बहुत जुवती ब्रज मैं पै पिय कहं रुचत न और॥
जा मुख पंकज मधु की लालच बन्यो रहत मनु भौंर।
पान खवावत चरन पलोटत ढोरत बिजन चौंर॥

---

* यह अंश मल्लिक चन्द और कम्पनी द्वारा प्रकाशित सन 1881 ई. संस्करण में नहीं है। 81 से 91 पद तक नवोदिता हरिश्चन्द्र चन्द्रिका सन 1884 की संख्या से उद्धृत किए गए हैं।
—सम्पादक

मुख चूमत ललचाइ कबहुं पुनि कबहूं भरत अंकौर।
निज सुख जुगल रमत नित नित श्री बृन्दाबन निज ठौर॥
ऐसी स्वामिनि तजि को बरबस भरमैं इत उत दौर।
'हरीचन्द' सब तजि याही तें सेवत इनकी पौर॥86॥

हमारी सरबस राधा प्यारी।
सब ब्रज स्वामिनि हरि अभिरामिनि श्रीवृषभानु दुलारी॥
दावन देवी सुख सेवी सहज दीन हितकारी।
'हरीचन्द' गुन निधि सोभा निधि कीरति की सुकुमारी॥87॥

प्यारी कीरति कीरति बेलि।
प्रफुलित रूप रासि कुसुमावलि गुन सुगंध रस रेलि॥
सिंची प्रेम जीवन हरि बारौ जन भव आतप ठेलि।
'हरीचन्द' हरि कलप तरोवर लपटी सुखहिं सकेलि॥88॥

हमारी प्रान जीवन धन श्यामा।
ब्रज जन तरुनि चक्र चूड़ामनि पूरनि हरि मन कामा॥
अति अभिरामा सब सुख धामा हरि बामा मनि दामा।
'हरीचन्द' तजि साधन सबरे रटत एक तुव नामा॥89॥

राधे, सब बिधि जीति तिहारी।
अखिल लोक नायक रस सरबस तिन की दृग उंजियारी॥
तजिकै जुवति सहस्र रहत तुव दिसि टक एक निहारी।
'हरीचन्द' आनन्दकन्द आनन्द दान करति बलिहारी॥90॥

आजु भुव सांचो भयो अनन्द।
जन हिय कुमुद बिकासन प्रगट्यौ ब्रज नभ पूरन चन्द॥
जो आनन्द छिप्यो हो अब लौं तोहिं प्रगटि दिखरायो।
मरजादा परवाह दुहुंन सों प्रेम छानि बिलगायो॥
भटकत फिरत श्रुतिन के बन मैं परम पन्थ नहिं सूझ्यो।
जो कछु कह्यौं कहूं को सास्त्रन ताको मरम न बूझ्यो॥
भक्ति कही तौ नेह बिना की नेहहु ब्यसन बिना को।
ब्यसनहु कह्यौ जुपै कहुं कहुं तौ परवन चार दिना को॥
परम नेह सों एक भाव रस इनहीं प्रीति दिखाई।
'हरीचन्द' भक्तन हिय बाजी जासों प्रेम बधाई॥91॥

जय जय भक्त बछल भगवान।
निज जन पच्छ रच्छ कर नित प्रति सहजहि दयानिधान॥
अधम उधारन जन निस्तारन निस्तारन जस गान।
'हरीचन्द' करुनामय केसव सब ब्रज जन के प्रान॥92॥

जय जय करुनानिधि पिय प्यारे।
सुन्दर स्याम मनोहर मूरति ब्रज जन लोचन तारे॥
अगिनित गुन गन गने न आवत माया नर वपु धारे।
'हरीचन्द' श्रीराधा वल्लभ जसुदा नन्द दुलारे॥93॥

[सन 1883 ई. में मेडिकल हाल प्रेस बनारस से प्रकाशित]

कृष्ण चरित्र

सन 1883 ई.

कृष्ण चरित्र

आजु हरि छलि कै लाए प्यारी।
पार उतारन मिस नौका पै रसिक राज गिरिधारी।
औघट घाट लगाइ नाव निज बिहरत करि मनुहारी।
'हरीचन्द' सखि लखत चकित चित देत प्रान धन वारी ॥1॥

जुगल छबि नैनन सों लखि लेहु।
ठाढ़े बाहुं जोरि कुंजन मैं अवसर जान न देहु॥
सांझ समय आगम बरसा के फूल्यौ बन चहुं ओर।
लहरत कालिन्दी जल झलकत आवत मन्द झकोर॥
प्रथम फूल फूल्यौ आमोदित रसमय सुखद कदम्ब।
ता तट ठाढ़े जुगल परसपर किए बाहुं अवलम्ब॥
पसरित महामोद दसहूं दिसि मत्त भौंर रहे भूलि।
'हरीचन्द' सखि सरबस वार्‌यो सो छबि लखि जिय फूलि ॥2॥

आजु ब्रज भई अटारिन भीर।
आवत जानि सुरथ चढ़िकै पथ सुन्दर श्याम सरीर॥
अटा झरोखन छज्जन छाजन गोखन द्वारन द्वार।
मुख ही मुख लखिए जुवतिन के सोभा बढ़ी अपार॥
फूली मनौ रूप फुलवारी हरि हित साधि सनेह।
कै चन्दन की वंदन माला बांधी व्रजप्रति गेह॥
करत मनोरथ बिबिध भांति सब साजें मंगल साज।
'हरीचन्द' तिनको दरसन दै दुख मेट्यौ ब्रजराज॥

हरि हम कौन भरोसे जीएं।
तुमने रुख फेरे करुनानिधि काल गुदरिया सीएं॥
यों तो सबही खात उदर भरि अरु सब ही जल पीएं।
पै धिक धिक तुम बिन सब माधो बादिहिं सासा लीएं॥

नाथ बिना सब व्यर्थ धरम अरु अधरम दोऊ कीएं।
'हरीचन्द' अब तो हरि बनिहै कर अवलम्बन दीएं ॥4॥

नाथ बिसारे तें नहिं बनिहै।
तुम बिनु कोउ जग नाहिं मरम की पीर पिया जो जनिहै।
हंसिहै सब जग हाल देखि कोउ नाहिं दीनता गनिहै।
उलटी हमहिं सिखावनि दैहै मेरी एक न मनिहै॥
तुम्हरे होइ कहां हम जैहैं कौन बीच मैं सनिहै।
'हरीचन्द' तुम बिनु दयालता और कोउ नहि ठनि है ॥5॥

नवल नील मेघ बरन दरसत त्रयताप हरन।
परसत सुख करन भक्त सरन जमुन बारी।
सोभित सुन्दर दुकूल प्रफुलित कल कमल फूल।
मेटत भव सूल भक्ति मूल ताप हारी॥
कोमल बर बालु रचित वेदि बिबिध तटनि खचित।
नव लता प्रतान सचित नचित भृंग भारी।
चंचल चल लोल लहर कलि कल करबाल कहर।
जग जन जम जाल जहर भक्तन सुखकारी॥
जल कन लै त्रिबिध पौन करत जबै कितहुं गौन।
परसत सुख भौन सीत सोहत संचारी।
अवगाहत मनुज देव करत सकल सिद्ध सेव।
जानत नहिं भेव भेद बेद मौन धारी॥
ब्रजबर मंडल सिंगार गोप गोपिका अधार
प्राननाथ कंठहार जुगल बर बिहारी।
पुष्टि सुपथ पुष्टि करत सेवा को फल वितरत
'हरीचन्द' जस उचरत जयति तरनि बारी ॥6॥

आजु सुर मुनि सकल ब्रजपुराधीश को
रत्न अभिषेक बर बेद बिधि सों करत।
सकल तीरथ विमल गंग जमुनादि नद
चतुर्सागर मिलित नीर कलसन भरत॥
रिग यजुर साम अथर्वनिक वेद ध्वनि
स्तोत्र पौराण इतिहास मिलि उच्चरत।
शंख भेरी पणव मुरज ढक्का बाद घनित
घंटा नाद बीच बिच गुंजरत॥

बिबिध सर्व्वोषधी मलय मृगमद मिलित
बारि घनसार केसर सुगन्धित परत।
कुसुम रल तुलसि मिश्रित सुमन्त्रित सबिध
पूर्व्व अधिवासितोदक घटन तें ढरत॥
श्याम अभिराम तन पीत पट सुभग अति
बारि सों अंग सटि लखत ही मन हरत।
झरित कल केस कुंचितन तें नीर कन
मनहुं मुक्तावली नवल उज्जल झरत॥

बदत बन्दी बिरद सूत चारन चारु चरित
गावत खरे तान मानन भरत।
देत आसीस द्विज हस्त श्रीफल किए।
सुर जुहारत खरे रुख लिए जिअ डरत॥
घोष सीमन्तिनी गान मंगल शब्द
श्रवन पुट जात दुख दुरित दारिद दरत।
दास 'हरीचन्द' के हृदय मधि तौन छबि
खचित वल्लभ कृपा बल न टारे टरत॥7॥

मेरे प्यारे जी अरज लीजो मान हो मान।
अबं तुमरो दुख सहि न सकत हम
मिलि जाओ मीत सुजान हो जान
एक बेर ब्रज में फिर आओ
इतनो देहु मोहि दान हो दान
'हरीचन्द' अब चलन चहत हैं
तुम बिन मेरे प्रान हो प्रान॥8॥

प्रात समै प्रीतम प्यारे को मंगल बिमल नवल जस गाऊं।
सुन्दर स्याम सलोनी मूरति भोरहि निरखत नैन सिराऊं॥
सेवा करौं हरौं त्रैबिधि भय तब अपने गृह कारज जाऊं।
'हरीचन्द' मोहन बिनु देखे नैनन की नहिं तपत बुझाऊं॥9॥

प्रात समै हरि को जस गावत
उठि घर घर सब घोष कुमारी।
कोउ दधि मथत सिंगार करत कोउ
जमुना न्हान जात कोउ नारी॥

हरि रस मगन दिवस नहिं जानत
मंगलमय व्रज रहत सदा री।
'हरीचन्द' लखि मदन मोहन छबि
पुनि पुनि जात सबै बलिहारी ॥10॥

हरि को मंगलमय मुख देखो।
सुन्दर स्याम अंग छबि निरखत जीवन जनम सुफल करि देखो ॥
देखि प्रथम पिय प्यारे को मुख तब जग और काज अवरेखो।
हरीचन्द ब्रजचन्द लखें बिनु जगतहि बादि बृथा करि पेखो ॥11॥

आनन्द निधि सुख निधि सोभा निधि बल्लभ बदन बिलोकौ भोर।
परम भक्त सुखदायक तृपित करन जन नैन चकोर ॥
सकल कला पूरन गुन सागर नागर नेही नवल किसोर।
'हरीचन्द' रसिकन के सर्वस इन पैं वारौं मैन करोर ॥12॥

हरि मोरी काहें सुधि बिसराई।
हम तो सब बिधि दीन हीन तुम समरथ गोकुल राई ॥
मो अपराधन लखन लगे जौ तौ कछु नहिं बनि आई।
हम अपुनी करनी के चूके याहू जनम खुटाई ॥
सब विधि पतित हीन सब दिन के कहं लौं कहौं सुनाई।
'हरीचन्द' तेहि भूलि बिरद निज जानि मिलौ अब धाई ॥13॥

देखो माई हरि जू के रथ की आवनि।
चलनि चक्र फहरानि धुजा को वह तुरगन की धावनि ॥
जापै जुगल दिए गलबांही सोभित नैन मिलावनि।
बीरी खानि चहूं दिसि चितवनि हंसि मुरि कै बतरावनि ॥
घेरें सखी चारु चारों दिसि नव मलार की गावनि।
'हरीचन्द' चित तें न टरति है सो सोभा सुख पावनि ॥14॥

घनि वे दृग जिन हरि अवलोके।
रथ चढ़ि कै डोलत ब्रज बीथिन
ब्रज तिय द्वार द्वार गति रोके ॥
इक कर रास रासपति लीने
झूमत चलत तुरंग नचावत।

दूजे कर सांटी लै दृग की
सांटी ब्रज तिय चित्त लगावत ॥
इत उत चितवत चलत चख
हंसत हंसावत गावत डोलैं ॥
छकत रूप लखि निरखनहारे
काहू सों हंहि कै मृदु बोलैं ॥
संग भीर आभीर जनन की
मुरछल चंवर डुलावत धावै।
'हरीचन्द' ते धन धन जग में
जे यह सोभा निरखि सिरावैं ॥15॥

कछु रथ हांकनहू मै भांति।
यह कछु औरहि चलनि चलावनि औरे रथ की कांति ॥
कहूं ठिठकि रथ रोकि घरिक लौं ठाढ़े रहत मुरारि।
कहुं दौरावत अतिहि तेज गति कहुं काहू सों रारि ॥
काहु को अंग परसि रथ चालनि काहु लेनि दौराय।
चाबुक चमकि तनक काहू तन मारनि देनि छुआय ॥
काहू के घर को फेरी दै घूमनि करि रथ मन्द।
बार बार निकसनि वाही मग मैं जानी 'हरीचन्द' ॥16॥

वह धुज की फहरानि न भूलति।
उलटि उलटि कै मो दिस चितवनि
रथ हांकनि हरि की जिय सूलति ॥
लै गए सब सुख साथहि मोहन
अब तो मदन सदा हिय हूलत।
सो सुख सुमिरि सुमिरि कै सजनी
अजहूं जिय रस बेली फूलत ॥
ले आओ कोउ मो ढिग हरि को
बिरह आगि अब तन उनमूलत।
'हरीचन्द' पिय रंग बावरी
ग्वालिनि प्रेम डोर गहि झूलत ॥17॥

आजु दोउ बैठे मिलि बृन्दाबन नव निकुंज
सीतल बयार सेवैं मोद भरे मन मैं।

उड़त अंचल चल चंचल दुकूल कल
स्वेद फूल की सुगन्ध छाई उपवन मैं ॥
रस भरे बातैं करैं हंसि अंग भरैं
बीरी खात जात सरसात सखियन मैं।
'हरीचन्द' राधा प्यारी देखि रीझे गिरिधारी
आनन्द सों उमगे समात नहि तन मैं ॥18॥

गंगा पतितन को आधार।
यहि काल कठिन सागर सों तुमहिं लगावत पार ॥
दरस परस जलपान किए तें तारे लोक हजार।
हरिचरनारविन्द मकरंदी सोहत सुन्दर धार ॥
अवगाहत नर देव सिद्ध मुनि कर अस्तुति बहु बार।
'हरीचन्द' जन तारनि देवी गावत निगम पुकार ॥19॥

जयति कृष्ण पद पद्म मकरंद रंजित
नीर नृप भगीरथ बिमल जस पताके।
ब्रह्म द्रवभूत आनन्द मंदाकिनी
अलकनन्दे सुकृति कृति विपाके ॥
शिव जटा जूट गह्वर सघन वन मृगी
विधि कमंडलु दलित नीर रूपे।
कपिल हुंकार भस्मीभूत निरयगत
स्पर्श तारित सगर तनुज भूपे ॥
जन्हुतनया हिमालय शिखर निकर
वर भेद भंजित इन्द्र हस्ति गर्वे।
असह धारा प्रवह वारि रिधि मानहृत
मिलित शतधा रचित बेग खर्व्वे ॥
विविध मन्दिर गलित कुसुम तुलसी निचय
भ्रमर चित्रित नवल विमल धारे।
सिद्ध सीमंतिनी सुकुच कुंकुम मिलत
हिलित रंजित सुगन्धित अपारे ॥
लोल कल्लोल लहरी ललित चलित बल
एक संगत द्वितिय तर तरंगे।
झरति झर झर झिल्लि सरस झंकार
वर वायु गत रव बीन मान भंगे ॥
मकर कच्छप नर संकुलित जीवजय
शीत पानीय तृष्णादि नाशे।

कलित कूजित सुकारंड कलरव नाद
कोकनद कुमुद कल्हार काशे॥
निज महिम बल प्रबल अर्कसुत नर्क भय
दूर कृत पतित जन कृत पवित्रे।
पान मज्जन मरण स्मरण दर्शन मात्र
निखिल अघ राशि नाशन चरित्रे॥
मुक्ति पथ सोपान विष्णु सायुज्य प्रद
परम उज्ज्वल श्वेत नीर जाते।
जयति यमुना मिलित ललित गंगे
सदा दास 'हरिचन्द' जन पक्षपाते॥20॥

सारंग

प्यारे को कोमल तन परसि आवत आज
याही तें बयार अंग सीतल करत है।
सनित सुगन्ध मन्द मन्द आइ मेरे ढिग
प्रेम सों हुलसि सखी अंकम भरत है।
हिय की खिलत कली मदन जगन अली
पिय के मिलन को चित चाव बितरत है।
'हरीचन्द' चलि कुंज जहां करै भौर गुंज
प्यारे सेज साजि मेरे ध्यान को धरत है॥21॥

श्याम अभिराम रति काम मोहन सदा
बाम श्री राधिका संग लीने।
कुंज सुख पुंज नित गुंजरत भौंर जहां
गुंज बन दाम गल माहिं दीने।
कोटि घन विज्जु ससि सूरमनि नील अरु
हीर छबि जुगल प्रिय निरखि छीने।
करत दिन केलि भुज मेलि कुच ठेलि
लखि दास 'हरिचन्द' जयजयति कीने॥22॥

आजु मुख चूमत पिय को प्यारी।
भरि गाढ़े भुज दृढ़ करि अंग अंग उमगि सुकुमारी॥
लहि इकन्त प्रानहु तें प्रियतम करत मनोरथ भारी।
उर अभिलाख लाख करि करि कै पुजवत साध महा री॥
मानत धन धन भाग आपुने देत प्रान धन वारी।
'हरीचन्द' लूटत सुख सम्पति श्री वृषभानु दुलारी॥23॥

घन गरजत बरसत लखि दोऊ औरहु लपटि लपटि रहे सोय।
स्यामा स्याम इकन्त कुंज में अरु तीसरो निकट नहिं कोय॥
दामिनि दमकत ज्यौं ज्यौं त्यौं त्यौं गाढ़ी भरन भुजा की होय।
'हरीचन्द' बरसत घन उत इत रस बरसत पिय प्यारी दोय॥24॥

धन दिन धन मम भाग कुंज धन दोऊ जहां पधारे।
राखौंगी बिनती करि दोऊन कों आजु प्रिया पिय प्यारे॥
नैन पांवरे बिछाइ करौंगी आंचर बिजन बयारे।
'हरीचन्द' वारौंगी सर्बस गाऊंगी गुन गन भारे॥25॥

आज धन भाग हमारे यह घरी धन
मेरे घर आए गिरिराज धरन।
नाचों गाओंगी करौंगी बधाई वारि
डारौंगी तन मन धन प्रान अभरन॥
राखौंगी कंठ लाइ जान न देहौं फेर
करि बिनती बहु गहि कै चरन।
'हरीचन्द' बल्लभ बल पीओंगी
अधर रस, छांड़ोंगी अब न सरन॥26॥

मंगल महा जुगल रस केलि।
जिन तृन करि जग सकल अमंगल पायन दीने पेलि॥
सुख समूह आनन्द अखंडित भरि भरि धर्‍यौ सकेलि।
'हरीचन्द' जन रीझि भिंजायो रस समुद्र उर झेलि॥27॥

नाथ मैं केहि बिधि जिय समझाऊं।
बातन सों यह मानत नाहीं कैसे कहौ मनाऊं॥
जदपि याहि विश्वास परम दृढ़ वेद पुरानहु साखी।
कछु अनुभवहू होत कहत है जद्यपि सोइ बहु भाखी॥
तऊ कोटि ससि कोटि मदन सम तुव मुख बिनु दृग देखें।
धीरज होत न याहि तनिकहू समाधान केहि लेखें॥
निस दिन परम अमृत सम लीला जेहि मानै अरु गावै।
तेहि बिनु अपुने चख सों देखें किमि यह धीरज पावै॥
दरसन करै रहै लीला मैं जिय भरि आनन्द लूटै।
तृप्त होहिं तब मन इन्द्रिय को अनुभव भुस लै कूटै॥
सम्पति सपने की न काम की मृग तृष्णा नहिं नीकी।
'हरीचन्द' बिनु सुधा जिआवै कैसे छछिया फीकी॥28॥

भाजु दोउ बैठे हैं जल भौन।
हौज किनारे भरे मौज सों प्यारी राधा रौन॥
सावन भादों छुटत फुहारे नीरहि नीर दिखाई।
भींज रहे दोउ तहं रस भींजे सखि लखि लेत बलाई॥
बूंद बदन पर सोभा पावत कमल ओस लपटाने।
विधुरे वारन मैं मनु मोती पोहे अति सरसाने॥
झीने बसन श्याम अंग झलकत सोभा नहिं कहि जाई।
मनहुं नीलमनि सीसे सम्पुट धर्‍यो अतिहि छबि छाई॥
धार फुहार सीस पर लैहों लखि कै दृग सुख पावै।
मनु अभिषेक करत सब सुर मिलि छबि सों परम सुहावै॥
कै जमुना बहु रूप धारि कै जुगल मिलन हित आई।
चपला घन देखि और घन मिलि बरसा बरसाई॥
लोचन ही लखिए सो सोभा कहे कह्यौ नहिं आवै।
'हरीचन्द' बिनु बल्लभ पद बल और लखन को पावै॥29॥

मन मेरो कहुं न लहत विश्राम।
तृष्णातुर धावत इत तें उत पावत कहुं नहिं ठाम॥
कबहुंक मोह फांस मैं बांध्यौ धन कुटुम्ब मुख तोहै।
तिनहूं सों जब लहत अनादर तब व्याकुल ह्वै मोहै॥
कबहूं काहू नारि प्रेम बरा ताहि को सरबस मानैं।
ताहू सों प्रति प्रेम मिलन बिनु अकुलि और उर आनैं॥
देवी देव तन्त्र मन्त्रन में कबहुं रहत अरुझाई।
तिनहूं सो जब काज सरत नहिं तबहि रहत अकुलाई॥
कबहूं जगत के रसिक भगत सज्जन लखि तिन सों बोलै।
कालो हृदय देखि तिनहूं को उचटत झटकत डोलै॥
जिन कहं मित्र सुहृद करि मानत राखत जिनकी आसा।
तेऊ मुख भंजत तब छोड़त सबही सों विश्वासा॥
कबहुं ब्रह्म बनि रहत आपुही जामैं दुख नहिं व्यापै।
माया प्रबल तहां अभिमानहिं नासि जगत मत थापै॥
सोचत कबहुं निकसि बन जानो पैं जब आपु बिलोकै।
तृष्णा क्षुधा साथ तहहूं लखि ताहू सों चित रोकै॥
ब्रह्मा सों बढ़ि लै पिपीलिका लौं जग जीव सु जेते।
कोऊ देत न अचल भरोसो निज स्वारथ के तेते॥
तृष्णा अमित सुखाए छिछिले छीलर सब जग माहीं।
'हरीचन्द' बिनु कृष्ण बारि निधि प्यास बुझत कहुं नाहीं॥30॥

कवित्त

ए री प्रान प्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे
जिय मै बिरह घटा घहरि घहरि उठै।
त्यौं ही 'हरिचन्द' सुधि भूलत न क्यौं हूं तेरो
लांबो केस रैन दिन छहरि छहरि उठै।
गड़ि गड़ि उठत कटीले कुच कोर तेरी
सारी सो लहरदार लहरि लहरि उठै॥
सालि सालि जात आधे आधे नैन बार तेरे
घूंघट की फहरानि फहरि फहरि उठै॥31॥

सवैया

हमैं नीति सों काज नहीं कछु है अपुनो धन आपु जुगाए रहो।
हमरी कुल कानि गई तो कहा तुम आपनी को तो छिपाए रहो॥
हम सों सब दूरि रहो 'हरिचन्द' न संग मैं मोहिं लगाए रहो।
हम तो बिरहा मैं सदा ही दहैं तुम आपुनो अंग बचाए रहो॥32॥

पद

जयति जन्हु तनया सकल लोक की पावनी।
सकल अघ ओघ हर नाम उच्चार मैं
पतित जन उद्धरनि दुक्ख विद्रावनी।
कलि काल कठिन गज गर्व्व खर्व्वित करन
सिंहिनी गिरि गुहागत नाद श्रावनी।
शिव जटा जूट जालाधिकृत बासिनी
बिधि कमंडलु बिमल रमनि मन भावनी॥
चित्रगुप्तादि के पत्र गत कर्म्म बिधि
उलटि निज भक्त आनन्द सरसावनी।
दास 'हरिचन्द' भागीरथी त्रिपथगा
जयति गंगे कृष्ण चरन गुन गावनी॥33॥

श्री गंगे पतित जानि मोहिं तारौ।
जो जस अब लौं मिल्यौ तुम्हैं नहिं सो जग में बिस्तारौ॥
जेते तारे हीन छीन तुम अब लौ पतित अपारे।
ते मेरे लेखे तृन ऐसे कहा गरीब बिचारे॥

पाप अनेक प्रकार करन की बिधि कोऊ कहं जानै।
हौं तो बदि बदि करौं अनेकन जेहि जम चित्रहु मानै॥
हम कहं जो पै तारि लेहु जग तारनि नाम कहाई।
'हरीचन्द' तो जस जग मानै नातरु बादि बड़ाई॥34॥

जै जै विष्णु पदी श्री गंगे।
पतित उधारनि सब जग तारनि नव उज्जल अंगे॥
शिव सिर मालति माल सरिस वर तरल तर तरंगे।
'हरीचन्द' जन उधरनि देवी पाप भोग भंगे॥35॥

पतित उधारनी मैं सुनी।
इक बाजी खेलौ हमहूं सों कैसी गुनी॥
कबहुं न पतित मिले जग गाढ़े ताही सों गायो मुनी।
'हरीचन्द' को जौ तुम तारौ तौ तारिनि सुर धुनी॥36॥

गंगा तुमरी सांच बड़ाई।
एक सगर सुत हित जग आई तार्‌यौ नर समुदाई॥
इक चातक निज तृषा वुझावन जाचत घन अकुलाई।
सो सरवर नद नदी वारिनिधि पूरत सब झर लाई॥
नाम लेत जल पिअत एक तुम तारत कुल अकुलाई।
'हरीचन्द' याही तें तो सिव राखी सीस चढ़ाई॥37॥

आजु हरि चन्दन हरि तन सोहै।
तरु तमाल पै सांझ धूप सम देखत तिह मन मोहै॥
ता पैं फूल सिंगार सुहायो बरनि सकै सो को है।
'हरीचन्द' बड़ भाग राधिका अनुदिन पिय मुख जोहै॥38॥

आजु जल बिहरत पीतम प्यारी।
गल भुज दिये करिनि गज से दोउ अवगाहत सुभ बारी॥
सखी खरीं चहुं ओर चारु सब लै ग्रीषम उपचारी।
चन्दन सोंधो फूल माल बहु झीने बसन संवारी॥
कोउ गावत कोउ तर बजावत कोउ करत मनुहारी।
कोउ कर सों जल जन्त्र चलावत 'हरीचन्द' बलिहारी॥39॥

मिटत न हौस हाय या मन की।
होत एक तें लाख लाख नित तृष्णा बुझत न तन की॥

दैव कृपा सों जौ तमो गुनी बृत्ति दूर ह्वै जाई।
तौ रजोगुनी इच्छा बाढ़त लाखन जिय में आई॥
ताहू के मिटे सतोगुन संचय अपुनी लोभ न छोड़ै।
जस कीरति चिर नाम मान पै चंचल चित कहं मोड़ै॥
भए बिरागिहु भक्त सिद्ध कहवावन की रुचि बाढ़ै।
रचि रचि छन्द नाम करिबे को इच्छा तव जिय काढ़ै॥
तासों याहि जीतिबो दुरघट जानि जतन यह लीजै।
'हरीचन्द' घनस्याम मिलन की हौस करोरन कीजै॥40॥

बे दिन सपन रहे कै सांचे।
जे हरि संग बिहरत याही बृज बीति गए रंग राचे॥
कहां गईं वह सरद रैन सब जिन मैं हरि संग नाचे।
कहं वह बोलन हंसन मिलन सुख मिले जौन बिनु जांचे॥
हाय दई कैसी कीनी दुख सहत करेजे कांचे।
'हरीचन्द' हरि बिनु सूनो बृज लखनहि हित हम बांचे॥41॥

हरि हो अब मुख वेगि दिखाओ।
सही न जात कृपानिधि माधो एहि सुनतहि उठि धाओ॥
लखि निज जन डूबत दुख सागर क्यौं न दया उर लाओ।
आरत बचन सुनत चुप ह्वै रहे निठुर बानि बिसराओ॥
करुनामय कृपाल केसव तुम क्यौं निज प्रनहि डिगाओ।
लखि बिलखत 'हरिचन्द' दुखी जन क्यौं नहिं धीर धराओ॥42॥

यह मन पारद हू सों चंचल।
एक पलक मैं ज्ञान बिचारत दूजे मैं तिय अंचल॥
ठहरत कतहुं न डोलत इत उत रहत सदा बौरानो।
ज्ञान ध्यान की आन न मानत याको लम्पट बानो॥
तासों या कहं कृष्ण विरह तप जो कोउ ताप तपावै।
'हरीचन्द' सो जीति याहि हरि भजन रसायन पावै॥43॥

आजु अभिषेकत पिय कों प्यारी।
धरि दृग ध्यान नवल आंसुन के भरि भरि उमगे बारी॥
कज्जल मिलित चारु मृगमद से बिरह परब लखि भारी।
बरखत गलित कुसुम बेनी तें सोई फूलझर डारी॥
ब्याकुल कल नहिं लहत तनिक सुख हाय मन्त्र उच्चारी।
'हरीचन्द' लखि दुखित सखी जन करि न सकत उपचारी॥44॥

जनमतहि क्यौं हम नाहिं मरी।
सखि बिधना बिध ना कछु जानत उलटी सबहि करी॥
हरि आछत ब्रज चार चवाइन करि निन्दा निदरीं।
तिन भय मुखहु लखन नहिं पायो हौसहि रहत भरीं॥
अब हरि सो ब्रज छोड़ि अनत रहे बिलपत बिरह जरी।
यह दुख देखन ही जनमाई बारेंहि बिपत परी॥
सुख केहि कहत न जान्यौ सपनेहु दुख ही रहत दरी।
'हरीचन्द' मोहिं सिरजि बिधिहि नहिं जानौं कहा सरी॥45॥

मेरो हठ राखो हठीले लाल।
तुम बिनु मान कौन मेरो रखिहै समुझहु जिय गोपाल॥
हमकों तो तुमरो बल प्यारे तुव अभिमान दयाल।
पै तुमही ऐसी जो करिहौ कहं जैहैं ब्रजबाल॥
एक बेर ब्रज कों फिरि आओ लखि गौअन बेहाल।
'हरीचन्द' बरु फेर जाइयो मधुपुर कृष्ण कृपाल॥46॥

राखिए अपुनेन कों अभिमान।
तुव बल जो जग गिनत न काहू दीजै तेहि सनमान॥
तम्हरे होय सहैं इतनो दुख यह तो अनय महान।
तुमहि कलंक हमैं लज्जा अति कहिहै कहा जहान॥
एक बेर फिरहू ब्रज आओ देहु जीव को दान।
'हरीचन्द' गिरि कर धारन की करिकै सुरति सुजान॥47॥

ऊधो अब वे दिन नहिं ऐहैं।
जिन मैं श्याम संग निसि बासर
छिन सम बिलसि बितैहैं॥
वह हंसि दान मांगनो उनको
अब हम लखन न पैहैं।
जमुना न्हात कदम चढ़ि छिपि अब
हरि नहि चीर चुरैहैं॥
यह निसि सरद दिवस बरखा के
फिर बिधि नाहिं फिरैहैं।
वह रस रास हंसन बोलन हित
हम छिन छिन तरसैहैं॥
वह गलबाहीं दै पिय बतियां
अब नहिं सरस सुनैहैं।

'हरीचन्द' तरसत हम मरिहैं
तऊ न वे सुधि लैहैं ॥48॥

हरि बिनु बृज बसियत केहि भाएं।
जीवत अब लौं बिनु पिय प्यारे इन अंखियन दरसाएं ॥
केहि सुख लागि जियत हम अब लौं यह नहिं परत लखाई।
बिनु बृजनाथ देखि बृज सूनो प्रान रहत किमि माई ॥
वह बन बिहरन कुंज कुंज मैं सपनेहू नहि देखैं।
ऊधो जोग सुनन तुव मुख सौं प्रान रहे एहि लेखैं ॥
बिनु प्रिय प्राननाथ मन मोहन आरत हरन कन्हाई।
'हरीचन्द' निरलज जग जीवत हम भाथी की नाईं ॥49॥

सवैया

देत असीस सदा चित सों यह
साहिबी रावरी रोज बनी रहै।
रूप अनूप महा धन है
'हरीचन्द' जू वाकी न नेकु कमी रहै।
देखहु नेकु दया उर कै
खरी द्वार अरी यह जाचक भीर है।
दीजियै भीख उघारि कै घूंघट
प्यारी तिहारी गली को फकीर है ॥50॥

अब तौ जग मैं खुलि कै चहुंधा
पन प्रेम को पूरो पसारि चुकी।
कुल रीति औ लोक की लाज सबै
'हरिचन्द' जू नीके बिगारि चुकी।
वहि सांवरि मूरति देखत ही
अपुने सरबस्वहि हारि चुकी।

रि चुकी ॥51॥

1883 ई. में प्रकाशित]

□□□

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

जन्म : सितम्बर 1850 ई., बनारस के एक समृद्ध वैश्य परिवार में।

शिक्षा : घर और क्वींस कालेज बनारस में स्कूली शिक्षा का सिलसिला अचानक टूट गया लेकिन पढ़ने-लिखने का सिलसिला जारी रहा। शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' जैसे मशहूर व्यक्ति से उन्होंने अंगरेजी पढ़ी।

अल्पायु में पिता की मृत्यु और विवाह से पारिवारिक जिम्मेदारियों में इजाफा पर उनके निर्वहन में पूरी तरह असफल।

अद्‌भुत साहित्यिक प्रतिभा के धनी, नाटक, काव्य, निबन्ध, कहानी, यात्रावृत्तान्त, अनुवाद आदि अनेक विधाओं में विविध विषयों पर प्रचुर साहित्य का लेखन।

कविवचन सुधा, बालाबोधिनी, हरिश्चन्द्र मैगजीन, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका आदि पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ और विकास। धर्म और ईश-भक्ति के प्रचारार्थ अनेक तरह के प्रयास।

निधन : 6 जनवरी, सन 1885 ई.

ओमप्रकाश सिंह

जन्म : सन 1958 ई., उ.प्र. में जौनपुर जिले के एक गांव टड़वां में।

शिक्षा : आरम्भिक शिक्षा गांव और आसपास के विद्यालयों में। उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में। अक्टू. 1988 से नवम्बर 1990 तक एनसीईआरटी में कार्य। दिसम्बर 1990 ई. से ज.ने.विए, नयी दिल्ली के भारतीय भाषा केन्द्र में अध्यापन और शोध।

रचनाएं : + आदिकाल एवं मध्यकाल के प्रमुख हिन्दी कवि + प्रेमचन्द के कथा साहित्य में हिन्दू-मुसलिम सम्बन्ध + प्रेमचन्दोत्तर कथा साहित्य और साम्प्रदायिक समस्याएं + आधुनिक काव्यधारा : विचार और दृष्टि + चिन्तामणि भाग-4 (सम्पादन)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ग्रन्थावली (आठ भागों में सम्पादन)

प्रसं

प्रकाशन संस्थान

4715/21 दयानंद मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

फोन: 23253234, 65283371, फैक्स: 23287713